

GL H 320 54
HAM



121825
LBSNAA

११ राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी

Academy of Administration

मसूरी

MUSSOORIE

पुस्तकालय

LIBRARY

१२

— 121825

अवाप्ति संख्या

Accession No.

~~J.D. 1246~~

वर्ग संख्या

Class No

GLH

320.54

पुस्तक संख्या

Book No

HAM

हमारे

हमारे लाल दिन

(देश को प्यार करने के अपराध में फाँसी पर झूलने वाले
प्राण प्यारों का गौरवमय अतीत इतिहास)

सम्पादक
आचार्य चतुरसेन

प्रकाशक
गौतम बुक डिपो, दिल्ली

प्रथम बार }

नवम्बर
१९४६

{ मूल्य ४)

प्रकाशक :
गौतम बुक डिपो
नई सड़क, दिल्ली

(सर्वाधिकार सम्पादक के आधीन)

मुद्रक :
अमरचन्द्र
राजहंस प्रेस, दिल्ली

खूँ के हरफों से लिखा जायगा तेरा वाक्या !
मुझको भूलेगी न यह पुरगम कहानी हाय हाय !!

“भारत माता के चरणों में शीश बलि देना साहस की चरम परीक्षा है। माता को अंग्रेजों के पाश से छुड़ाने में जो रक्त उसके पुत्रों ने बहाया, और अपनी शुभ्र प्रभात वेला को लाल रंग में रंग कर उसे तुरन्त ही सांध्य वेला बनाकर चिरनिद्रा में सो गये, उन वीर युवकों के लाल दिनों को हम सदैव स्मरण रखें और देश पर जूझ मरने की साध लेकर जन्म लें !”

—प्रकाशक

विषय कॄम

१. दो शब्द	१
२. दिल्ली के लाल दिन	१५
३. महाराज नन्दकुमार को फाँसी	२६
४. सन् ५७ के संस्मरण	४८
५. कूका बलिदान	५८
६. खुदीराम बोस	६२
७. कन्हार्लाल दत्त	६७
८. करतारसिंह	७२
९. सूफी अम्बाप्रसाद	८६
१०. इंगलैंड की सभा में	९२
११. दिल्ली के हुतात्मा	९५
१२. काकोरी केस	१०४
१३. विप्लवयज्ञ की आहुतियां	११३
१४. सरदार भगतसिंह	२३३
१५. हुतात्माओं की सूची	२७६

दो शब्द

इस पुस्तक में मेरे द्वारा सम्पादित चाँद के प्रसिद्ध फाँसी अंक का दुर्लभ मसाला है। उन दिनों किन २ कठिनाइयों से यह सब मसाला संग्रह किया गया था, तथा हमारी अलम्य भेंटें किन २ विपदाओं और बाधाओं को चुप-चाप सहन किया गया था आज उन सब बातों को कहना व्यर्थ है। चाँद का फाँसी अंक, यद्यपि प्रकाशित होने के २४ घण्टे बाद ही जन्त कर लिया गया था, फिर भी वह देश के इस छोर से उस छोर तक लोगों के हृदयों में आग लगाता हुआ घूम गया। इस घटना को आज २२ वर्ष हो चुके। उसका रस पीकर मतवाले होने वाले आज बूढ़े हो गये और तब के जन्ने शिशु आज स्वतन्त्र भारत के युवक हो गये हैं उन्हीं के लिये ये भारत के लाल दिनों के संस्मरण इस पुस्तक में फिर से सम्पादित कर के आप की सेवा में पेश किए गये हैं। इस सारे मसाले को घर २ घूम २ कर संग्रह करने वालों में अनेक फाँसी पर चढ़ चुके; अनेकों को कालवली ने ग्रस लिया। परन्तु उन दिनों का दर्शक मैं आज के दिन देखने को अभी भी जीवित हूँ। इन २२ वर्षों में न जाने कितने पत्र “फाँसी अंक कहाँ मिल सकता है!” यह पूछने को आते रहे। कितने मित्रों ने उसे एक बार देखना चाहा। परन्तु जो वस्तु प्रकाशित होने के सिर्फ २ सप्ताह बाद पचास रु० में भी दुर्लभ हो गई थी उसका दरो। कोई पाता तो कैसे? अब आज उसी वस्तु को आप पाकर अवश्य खुश होंगे।

यहाँ भारतीय राजनीतिक क्रान्ति का सिंहावलोकन कदाचित् अप्रासङ्गिक का न होगा। गत २५ वर्षों में भारत ने स्वातन्त्र लाभ के लिये जो भागीरथ प्रयत्न क्रान्ति का सिंहावलोकन किया उसके कारणों के विषय में मतभेद हो सकता है, परन्तु भारत के किसी राजनैतिक दल को श्रेय से वंचित नहीं किया जा सकता। आतंकवादी दल भी एक ऐसा दल था। बहुत लोग उसे विफल प्रयास कहते हैं परन्तु वह कहाँ तक सफल या विफल था, यह अब एक ऐतिहासिक तथ्य हो गया है।

भारतीय आतंकवाद की आयु ४० वर्ष की रही। लगातार ४० वर्ष तक की लम्बी आयु विश्वभर के किसी भी देश के आतंकवाद ने नहीं पाई। संसार के सबसे भारतीय आतंक-भयंकर आतंकवाद रूस के बोलशेविज्म ने वाद भी नहीं। भारतीय आतंकवाद के इतिहास की विशेषता यह थी कि जहाँ विश्व के देशों के आतंकवाद विजयी माने गये—वहाँ भारतीय आतंकवाद के विरुद्ध महात्मा गांधी ने अहिंसा आन्दोलन का सफल प्रयोग किया, और प्रकट में उसे उस प्रबल अहिंसा आन्दोलन के सामने नतमस्तक होना पड़ा। परन्तु उसका जो प्रभाव देश के जन जन की रक्तबिन्दुओं पर पड़ा, वह अमर था। यद्यपि आतंकवाद का जन्म सन् १८५७ के विद्रोह से हुआ परन्तु तब से १८६७ तक—जब कि कूका विद्रोह हुआ कोई घटना नहीं घटी। अतः हम आतंकवाद की आयु सन् १८६७ से १९३७ तक ही रखते हैं, जब कि महात्मा गांधी के उद्योग से सरकार और आतंकवादी नेताओं ने उनके आदर्शों को स्वीकार किया।

परन्तु यद्यपि सरकार ने आतंकवाद को निर्दयतापूर्वक दमन किया—फिर भी मैं यह कहूंगा कि वह आतंकवाद को

दमन न कर सकी। आतंकवाद की समाप्ति का एक कारण तो यह था कि उसका कोई विधान और ध्रुव ध्येय न था—दूसरे उस पर गांधी जी एवं रूसी साम्यवाद प्रभावशाली हो गये। और जब सन् ३१-३२-३३ में उनके कार्य और फल देखे तो वे उसके अनुगत हो गये।

इस विद्रोह के नेता नाना साहेब ताँतिया टोपी तथा कुछ अन्य फौजी अफसर थे। उनके साथ साहसी बुद्धिमान एवं वीर पुरुष तो थे; परन्तु संगठन न था। उनके ५७ का विद्रोह उद्देश्य भी ऐसे न थे जो ऐसी क्रांतियों के होने चाहियें। १० मई सन् ५७ को विद्रोह का प्रारम्भ हुआ, परन्तु वह जैसी आशा थी वैसा व्यापक न हो पाया। वह केवल दिल्ली, मेरठ, लखनऊ और कानपुर तक ही सीमित रहा। उसमें संगठन; व्यवस्था और एकता की कमी रह गई। और वह केवल ५ मास चल कर विफल हो गया उसे विफल करने का कलंक सिख सेना पर है।

इस विद्रोह के नेता गुरु रामसिंह थे। यह घटना सन् १८७२ में घटी। और इसका प्रभाव पंजाब पर काफी पड़ा। कहना चाहिए इस विद्रोह में आत्म-कूका विद्रोह बलि देकर पंजाब ने सन् सत्तावन के देश-द्रोह का प्रायश्चित्त किया।

सन् १८६३ में बम्बई में हिन्दु मुसलमानों का दंगा हुआ इससे महाराष्ट्र में हिन्दुत्व की चेतना जाग्रत हुई। इससे गण-पति उत्सव और शिवाजी जयन्ती उत्सवों ने महाराष्ट्र की जाग्रति राष्ट्रीय रूप धारण कर लिया। पूना के चापे कर बन्धुओं ने विशेष उत्साह प्रदर्शित किया। इसी समय लोकमान्य तिलक ने महाराष्ट्र को नवजीवन प्रदान किया। २२ जून सन् १८६७ में ठीक विक्टोरिया के राज्यारोहण

के समारोह के समय चापेकर बन्धुओं ने पूना के अंग्रेज प्लेग कमिश्नर को एक साथी सहित मार डाला। इन्होंने और भी आतंकवादी कार्य किये अन्त में इन्हें फाँसी दी गई। तिलक और उनके पत्र केसरी पर सरकार की कटु दृष्टि पड़ी। उन दिनों केसरी २० हजार छपता था।

महाराष्ट्र में यह घटना होते ही बंगाल में अरविंद घोष के भाई वारीन्द्र घोष ने आतंकवाद की स्थापना की। उन दिनों बंगाल में वर्तमान बिहार, उड़ीसा, बंगाल और अलीपुर का उद्योग आसाम के प्रान्त संयुक्त थे तथा बंगाल प्रान्त भारत के सब प्रान्तों में बड़ा था। उसके सात करोड़ अस्सी लाख अधिवासी केवल एक लैफ्टीनेन्ट गवर्नर के आधीन थे। कर्जन का जमाना था, उसने सन् १६०५ में बंगाल के दो भाग कर डाले। बंगभंग से सारा बंगाल नाग की भाँति फुफकार करने लगा। इन्हीं दिनों रूस पर जापान की विजय हुई और एशियाई लोगों का साहस बढ़ गया। वारीन्द्र ने कुछ नवयुवकों को लेकर अपना दल बनाया तथा युगान्तर-नामक पत्र निकाला। स्वामी विवेकानन्द का भाई भूपेन्द्रनाथदत्त भी उनके साथ था। इस पत्र को देखते देखते २० हजार प्रतियाँ बिकने लगीं। सरकार ने अन्ततः पत्र पर प्रहार आरम्भ किये। फलतः युगान्तर निकालने के डेढ़ साल बाद ही मानिकतल्ल-बागान की क्रान्ति संस्था की स्थापना हुई। यह सन् १६०७ की बात है। एक बार गाली देने पर इस दल के एक युवक उल्लासकर दत्त ने प्रेजीडेन्सी कालेज के अंग्रेज प्रिन्सिपल की पीठ पर जूता मारा। सरकार दमन बढ़ाती गई और यह दल बम और पिस्तौल संग्रह करता गया। इसी समय बंगाल में अनुशीलन समिति की स्थापना हुई। शीघ्र ही इस समिति की ५०० शाखाएँ सम्पूर्ण बंगाल में फैल गईं। इसका उद्देश्य गुप्त संगठन द्वारा

भारत से ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकना था। इस समय बंगाल के गवर्नर की गाड़ी उड़ाने के अनेक विफल प्रयत्न किये गये। इसी समय सूरत की कांग्रेस में तिलक का गर्म दल कांग्रेस के नर्म दल से प्रथक हो गया। वारीन्द्र ने वहाँ से लौट कर भवानीपुर में बम का नया अड्डा बनाया। चन्द्रनगर में भी उन्होंने एक गुप्त केन्द्र स्थापित किया। और चोरी २ शस्त्र मंगाने लगे। अन्त में प्रफुल्लचाकी और खुदीराम बोस दो युवकों ने मजफ्फरपुर जाकर वहाँ के कलक्टर किंग्सफोर्ड के धोखे में दो अंग्रेज स्त्रियों की गाड़ी पर बम फेंक कर मार डाला। खुदीराम को पकड़ लिया गया और उसने अपराध की स्वीकृति दी। उसे फाँसी दे दी गई। प्रफुल्लचाकी ने गिरफ्तार होते समय पिस्तौल से आत्मघात कर लिया। अन्त में इस दल के अड्डे को पुलिस ने घेर लिया। दल के ३२ व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये जिनमें अरविन्द घोष भी थे। यह मुकदमा धूम-धाम से चला। मुकदमे के दौरान में सरकारी गवाह नरेन्द्रनाथ गोस्वामी को कन्हार्लाल दत्त और सत्येन्द्र वसु ने जेल ही में मार डाला। दोनों को फाँसी हुई। १६ अन्य आदमियों को सजा हुई जिस में वारीन्द्र और उल्लासकर को फाँसी। कुछ को आजन्म काला पानी, कुछ को १०।१० वर्ष की काले पानी की सजा दी गई। अरविन्द और कुछ अन्य लोग छूट गये। अपील में फाँसी रद्द हो गई। अन्यो की सजायें भी कम हो गईं। काले पानी में इन्हें भारी यातना दी गई, जिससे उल्लासकर पागल हो गये। अन्त में सन् १६१६ में इन में से २६ व्यक्ति शाही माफी देकर छोड़ दिए गये।

सावरकर के उद्योग के साथ ही आतंक का दूसरा अध्याय प्रारम्भ होता है। इस समय विनायक सावरकर इंग्लैण्ड और महाराष्ट्र में आतंक के सबसे प्रमुख नेता थे। इन्होंने सब

से प्रथम सन् १९०५ में विदेशी वस्त्रों की होली सावरकर के उद्योग की। चापेकर बन्धुओं का उन पर प्रभाव था।

श्यामजीकृष्ण वर्मा, की स्थापित लंडन स्थित होम रूल सोसाइटी के वे सदस्य बन गये। लाला हरदयाल भी तब इंग्लैण्ड ही में थे। भाई परमानन्द भी वहीं पहुँच गये थे।

सावरकर इसी समय तिलक और परांजपे की शिफारिशी चिट्ठी लेकर इस दल में आ मिले। उस समय उनकी आयु २२ वर्ष की थी यह सन् १९०६ की बात है। ये वे दिन थे जब बंगाल में स्वदेशी आन्दोलन जोर पकड़ रहा था। इसका प्रभाव लंडन के इन नेताओं पर भी बहुत पड़ा। इसी समय पंजाब में लाजपतराय और स० अजीतसिंह उत्तेजना उत्पन्न कर रहे थे। इस समय सत्तावन के विद्रोह को पूरे ५० वर्ष हो रहे थे। गर्मा-गर्म खबर थी कि लाला लाजपतराय १ लाख आर्य समाजियों की सेना संगठित कर गदर की वर्षा मनाने वाले हैं। इन सब कारणों से लाला जी को तथा सरदार अजीत को माण्डले दुर्ग में बन्द कर दिया, इस घटना से इंग्लैण्ड के नेता बौखला गये और उनकी क्रिया शक्ति ऐसी हो गई कि पार्लिमेंट की कॉमन्स सभा में श्यामजीकृष्ण वर्मा के विरुद्ध कदम उठाने की आवाज उठाई गई। फलतः श्यामजीकृष्ण वर्मा वहाँ से हट कर पैरिस आगये। मई १९०८ को सावरकर ने लंडन के इन्डिया हाउस में सत्तावन के विद्रोह का पचास वर्षीय उत्सव मनाया। अब वे खुल्लम खुल्ला विल्पववाद का प्रचार कर रहे थे—वे वहाँ भारत के सम्मानित नेता माने जाते थे। कन्हैयालाल और सत्येन्द्र की फाँसी के समाचार वहाँ पहुँच चुके थे। इस से सब लोग बहुत उत्तेजित हो गये थे। इसी समय मदन लाल धींगड़ा ने सर कर्जन वायली को गोली मार दी। उसे फाँसी

मिली। इधर भारत में सावरकर के भाई गणेश सावरकर को। साधारण अपराध लगा कर आजन्म काला पानी की सजा दे दी गई। जिस अंग्रेज मजिस्ट्रेट ने यह सजा सुनाई थी, उसे एक महाराष्ट्र युवक कान्हेरे ने गोली से उड़ा दिया। अब लंडन की पुलिस सावरकर और भारतीय युवकों के पीछे पड़ गई। सावरकर ने लंडन की पुलिस में अपने आदमी रख दिये थे। और वे उनकी आज्ञानुवर्ती हो कार्य करते थे। अब उन्होंने एक 'तलवार' नामक पत्र निकाला और खुलकर गुप्त संगठनों और राजनैतिक हत्याओं का समर्थन प्रारम्भ किया। अन्त में सावरकर पेरिस में आकर लाला हरदयाल के साथ कार्य करने लगे। अन्ततः सन् १९१० में जब वे लंडन लौट रहे थे, भारतीय शस्त्र पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। उन्हें ब्रिस्टल जेल में रखा गया। बाद में जब पुलिस उन्हें जहाज पर सवार करके भारत ले जा रही थी, सावरकर फ्रान्स के मारसील बन्दरगाह के लगभग आधा मील इधर पौकर्टन के समय पाखाने के पोर्टहोल खोल उससे समुद्र में कूद पड़े। जहाज पर हलचल मच गई। सिपाहियों ने गोलियाँ छोड़ीं। पर वे गोता लगा कर साफ बच निकले। जब वे किनारे पर पहुँचे। वहाँ ऊँची दीवार थी। पर वे असीम साहस कर उस पर चढ़ कर फ्रान्स की सीमा में पहुँच गये। और तीर की भाँति भागे। पीछे अंग्रेज पुलिस चोर चोर कह कर दौड़ी आ रही थी। सामने ट्राम जा रही थी। पर उनके पास ट्राम के टिकट खरीदने को ६ पैसा नहीं थे। अन्ततः वे पकड़े गये और भारत लाकर नासिक जेल में रखे गये। इस पर एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न उपस्थित हो गया कि क्या अंग्रेज फ्रान्स भूमि से अपने राजनैतिक अधिकारी को पकड़ सकते हैं ? मामला हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय तक गया। अन्त में सावरकर काले

पानी भेज दिये गये । जहाँ तेरह वर्ष वे बन्द रहे ।

इसी समय नासिक षड्यन्त्र का पता चला और कुछ व्यक्तियों को सजायें दी गई । ग्वालियर षड्यन्त्र के अपराधी नासिक षड्यन्त्र भी दण्डित किये गये । इसी समय अहमदा- और ग्वालियर बाद में वाइसराय की पत्नी के ऊपर बम फेंका षड्यन्त्र गया और सतारा में एक आतंकवादी संस्था का पता लगाया गया ।

सन् १९०८ तक सम्पूर्ण बंगाल में विप्लव समितियों का जाल बिछ गया था । पुलिन बिहारीदास इस विप्लव पथ के कर्त्ताधर्त्ता थे । कुछ सम्मितियाँ ऐसी ही बंगाल की स्वतन्त्र भी थीं । इन समितियों में प्रवेश करने विप्लव समितियाँ पर कठिन व्रत की शपथ लेनी पड़ती थी । इन विप्लववादी समितियों ने डाके द्वारा धन संग्रह का प्रबन्ध किया । अनेक डाके डाले गये । और कई व्यक्तियों की हत्या की गई । बम फटने, पटड़ी उड़ाने, गोली दागने की घटनाएँ नित्य कहीं न कहीं से सुनाई पड़ने लगीं । कुछ आतंकवादी पुलिस के वेश में तलाशी के बहाने घरों में घुसकर मालमता लूट ले गये । इन सब कारणों से इन आतंक-वादियों का आतंक इंग्लैण्ड तक में छा गया ।

सरकार ने घबराकर थोड़े सुधार देकर भारत को संतुष्ट करने का विचार किया और फरवरी १९०९ में इण्डियन कौन्सिल ऐक्ट पास किया गया, जिन्हें मिस्टो मिस्टो मालें सुधार मालें सुधार कहा जाता है । इसके परिणाम स्वरूप मनोनीत सदस्य के स्थान पर चुने हुए सदस्यों की बढ़ी हुई संख्या-व्यवस्था सभाओं में हो गई ।

परन्तु आतंकवादी दल टस से मस न हुआ—इंग्लैण्ड और भारत में ऐसी अनेक साहसपूर्ण हत्याएँ हुईं । इस पर सरकार

ने दमन चक्र चलाने को किर्मिनल ला ऐमेण्डमैण्ट ऐक्ट पास किया। इसके फलस्वरूप दमन जोरों से चला। परन्तु इस बीच में और भी हत्याएँ तथा डकैतियाँ हुईं। और वे अधिक साहसपूर्ण थीं। सन् १० में हावड़ा षड्यन्त्र का उद्घाटन हुआ। तथा पूर्वी बंगाल की आतंकवादी संस्थाओं की कड़ी खोजबीन की गई।

अब सरकार आतंकवादियों तथा उनके साथ बढ़ती हुई सहानुभूति से घबरा उठी और उसने प्रेस ऐक्ट बनाया जिस से छापेखानों पर दमन का चक्र चलाया सन् १९१० का गया। अनेक प्रेस जन्त हुए, सन् १९११ में प्रेस ऐक्ट पूर्वी बंगाल ही अधिक विप्लव का केन्द्र रहा। वर्ष की कुल १८ घटनाओं में से १६ अकेले यहाँ हुईं। ता० ६ मई १९१० को एडवर्ड मर गये। और जार्ज पंचम राजा हुए, उन्होंने ११ दिसम्बर को दिल्ली में भारी दर्बार किया और उसमें बंगाल को फिर एक करने की घोषणा कर दी। परन्तु लोग अब स्वाधीन होने को उतावले हो गये थे। अतः इससे भी आतंकवाद कम न हुआ, और वेग से चला। सम्पूर्ण बंगाल में धड़ाधड़ डाके पड़ने और हत्याएँ होने लगीं। तथा पुलिस कुछ भी पता न निकाल सकी! अन्ततः बारीसाल षड्यन्त्र का उद्घाटन हुआ। कुछ व्यक्तियों को सजाएँ दी गईं। और भी समितियों पर केस चले। परन्तु डाके और हत्याएँ रुकी नहीं। अब बंगाली सरकारी अफसरों की भी निर्मम हत्याएँ होनी प्रारम्भ हुईं। उन्हीं दिनों दिल्ली में लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका गया। हत्याओं और डकैतियों का सिल-सिला सन् १९१५ तक उसी प्रकार जारी रहा, इसी समय राजा बाजार बम केस हुआ।

सन् १५ में भारत में भारत व्यापी विद्रोह की तैयारियाँ होने लगीं। सरकार भी बे खबर न थी। उसने भारत रक्षा कानून बना कर संदिग्ध व्यक्तियों की धर गदर की तैयारियाँ पकड़ प्रारम्भ कर दी। बरमा, बनारस और मध्य प्रदेश के षड्यन्त्र पकड़े गये। परन्तु आतंकवादी अधिक संगठित हो गये थे। अब वे बड़ी-बड़ी साहसिक हत्याएँ कर तथा डाके डाल रहे थे। उधर सरकार भी इन्हें कुचल डालने में उचित अनुचित कुछ भी न देख रही थी। इस प्रकार सन् १४, १५, १६ में बंगाल में अधिकाधिक आतंकवाद रहा तथा अधिकाधिक दमन। अपनी जान में सरकार ने आन्दोलन को कुचल ही दिया। अतः सन् १६-१७ में आतंकवादी कार्य धीमे हुए पर होते तो रहे ही। इन दिनों सरकार तनिक संदेह होने ही पर बड़े से बड़े आदमी को जेल में ठूँस देती थी। उन दिनों जेल साक्षात् रौरव नर्क बने थे। इन अत्याचारों से अनेक बन्दी पागल हो गये। अनेक मर गये अनेकों को क्षय आदि रोगों ने ग्रस लिया। स्त्रियाँ भी विप्लव पंथियों में गिरफ्तार की गईं। इससे देश में हलचल मच गई। अब इन्होंने भारी संख्या में शस्त्रास्त्र जुटा लिये थे। ये शस्त्र प्रायः चन्द्रनगर के रास्ते आते थे।

इस पार्टी में मास्टर अमीरचन्द, लाला हनुमंतराय, और लाला हरिदयाल थे। मास्टर अवधबिहारी, और मा० गणेश लाल भी उनके साथी थे। भाई परमानन्द के देहली की भाई बालमुकुन्द और महात्मा हंसराज के पुत्र विप्लव पार्टी बलराज भी इसी संगठन में थे।

सन् ११ में रासबिहारी बोस को ढाका अनुशीलन समिति की ओर से यह कार्य दिया गया कि वह सम्पूर्ण उत्तर भारत

में क्रान्तिकारी दलों का संगठन करे, ये विप्लव पंथियों रासूदादा या रासूदा नाम से प्रसिद्ध थे। इन दिनों दिल्ली नई राजधानी घोषित हुई थी। तथा नई दिल्ली का शिलान्यास हो गया था। इसी उपलक्ष्य में वाइसराय लार्ड हार्डिंग ने समारोह से दिल्ली के चांदनी चौक में जुलूस निकाला। तभी रासूदादा ने उन पर बम प्रहार किया जो लक्ष्य च्युत हो गया। वाइसराय कुछ जख्मी हो गए। इसके बाद दिल्ली, लाहौर, अमृतसर, मेरठ में बम विस्फोट की घटनाएँ होती ही रहीं। अन्त में मास्टर अमीरचन्द आदि गिरफ्तार हो गये। एक लड़का दीनानाथ सरकार का गवाह हो गया। उससे पता पाकर कई केन्द्रों की तलाशी हुई। परन्तु रास बिहारी नहीं पकड़े गये। मार्च सन् १९१४ में १३ अभियुक्तों पर केस चला और ५ अक्टूबर को तीन को फाँसी तथा कुछ को काला पानी दिया। शेष छोड़ दिये। मरने वालों ने कूद-कूद कर अपने हाथों से गले में फाँसी का रस्सा डाला और हँसते-हँसते जान दे दी।

रास बिहारी इस समय तक काशी में छुपे रहे। और विप्लव केन्द्रों की स्थापना भी करते रहे। इन दिनों बिहार में एक विसव अड्डा बना और राजपूताना में अर्जुन लाल सेठी ने विसव-पथ अपनाया, परन्तु उन्हें जल्द नजरबन्द कर दिया गया।

इस समय कैनेडा से सैकड़ों सिख वापस कर दिये गये। वे हांक कांग में एकत्र हो गये, बाबा गुरुदत्तसिंह उनके अगुआ थे। वे एक जापानी जहाज गामागातामारू गामा गाता मारू पर सब सिखों को कैनेडा ले गये। परन्तु उन्हें दुर्घटना वहाँ नहीं उतरने दिया गया, उसे पुलिस के द्वारा खदेड़ देने का प्रबन्ध हुआ पर पुलिस को सिखों ने मार भगाया। अन्ततः वहाँ की सरकार ने जंगी

जहाज भेजा और गोलाबारी की धमकी दी और जहाज को भारत आना पड़ा इसी समय योरोपीय युद्ध छिड़ गया। यात्रियों को मार्ग में हांगकांग, सिंगापुर कहीं नहीं उतरने दिया गया। २० सितम्बर १९१४ को वह हुगली नदी बजबज बन्दर पर पहुँचा। उन्हें पंजाब ले जाने को सरकार ने एक स्पेशल गाड़ी पहिले ही तैयार कर रखी थी। पर सिक्खों ने स्पेशल से जाने से इन्कार कर दिया और वे पंक्ति बनाकर कलकत्ते में घुस गये। इस पर उनपर गोली चलाई गई, सिक्खों के पास भी हथियार थे, दोनों तरफ से गोलियाँ चलीं। काफी आदमी मरे। जो बचे गिफ्तार हो गये। बाबा गुरु दत्तसिंह फरार हो गए, जो बहुत दिन बाद प्रकट हुए। इस घटना का अमरीका पर भी बुरा प्रभाव पड़ा। और कनाडा में भी सिक्खों ने मारकाट मचा दी। इसके बाद प्रवासी भारतीयों में काफी जोश फैला। उन्होंने भारत में सामूहिक रूप से लौट कर क्रांति का बीज बोया। जो पंजाब भर में फैल गया। इनका कई बार पुलिस से मुकाबिला हुआ। और कई हत्याएँ की गईं। अनेक को फाँसी हुई, जिन में काशीराम और करतारसिंह भाई परमानन्द पृथ्वीसिंह प्रमुखा थे। शचीन्द्र सान्याल बनारस षड्यन्त्र के प्रमुख थे। सन् १९१५ में रासू दादा जापान चले गये। सूफ़ी अम्बाप्रसाद ईरान जा बसे।

इस समय तक सुदूर पूर्वीय द्वीपों में गदर पार्टी के कार्य हो रहे थे। और अंग्रेजों के खिलाफ विस्फोट हो जाते थे। इस काल में बर्मा और सिंगापुर का विद्रोह उल्लेखनीय था। इस समय का सब से प्रभावशाली अंत नलिनी बाकची का था।

इतने दिन बाद सरकार में जागरूकता के लक्षण दीख

पड़े । उधर देश की राजनीति भी उग्र हो चली थी ।

सन् १६ में लखनऊ में हिन्दु मुस्लिम एकता सरकार का सूत्र दूँड लिया गया । सन् १७ में होमरूल की जागरूकता आन्दोलन चला । गांधी जी उसी समय भारत में आए । और अगस्त सन् १७ में मांटेगु ने भारत को उत्तरायी शासन देने की घोषणा की । परन्तु आतंकवाद के लिए रोलेट ऐक्ट तैयार किया गया । जून सन् १८ में मांटेगुचेम्सफोर्ड रिपोर्ट प्रकाशित हुई और नवम्बर में प्रथम महायुद्ध समाप्त हुआ । दिसम्बर में दिल्ली का प्रसिद्ध कांग्रेस अधिवेशन हुआ जिस में सुधारों को अस्वीकार कर दिया गया और रोलेट ऐक्ट के विरोध में ६ अप्रैल को देश व्यापी हड़ताल हुई । इसमें देहली में गोली चली, और प्रसिद्ध जलियानवाला का हत्याकाण्ड हुआ । सन् १९ में अमृतसर में कांग्रेस अधिवेशन हुआ । इसी समय सब राजबन्दी छोड़ दिये गये । जिन में अली बंधु प्रमुख थे । सन् २० में कलकत्ता अधिवेशन में असहयोग प्रस्ताव पास हुआ और सन् २१ में असहयोग सक्रिय-रूप से देश में फैल गया । सन् २१ में कुछ डाकों को छोड़कर कोई विशेष कार्य नहीं हुआ । महात्मा गांधी के नेतृत्व में सारा देश अमली लड़ाई में जुट गया । सन् २२ में मोतीलाल नेहरू ने स्वायत्तपार्टी को जन्म दिया । सन् २३ राजनैतिक निराशा का वर्ष था ।

इसके बाद एक बार आतंकवाद का फिर वेग बढ़ा, पर टिका नहीं । कुछ हत्याएँ डाके आदि की घटनाएँ होती रहीं । इसी समय रूस के साम्यवाद ने उग्रपन्थी जनों को अपनी ओर आकृष्ट किया । मुख्य घटना काकोरी रेल की लूट थी ।

इस पुस्तक में लिखित बहुत सा मैटर सरदार भगतसिंह

(१४)

का दिया हुआ है, जो बाद में एसेम्बली में एक धड़ाका करके
गिरफ्तार हुए तथा फाँसी पर चढ़े। यों तो सन्
सरदार ३५ तक आतंकवाद चलता रहा पर उसका
भगतसिंह तेज भगतसिंह और चन्द्रशेखर आजाद के
साथ ही अस्तंगत हो गया।

ज्ञानधाम }
१२-६-४६ }

—चतुरसेन

दिल्ली के लाल दिन

बादशाह के बेटों का कत्ल

मुन्शी जकाउल्ला साहब का बयान है कि बादशाह की गिरफ्तारी के दूसरे दिन मुन्शी रजबअली और मिर्जा इलाही-बक्स ने खबर दी कि मिरजा मुगल और मिरजा खिज़र सुल्तान और मिरजा अबूबकर, बादशाह के दो बेटे और एक पोते भी मकबरे हुमायूँ में मौजूद हैं। और ये वहाँ हैं जिन्होंने क़िले में अंग्रेज़ औरतों और बच्चों के क़त्ल में हिस्सा लिया था।

मेजर हडसन का खून इस खबर से जोश में आ गया और वह जनरल विलसन से इज़ाज़त लेकर शाहजादों के क़त्ल के लिये रवाना हुआ। मेकडानल्ड साहब भी हडसन के साथ थे। आज हडसन ने पचास सवारों की जगह सौ सवार साथ लिये थे और मुन्शी रजबअली और मिरजा इलाही बख़्श दोनों जासूस भी साथ थे।

तीनों शाहजादे मिरजा मुगल और मिरजा खिज़र सुल्तान और मिरजा अबूबकर मक़बरे के अन्दर थे। हडसन बाहर खड़ा हो गया, और शाहजादों के पास इत्तला भेजी कि मैं आपको गिरफ्तार करने आया हूँ। मगर चूँकि शाहजादों के साथ बहुत से जंगजू आदमी भी थे, इसलिये वह जमैयत भी ज्यादा लाया था और अन्दर जाने की ज़ुर्रत भी न कर सकता था।

शाहजादों ने अपने बाप की तरह दो घण्टे तक यही हुज्जत की कि अगर हमारी जानों की ज़िम्मेदारी की जाय तो

हम आत्म समर्पण कर सकते हैं, वरना नहीं। मेजर हडसन ने जबाब दिया—मैं आपकी जानों का जवाबदार नहीं हो सकता, क्योंकि मैं जनरल विलसन के मातहत हूँ, और मुझे इन मामलात के अख्तियारात नहीं। बहादुरशाह से तो मैंने इस वजह से इकरार कर लिया था कि जनरल विलसन ने मुझको इसके लिए इजाजत दे दी थी। शाहजादों को बिना किसी शर्त के मेरे पास आ जाना चाहिये। इसके बाद देखा जायगा। जनरल विलसन के हाथ सब कुछ अख्तियार हैं।

शाहजादों ने यह जवाब सुनकर अपने रफीकों से सलाह ली और उन सबने कहा कि तैमूरी खानदान के लोग इस तरह मजबूर होकर कैद नहीं हुआ करते, तलवार उठाते हैं और लड़ते हैं। फिर किस्मत या नसीब का मामला होता है। दारा शिकोह को जब औरंगजेब ने क़त्ल करना चाहा और क़ातिल कैदखाने में आए तो दारा तरकारी बनाने की छुरी लेकर खड़ा हो गया और कुछ देर अपने क़ातिलों का मुकाबला करता रहा। हमको भी दिलेराना काम करना चाहिये। हडसन और उसके सौ सवारों को हम थोड़ी देर में शिकस्त दे सकते हैं। अब्बल मरना आखिर मरना, मरना तो हर हालत में ही है। फिर बहादुरी की मौत क्यों न मरें ?

शाहजादों ने भी इस तज्जवीज़ को पसंद किया, मगर मिरजा इलाहीबख्स ने फिर नसीहत का दफ़्तर खोल दिया और ऐसे उतार चढ़ाव शाहजादों को दिये कि वे बेचारे लड़ने के खयाल से दस्तबदार होगये और मिरजा इलाहीबख्स के हमदर्दानी मशविरे के मुआफ़िक़ तनवे तक़दीर बिना किसी शर्त के हडसन के पास चला जाना कुबूल कर लिया। और अपने रफीकों को मक़बरे के अंदर रुखसत करके हडसन के पास चले आये। जिस वक्त शाहजादे



बेगम जीनतमहल



श्री वतनसिंह



बादशाह मुहम्मद शाह

हडसन के सामने आये, उसने इनको खुंखार नजरों से देखा, मगर खामोश खड़ा रहा, और रथों में सवार हो जाने का हुक्म दिया। शाहजादे सवार हो गये तो हडसन इनको मोहानसरे में लेकर दिल्ली की तरफ रवाना हुआ। और जब दिल्ली एक मील रह गई तो रथों को ठहराया और शाहजादों को हुक्म दिया कि रथों से बाहर आजावें और अपने कपड़े उतार डालें। शाहजादों ने यह सुन कर आपस में एक दूसरे को देखा। उनको यह उम्मीद हरगिज न थी कि उनको इसी जगह कत्ल किया जायगा। क्योंकि मिरजा इलाहीबख्श ने इन से कहा था कि जनरल विलसन के अखितयार में यह फैसला है, और जनरल से जिस वक्त सिफारिश की जायगी तो वह बादशाह की तरह तुमको भी जान की अमान दे देगा। हडसन साहेब को न अमान देने का अखितयार है, न कत्ल करने का, मगर जिस वक्त हडसन ने इनको रथों से बाहर आने और कपड़े उतारने का हुक्म दिया तो वे इसकी वजह को बिल्कुल नहीं समझे और एक दूसरे को हैरत और ताज्जुब से देखने लगे। आखिर वे रथों से उतरे और ऊपर के लिबासे शहजादगी को जिस्म से जुदा कर दिया और हडसन को देखने लगे कि अब क्या कहना चाहता है। उनको खयाल था कि शायद यहाँ से वह हमको कैद करके पैदल ले जाना चाहता है। यह बात तो उनके ख्वाबोख्याल में भी न थी कि हम इसी जगह कत्ल किये जायेंगे। हडसन ने जब इनको लिबास-शहजादगी उतारे हुए खड़े देखा तो वह गुस्से से दीवाना हो गया और उसने एक सवार से भरी हुई कड़ावीन मांगी और उसको हाथ में लेकर तड़ातड़ तीन फायर किये। गोलियाँ शाहजादों के सीनों में लगीं—और वे हाय ! धोखा ! कह कर धूल में लोटने लगे और कुछ देर बाद ठण्डे हो गये। हडसन

इनके तड़पने और खाकोखून में लोटने को खुशी के चेहरे से खड़ा देखता रहा और जब ये मर गये तो उनकी लाशों को लेकर कोतवाली पर आया और लाशों को सरे-बाज़ार फाँसी पर एक रात दिन लटकाये रखा ।

हडसन का शाहजादों का खून पीना

एक रवायत तो शाहजादों के क़त्ल की यह थी, जिसको मुन्शी ज़काउल्ला ने अपनी तवारीख में लिखा है और दूसरी रवायत और है जो देहली में आम तौर से मशहूर थी। और मिरजा इलाहीबख्श के एक मुसाहिबे-खास ने, जो मौके पर ख़ूद मौजूद था, मेरे वालिद से इसको बयान किया था, और वालिद ने इस किस्से को मेरे सामने कहा और सिर्फ़ एक ही रवायत नहीं, मैंने सदहा आदमियों की ज़बानी एक ही शान से यह वाक़या सुना है, और किसी बयान में इख़तलाफ़ नहीं पाया जाता। इस वास्ते मैं इस रवायत को भी दर्ज़ करता हूँ।

मिरजा मुग़ल और मिरजा खिज़र सुलतान और मिरजा अबूबकर भी बहादुर शाह के साथ गिरफ्तार हुए थे और जब कैदी मौजूदा जेलखाने के करीब पहुँचे तो हडसन साहब ने बादशाह और जोनत महल और जमाबख्त की पालकियों को एक तरफ़ ठहरा दिया, और मिरजा मुग़ल और मिरजा खिज़र सुलतान, मिरजा अबूबकर और मिरजा अब्दुल्ला चार शाह-जादों को रथों से उतारा और अपने हाथ से उन्हें क़त्ल कर के एक चुल्लू खून का पिया और कहा कि अगर मैं इनका खून न पीता तो मेरा दिमाग़ खराब हो जाता, क्योंकि इन लोगों ने मेरी कौम की बेकस औरतों और बच्चों के क़त्ल में हिस्सा लिया था और इनके देखने से मेरा खून जोश खाता था। शाह-जादों के क़त्ल के बाद इनके सर काटे गये और सरों को बाद-

शाह के सामने लाया गया। और हडसन ने कहा कि यह आप की नजर है, जो बन्द हो गई थी और जिसको जारी कराने के लिये आपने गदर में शिकायत की थी। बहादुरशाह ने जो इन बेटों और जवान पोतों के कटे हुए सर देखे तो हैरत अंग्रेज इस्तकबाल से उनको देख कर मुँह फेर लिया और कहा—

“अलहम्दुलिल्लाह” तैमूर की औलाद ऐसी ही सुखरू हो कर बाप के सामने आया करती थी। इसके बाद शाहजादों की लाशें कोतवाली के सामने लटकाई गई और सर जेलखाने के सामने खूनी दरवाजे पर लटका दिये गये, जिनको हजारों आदमियों ने देखा। यह वही दरवाजा है जिस पर दारा का सर भी लटकाया गया था, और अब्दुल रहीम खां खानखाना के लड़कों के सर भी लटकाये गये थे। और इसी वजह से अब तक इसको खूनी दरवाजा कहते हैं।

इस दरवाजे की दीवार खारा के पथरों की है, और खारा में लोहे का असर होता है, जो बरसात में अपना सुख जंग बहाया करता है। चुनांचे इसकी दीवार पर अब तक सुख धब्बे पड़े नजर आते हैं, जिनको देख कर लोग कहते हैं कि यह शाहजादों के खून के निशान हैं, जिन्हें खुदा ने कयामत तक के लिये महफूज रखा है। लार्ड रॉबर्ट जो बाद में हिन्दुस्तान के कमान्डर इन चीफ हुए और जिनका जंग योरोप के जमाने में इन्तकाल हुआ और जो गदर सन् ५७ में खुद मौजूद थे, मेजर हडसन के इस फेल की निस्वत लिखते हैं” हडसन ने यह काम कर के अपनी नेकनामी में बट्टा लगा लिया। उसने शाहजादों को बेजरूरत मार डाला।

जख्मी और बीमारों का कत्ल

जब जामा मसजिद पर कब्जा हो गया तो खबर आई कि बागियों का कैम्प बिल्कुल खाली पड़ा है। लेफ्टिनेन्ट हडसन

सवार लेकर दौड़े गये और कैम्प पर कब्जा कर लिया। बागी ऐसी घबराहट में गये थे कि इनकी गीली धोतियाँ अलगनियों में फैली हुई थीं और उनको उतारने की फुर्सत भी न मिली थी। कैम्प में जिस कदर जख्मी और बीमार पाये गये उनको कत्ल कर दिया गया। और यहाँ से कपड़े, गोलीबारूद बकसरत दस्तयाब हुए।

वेड साहब की दरखास्त पर जनरल विलसन ने मैगजीन की तरफ से किले पर हमला करने के लिये एक कॉलम भेजा। होम साहिब ने बारूद से किले का दरवाजा उड़ाया और फौज नारे लगाती हुई अन्दर दाखिल हुई। किले के छत्ते में बागियों का अस्पताल था और वहीं वे जख्मी पड़े हुए थे, जो अपनी मल्टनों के साथ जा नहीं सकते थे। अंग्रेजी सिपाही ने अपनी गोलियों से उनके जख्मों का इलाज कर दिया। और भी कई ऐसी घटनायें बीमारों के कत्ल की पाई जाती हैं, जिनको पढ़ कर अफसोस होता है कि बागियों की हरकत नाशाइस्ता और ज्वालमाना हो, फिर भी अंग्रेजों की सम्माननीय क्रौम को इस किस्म की बहशियाना शफाक़ी से एहतियात करना चाहिये था।

बीमारों और जख्मियों का कत्ल करना ऐसा ही खौफनाक जुर्म है, जैसा औरतों और बच्चों का हलाक़ करना, कोई भी शख्स बागियों को मलामत करने से खामोश नहीं है, क्योंकि उन्होंने बेगुनाह औरतों और बच्चों को मारा था। मगर अंग्रेजी फौज जख्मियों और बीमारों को हलाक़ करने के मलामत से महफूज नहीं रख सकती है। जनरल विलसन का यह उज्र तसलीम करने के काबिल नहीं है कि फौज काबू से बाहर थी और उसके अंग्रेज अफसरों को अपनी औरतों या बच्चों की मजलूमियत याद आती थी। वह जनरल बहुत नाकामयाब होता है जो अपने मातहतों पर अक्रतदार न रखता हो, और

जिसको इतना अख्तियार भी न हो कि वह खिलाफ तहजीब-व खिलाफ-इन्सानियत मजालिम शहीद से मातहतों को रोक सके। यक़ीनन जनरल विलसन और सब अंग्रेज़ जोशे इन्तकाम में भूल गये थे कि बीमारों और जख्मियों का क़त्ल करना वह शियाना व ज़ालिमाना ख़ता है।

कूचा चेलान की मुसीबत

देहली के तमाम मुहल्ले से ज्यादा चेलों के कूचे पर मुसीबत आई थी। इस मुहल्ले में बड़े बड़े शरीफ़ और नामवर उल्मा रहते थे। मौलाना शाह वली अल्ला व शाह अब्दुल अजीज़ मुह-इस देहलवी का घराना इसी मुहल्ले में आबाद था। सर सैयद अहम्मद खाँ का घर भी इसी मुहल्ले में था। मौलाना सुभाती भी इसी मुहल्ले में रहते थे। गरज़ यह मुहल्ला बड़े २ साहेब कमाल लोगों का मख़ज़न था। मुन्शी ज़काउल्ला साहब भी इसी मुहल्ले के बाशिन्दा थे और अब भी इनके लड़के इसी मुहल्ले में आबाद हैं। मगर ग़दर के वक्त मुन्शी साहेब शहर के बाहर चले गये थे। और सर सैयद भी अपने कुनबे समेत दिल्ली में न थे। मुन्शी ज़काउल्ला साहब लिखते हैं, इस मुसीबत ख़ास का सबब यह हुआ कि नवाब शमशेर ज़ङ्ग खाँ के बेटे मुहम्मद अली खाँ और हकीम फ़तहउल्ला खाँ ने किसी अंग्रेज़ी सिपाही को ज़ख्मी कर दिया था, क्योंकि वह इनके जनाने मकान में बुरे इरादे से जाना चाहता था। इसकी ख़बर अंग्रेज़ी कमान अफ़सर को हुई तो उसने हुक्म दिया कि इस कूचे के तमाम मरदों को क़त्ल करदो या गिरफ़्तार करके ले आओ। इस हुक्म की तामील ऐसी बेदर्दी से हुई कि मोहल्ले में कोई मर्द जिन्दा न बचा। या तो सिपाहियों ने घरों में घुसकर मार डाला या गिरफ़्तार करके हाकिम के सामने ले

गये । जिन्हें देखकर हाकिम ने हुक्म दिया कि जमुना के किनारे ले जाकर गोली मार दो । चुनांचे ऐसा ही किया गया । इन लोगों को रस्सी से बाँधा गया । दरिया की रेती में क्रतार बनाकर खड़ा किया गया और गोलियों की बाढ़ इन पर चलाई गई !! इससे सब मर कर गिर पड़े । सिर्फ दो आदमी जिन्दा बचे, जिनके गोली न लगी थी । जब सिपाही गोलियाँ मार कर चले गये तब ये दोनों उठकर भागे । इन में एक मिर्जा मुस्तफा बेग थे जो बाद में रिसाले में नौकर हो गये थे । दूसरे मौलाना सुभानी के दामाद और भांजे वजीरुद्दीन थे, जो बाद में कानपुर जजी के सरिश्तेदार हो गये थे ।

इन मकतूलों में हिन्दोस्तान के दो चाँद सूरज भी थे । एक मौलाना सुभानी जिनकी फारसदानी तमाम हिन्दुस्तान में मुसल्लिम थी, और इनसे ज्यादा फारसी इल्म का जानने वाला तमाम मुल्क में कोई न था । मिरजा गालिब के रुक्क़ात में इनका बड़े दर्द अंगेज अल्फाज में जिक्र है । और गालिब इनकी लियाक़त के बड़े क़द्रदाँ थे । मुफ़्ती सरूद्दीन आज़ाद ने मौलाना सुभानी के क़त्ल की ख़बर सुनी तो शेर कहा—

क्योंकर आजुर्दा निकल जाए न सौदाई हो,
क़त्ल इस तरह से वे जुर्म जो सुभानी हो ।

क़त्ल कियों में दूसरे नामवर शख्स सैय्यद मुहम्मद अमोर उर्फ़ मीर पञ्जेकश थे, जिनकी खुशानसीबी का लोहा तमाम हिन्दुस्तान मानता था । और इनके हाथ के लिखे हुए हरूफ़ सोने चाँदी के एवज खरीदे जाते थे । वह भिखारी फ़कीरों को एक हरूफ़ लिख कर दे देते थे, जो एक रुपये के नोट की तरह हर जगह रुपये को बिक जाता था । अफ़सोस कि यह साहब-कमला भी दरिया की रेती में मारा

गया। चेलों के कूँचे वाले जो दरिया की रेती में बेखता हलाक किये गये उनकी तादाद का सही इल्म किसी को नहीं, मगर अन्दाजा इससे हो सकता है कि सिर्फ मौलाना सुभानी के कुनबे के २१ आदमी इस क़तार में मारे गये ! तो जाहिर है कि एक शख्स के ही हमराह २१ थे तो बाक़ी बड़े आदमियों के साथ कितने कितने होंगे ।

दिल्ली में ग़दर के दिनों में कितने आदमी गोली से मारे गये, यह ठीक अन्दाज करना कठिन है। लार्ड राबर्ट लिखते हैं—“हम सुबह को लाहौरी दरवाज़े से चांदनी चौक में गये तो हमको शहर हक़ीकत में मुर्दों का शहर नज़र आता था। कोई आवाज़ सिवाय हमारे घोड़ों की टापों के सुनाई नहीं देती थी। कोई ज़िन्दा आदमी नज़र नहीं आया। सब तरफ मुर्दों का बिछौना बिछा हुआ था, जिसमें बहुत से सिसक रहे थे। हम चल रहे थे तो बहुत आहिस्ता आहिस्ता बात करते थे। खौफ था कि हमारी आवाज़ से मुर्दे चौंक न पड़ें। इस बात के देखने से कि एक तरफ मुर्दे की लाशों को कुत्ते खा रहे हैं और दूसरी तरफ लाशों के आसपास गिद्ध जमा हैं, जो उनके गोश्त को नोच नोच कर मज़े से खा रहे हैं और हमारी आमद की आवाज़ से उड़ उड़ कर थोड़े फ़ासले पर जा बैठते हैं, हमको बड़ी इब्रत होती थी और हमारा दिलरञ्जूर हो जाता था। बहुत से मुर्दे ऐसे पड़े थे मानो वे ज़िन्दा हैं। बाज़ों के हाथ ऊपर को उठे हुए थे, मानों वे किसी की तरफ इशारा कर रहे हैं। जैसे हमें देखकर डर लगता था वैसे ही हमारे घोड़े उन्हें देखकर बिदकते थे। और हिनहिनाते थे। मुर्दों की लाशें पड़ी सड़ती थीं। उनकी बदबू से हवा में बीमार करने का असर हो गया था।” इसी तरह एक और रहमदिल अंग्रेज़ ने निहायत सादे अल्फाज़ में लिखा है—“दिल्ली के बाशिन्दे अगर सब

नहीं, मगर आधे बेकसूर शहर के चारों तरफ देहात व जंगलों में मर रहे हैं।” लार्ड राबर्ट जंगी आदमी थे। मगर उन्होंने शायरों की तरह ऐसा सही और दर्दनाक दिल्ली के बाज़ार का नज़ारा लिख कर पेश किया है जिसे पढ़कर कलेजा हिल जाता है और मालूम होता है कि दिल्ली में इस शिद्दत से लोग मरे थे कि बाज़ार लाशों से भरे पड़े थे ! !

बीमार की फाँसी

बादशाह के भाई मिरजा बाबर का लड़का मिरजा काले मुखवरों में नौकर हो गया था। उसने अपने खानदान वालों पर ऐसे २ ज़ुल्म कराये कि जिनके सुनने से बदन के रोंगटे खड़े होते हैं। वह अपनी कारगुज़ार दिखाने को ऐसे २ झूठ बोलता था, जिनका कुछ भी सर पैर न होता था। मामूली शाहज़ादों को गिरफ्तार कराता और उनसे कह देता कि साहब के सामने जाकर कह देना कि हम बादशाह के करीबी रिश्तेदार हैं। ऐसा कहने से तुम्हें बादशाह के साथ रखा जायगा और तुम्हारी पेन्शन मुकर्रर हो जायगी। दूसरी तरफ हुक्काम से जाकर कहता कि मैंने फलाँ शाहज़ादे को गिरफ्तार कराया है जो बादशाह का करीबी रिश्तेदार है और जिसने ग़दर में बड़े २ काम अंम्रेजों के खिलाफ किये हैं। इन्हें गिरफ्तार कराना मामूली बात न थी।

हुक्काम इनकी बातों से धोखे में आ जाते थे और बेचारे शाहज़ादों को बेगुनाह फाँसियाँ हो जाती थीं। इन्हीं बेखता शाहज़ादों में एक शाहज़ादा मिरजा कैसर नामी थे, जो बहादुर शाह के दादा शाहआलम के बेटे थे। वे इस कदर बूढ़े थे कि उनके होश हवास भी दुरुस्त न थे और कोई शख्स यह ख्याल भी नहीं कर सकता था कि उन्होंने ग़दर में कोई हिस्सा लिया

होगा । मगर मूजी अकरब—सिफत मुखबिर ने अंगरेज हुक्काम को मिरजा कैसर की तरफ से ऐसी ऐसी बे सरोपा बातें सुनाई कि हुक्काम आग बबूला हो गये । और गरीब बूढ़े शाहजादे को फाँसी दे दी गई । इसी तरह एक और बीमार शाहजादा मिरजा महमूद थे, जो अकबरशाह के पोते थे और बहुत अर्से से गठिया के मर्ज में मुब्तिला थे । गदर के जमाने में बेचारा घर में बे हसो हरकत पड़ा रहता था । गठिया के सबब इसके हाथ पाँव ऐसे जकड़ गये थे कि वह गोला लाठी और गोल मटोला हो गया था । इस आफत नसीब की शिकायत भी नमक मिर्च लगा कर मुखबिर ने हुक्काम से जाकर की । और इसके वयान से मुतास्सिर होकर इन्हें भी फाँसी दे दी गई । मुन्शी जका उल्ला लिखते हैं कि फाँसी पाने के बाद भी मिरजा महमूदशाह की लाश गोला लाठी बनी लटकती रही । और जो कोई शख्स उस लाश को देखता था और इसकी बीमारी का खयाल करता था, तो रंज व अफसोस से बे अख्तियार रोने लगता था ।

वालियाने-रियासत की फाँसियाँ

देहली की एजेन्टी में सात रियासतें थीं—भुम्भर, पाटौदी, दुजाना, लुहारी, बल्लभगढ़, फरुखनगर, बहादुरगढ़ और दादरी ।

भुम्भर के नवाब अब्दुलरहमानखाँ पर यह जुर्म आयद किया गया कि उन्होंने सर थ्यूफिलिस मेटकॉफ साहेब को पनाह न दी, जब कि वह उनके पास बागियों से भाग कर गये थे, और बहादुरशाह को अर्जियाँ भेजीं इसलिये २० अक्टूबर को फौज भुम्भर गई और नवाब साहेब को गिरफ्तार कर लाई । किले के दीवाने आम में वे चन्द रोज क़ैद रहे । मुकदमा

हुआ और आखिर फाँसी की सजा दी गई और रियासत जब्त हुई, बल्लभगढ़ के राजा नाहरसिंह पर यह जुर्म आयद हुआ कि उसने मनरो साहेब वकील रेजिडेन्सी की जान न बचाई और वे उसके इलाके में बागियों के हाथ से मारे गये। नीज उसने बादशाह को बहुत सी अर्जियाँ लिखीं। उसे भी फाँसी की सजा दी गई और रियासत जब्त की गई। फरुखनगर के नवाब अहमदअली खाँ को फाँसी और जब्ती रियासत की सजा मिली।

लुहारी के रईस नवाब अमीनउद्दीनखाँ कुछ दिन कैद रहे। मुकदमें में कई कई घण्टे खड़े रहना पड़ा, आखिर सर जॉन लारेन्स की कोशिश से रिहाई पाई और रियासत भी बच गई। पाटौदी और दुजाने पर कोई जुर्म आयद नहीं हुआ। बहादुरगढ़ दादरी के रईस बहादुर जंग खाँ फाँसी से तो बच गये, मगर रियासत जब्त हुई और लाहौर में रहने का हुक्म मिला, और हजार या पाँच सौ रुपये माहवार पेंशिन मुकर्रिर हुई।

जब भूभर, बल्लभगढ़ और फरुखनगर के रईसों को फाँसियाँ दी जातीं तो शहर के सब दरवाजे बन्द हो जाते, तीसरे पहर का वक्त होता, फौज बाजा बजाती हुई आती और फाँसी घर के सामने आकर ठहर जाती। फिर किले से फाँसी पाने वाले मुजरिम को एक कराँची (वैलगाड़ी) में लाया जाता, जिसके गिर्द कटहरा न होता था, मुजरिम के हाथ पीठ की तरफ बंधे होते थे। कोतवाली के चारों तरफ अंग्रेज तमाशाही जमा होते थे। जब फाँसी का तख्ता खींचा जाता तो तमाशाही हँसते। इसके बाद लाश औंधे मुँह कराँची में डाल दी जाती और शहर के बाहर किसी जगह दफन करने को भेज दी जाती थी।

फाँसी पाने वालों की कई किस्में थीं । एक तो वे लोग थे जो बादशाह से ताल्लुकखास रखते थे या उनके नौकर थे और उन्होंने किले के क़त्ल किये औरतों और बच्चों के क़त्ल में हिस्सा लिया था और दूसरे वे थे, जिन्होंने जेहाद के नाम से लड़ाई में हिस्सा लिया था और अब मस्जिदों में बीमार या जरूमी पड़े थे । तीसरे वे थे जिन्होंने मेगज़ीन में अंगरेज़ों को दिक्क किया था । चौथे बागो सिपाही थे, जो छिपे छिपाये कहीं न कहीं मिल जाते थे । पाँचवे अजमेरी दरवाज़े के मुसल्मान मोची थे जिन्होंने मेटकॉफ़ साहब पर बांसों से हमला किया था, जब कि वे बागियों से भाग कर अजमेरी दरवाज़े की तरफ से शहर से बाहर जाना चाहते थे । छटवें बाती और गूजर थे, जिन्होंने चारों तरफ़ लूट मचा रखी थी । कोतवाली चांदनी चौक के सामने एक हौज़ था, जो अब बन्द होगया है । उसके तीन तरफ़ फाँसियाँ गड़ी हुई थीं ।

फाँसी देने के वक्त एक बात बहुत नामुनासिब पाई जाती थी कि फाँसी पाने वालों की एक क़तार लाकर खड़ी की जाती थी, उसमें से आधे लटका दिये जाते और आधे खड़े हुए देखते रहते कि इसके बाद हमारा नम्बर आयेगा ! सभ्यजातियों में यह बहुत अनुचित और दोष पूर्ण समझी जाती है । देहली के बाज़ शरीफ़ लोग अलवर रियासत में बड़े २ ओहदों पर थे । जब देहली में गिरफ़्तारियाँ और क़त्लकारियाँ हुईं तो सैकड़ों भले आदमी भाग भाग कर अलवर पहुँचे । उनका ख्याल था कि अलवर में हमें पनाह मिल जायगी । मगर गुलाम फख़रुद्दीन खाँ जासूस मौत का फरिश्ता बनकर अलवर पहुँचा और एक एक को चुन कर गिरफ़्तार कर लाया । कुछ तो गुड़गावाँ के मजिस्ट्रेट के हुक्म से रास्ते में दरख्तों पर लटका दिये गये और बाक़ी देहली लाए गये और यहाँ उन्हें फाँसियाँ दी गईं ।

तबारीखे हिन्द में लिखा है कि जिस वक्त अलवर के क़ैदी पकड़े गये और उनको फाँसी का हुक्म दिया गया और उनकी फाँसी का वक्त आया तो क़ैदियों में से ४ जवानों की बूढ़ी माताएँ भी उनकी मौत का तमाशा देखने आगईं। ये जवान जर्क वर्क कपड़े पहने हुये थे। सिर पर रेशमी और ज़री के सीले बंधे हुए थे। पैरों में टाट-वाफ़ी जूतियाँ, चुस्त अँगरेखे, चौड़े सीने गोरे २ चेहरे ! जिस वक्त भंगियों ने उन्हें फाँसी के तख्ते पर खड़ा किया, उनकी बुढ़िया माताओं का गम के मारे अजीब हाल था। वे चीखें मारती थीं और पछाड़ें खाती थीं और कलेजा पकड़ कर जमीनपर लोटी जाती थीं। और उनके बेटे दम बखुद चुपचाप अपनी बूढ़ी माताओं की बेकरारी देख रहे थे।

देखते २ तख्ता खिंच गया और वे मौत के फन्दे में लटकने लगे। इस दिन भंगी निहाल होगया था, क्योंकि ज़री-सीलों टाटवा जूतियों का एक अम्बर साथ ले गया था।

देहली में एक रईस नवाब मुहम्मद हसन खाँ नामी थे। इन्होंने एक मेम को अपने घर में पनाह देने की नेकी के साथ एक बुराई यह की कि उसके साथ व्यभिचार किया जिससे उसे हमल हो गया। इस जुर्म में इन्हें भी फाँसी दी गई, मगर मेम ने यह शराफत बर्ती कि नवाब साहब की बीबी के माल असबाब को लूट से बचा दिया। और अपने पास से नगदी देकर गुज़ारे का सामान कर दिया।

सर जान्स लारेन्स की जीवनी में लिखा है कि जिस जगह फाँसियाँ दी जाती थीं, वहाँ एक देशी दूकानदार कुर्सियाँ बिछाता था, और उन पर अंगरेज अफसर आकर बैठते थे और दूकानदार को कुर्सियों का किराया देते थे। वहाँ वे लोग फाँसी का तमाशा देखते, चुरुट पीते और मरने की आखिरी सैर करते थे। अगर कोई मेम उधर से गुज़रती और वह फाँसी का नज़ारा

न देख सकती तो टोपी से अपनी आँखों पर आड़ कर लेती थी। मुसलमानों के लिये एक जुर्म यह भी था कि इनकी शान-सिपाहियाना है या नहीं। अगर सिपाहियाना होती तो फाँसी देने का एक सबब यही हो जाता था।

एक रोज़ बारह मुसलमान गिरफ्तार होकर आये, उनका कोई जुर्म साबित न हुआ, पर इस ख़ता पर ही उन्हें फाँसी दे दी गई कि उनकी सूरत सिपाहियाना है और वे जरूर बगावत में शरीक हुए होंगे।

महाराजा नन्द कुमार को फाँसी

जब वारेन हेस्टिंग्स की स्वच्छन्दता नष्ट हुई और कौन्सिल के साथ सहमत होकर शासन करने की कम्पनी ने आज्ञा दी, तब महाराजा नन्द कुमार ने सर फिलिप फ्रान्सिस द्वारा एक आवेदन पत्र कौन्सिल में भेजा था। उसमें उन्होंने लिखा था—
“हेस्टिंग्स साहब जैसे शत्रु की शिकायत करके आत्मरक्षा के लिये मैं ईश्वर की कृपा पर ही भरोसा करता हूँ। मैं आत्म मर्यादा को प्राण से भी बढ़कर मानता हूँ और मैं यदि अब भी असली भेद न खोलूँ और मौन रहूँ तो मुझे और भी अधिक विपत्तियाँ मिलनी पड़ेंगी, अतः मैं लाचार होकर यह रहस्य भेद प्रकट करता हूँ।”

इस आवेदन पत्र में महाराज ने दिखाया कि हेस्टिंग्स साहब ने ३,५४,१०५ रुपये का गबन किया है और वे महाराज के सर्वनाश के षड्यन्त्र रच रहे हैं। महाराज के शत्रु जगत चन्द्र, मोहन प्रसाद, कमालुद्दीन, आदि इस पापगोष्ठी में हैं।

जब यह पत्र कौन्सिल में पढ़कर सुनाया गया तो हेस्टिंग्स साहब का चेहरा फक हो गया। वे क्रोध में मतवाले होकर

मेम्बरों को सख्त-सुख्त कहने और महाराज को गालियाँ देने लगे। उस दिन कौन्सिल बरखास्त हो गई। दो दिन पीछे जब कौन्सिल बैठी तो महाराज का एक पत्र और खोला गया, जिसमें लिखा था कि कौन्सिल यदि आज्ञा दे तो मैं स्वयं कौन्सिल में आकर अपनी बातों का प्रमाण पेश करूँ और घूस के रुपयों की रसीद दाखिल करूँ।

पत्र सुनकर कर्नल मॉनसून ने प्रस्ताव किया कि महाराज को कौन्सिल में उपस्थित होकर सबूत पेश करने की आज्ञा देनी चाहिये। यह सुनकर गवर्नर साहेब के क्रोध का ठिकाना न रहा। उन्होंने कहा—यदि नन्दकुमार हमारा अभियोक्ता बन कर कौन्सिल में आयेगा तो हम इस अपमान को प्राण जाने पर भी नहीं सह सकेंगे। हमारी अधीनस्थ कौन्सिल के सदस्य हमारे कार्यों के विचारक बनकर यदि एक सामान्य अपराधी के समान हमारा विचार करेंगे तो हम इस बोर्ड में बैठेंगे ही नहीं। बार्बल साहब ने सलाह दी कि इस मामले की जाँच सुप्रीम कोर्ट द्वारा कराई जाय।

बहुत बाद विवाद के अनन्तर बहुमत से महाराज का कौन्सिल में बुलाया जाना निश्चय हुआ। गोरे गवर्नर पर काला आदमी दोषारोपण करे, यह एक अनहोनी बात थी। हेस्टिंग्स साहब उठकर चल दिये। पर सभ्यत्रय ने जनरल क्लिवरिङ्ग को सभापति बनाकर महाराज को कौन्सिल में बुलवाया और उनके प्रमाण सुनकर एकमत से हेस्टिंग्स को अपराधी ठहराया। साथ ही उन्होंने यह भी निश्चय किया कि उन्हें घूस के रुपये फौरन कम्पनी के खजाने में जमा करा देने चाहिये। परन्तु हेस्टिंग्स ने इस प्रस्ताव का तिरस्कार कर दिया, इस पर कम्पनी की ओर से सुप्रीम कोर्ट में दावा दायर करने के लिये सब कागज कम्पनी के सालिसिटर जनरल के

पास भेज दिये गये । सालिसिटर ने उन्हें देखकर जो राय कायम की थी वह यह है:—

“हमारी समझ में कलकत्ते की सुप्रीम कोर्ट में कम्पनी की ओर से हेस्टिंग्स साहब पर नालिश दायर की जानी चाहिये । ऐसा करने पर हेस्टिंग्स साहब को अपना जवाब दावा दाखिल करना ही पड़ेगा । नालिश दायर हो जाने पर बंगाल के सब झगड़े एकदम तय हो जायेंगे और कम्पनी को भी अधिक लाभ होगा ।”

हेस्टिंग्स साहब ने यह रंग ढंग देखकर चीफ जस्टिस इम्पे साहब की कोठी में एक गुप्त मंत्रणा की । इसके अगले दिन ही अचानक मोहनप्रसाद ने सुप्रीम कोर्ट में हलफिया बयान दाखिल करके एक जाल का दावा महाराज नन्दकुमार पर खड़ा कर दिया । दावे में कहा गया था कि महाराज नन्दकुमार ने जाली दस्तावेज बनाकर मृत बुलाकीदास की रियासत से रुपये वसूल किये हैं । बयान दाखिल होने ही महाराज नन्दकुमार की गिरफ्तारी के लिये कलकत्ते के शेरिफ के नाम सुप्रीम कोर्ट के विचारकों ने वारन्ट निकाल दिया और तत्काल ही महाराज डाकुओं की तरह गिरफ्तार करके जेल में डाल दिये गये । अपने पत्र में भगडाफोड़ करते हुए महाराज ने जो भय प्रकट किया था, वह सम्मुख आ गया ।

महाराज ब्राह्मण थे, इसलिये उन्होंने जिस स्थान पर ईसाई मुसल्मान आते जाते थे, वहाँ संध्या वन्दन और खानपान से इन्कार कर दिया । ६८ घण्टे वे बराबर निर्जल रहे । जब उनके वकील ने उन्हें किसी शुद्ध स्थान में नज़र बन्द करने की अर्जी दी, तब बंगाल के पंडितों को बुलाकर अंग्रेजों ने व्यवस्था ली कि महाराज की जाति जेल में खानपान से नष्ट हो सकती है या नहीं ? हेस्टिंग्स के नौकर मोदी बाबू ने झटपट मुर्शिदाबाद के

आदमी दौड़ाकर अपने पंडित हरिदास तक पंचानन को कलकत्ते बुला भेजा। उन्होंने तथा अन्य ब्राह्मणों ने आत्म-मर्यादा को तिलाञ्जलि दे, व्यवस्था दी कि जेल में भोजन करने से ब्राह्मण की जाति नष्ट नहीं होती और अगर थोड़ा बहुत दोष होता भी है तो वह “नहीं” के बराबर है और जेल से छुटकारा पाने के बाद व्रत आदि रखने से उनका प्रायश्चित्त हो जाता है। एक देवता ने तो यहाँ तक कह दिया कि ब्राह्मण की जाति आठ बार मुसलमान का भात खाने के बाद नष्ट होती है ! उपरोक्त व्यवस्था सुनकर इम्पे साहब ने महाराज की दरखवास्त नामंजूर कर दी, परन्तु जब महाराज ने भोजन से इन्कार कर दिया और वृद्ध होने के कारण उनके प्राण जाने का भय हुआ, तब जेल के आंगन में उनके लिये अलग खीमा खड़ा किया गया। इस बीच में अभियोग तैय्यार कर के धूमधाम से चलाया गया।

१७७५ की तीसरी जून को, कोई डेढ़ सौ वर्ष पहिले अंग्रेजी न्याय का कलंकरूप कोर्ट बैठा और बेईमान जज पीली पोशाक पहन कर आ डटे। महाराज अभियुक्त के वेष में सामने खड़े हुए और उनके गुमाश्ता चैतन्यनाथ, एवं उनके दास राम राधाचरण बहादुर और महाराज के बैरिस्टर फरार साहब उनके पीछे खड़े हुए। दूसरी ओर क्रियादी के गवाह कान्त पोद्दार आदि हेस्टिंग्स के सहचर दर्शकों की सीट पर आ बैठे। महाराज पर जाल आदि के २० अपराध लगाये गये। महाराज ने अपने को निर्दोष बतलाया। उनसे पूछा गया—“आप किससे अपना विचार कराना चाहते हैं ?” महाराज ने कहा परमेश्वर हमारा विचार करे। हमारे देशवासी, हमारी श्रेणी के जन हमारा विचार करें।” पर उस समय देशी लोगों का अंग्रेजों के न्यायालय में वैसा सम्मान न था, अतः १२ जूरी बनाकर विचार का आडम्बर शुरू हुआ। ये सब हेस्टिंग्स के गुट्ट के लोग थे।

कोर्ट के प्रधान द्विभाषिये विलियम चेम्बर किसी तरीके से गौर हाजिर कर दिये गये और गवर्नर के कृपा पात्र ईलियट साहब को उनका काम सौंपा गया ।

महाराज के बैरिस्टर ने आपत्ति की तो इम्मे साहेब ने उसे धुड़क दिया । क्लार्क आफ दी क्राउन के अभियोग पत्र पढ़ने पर फरियादी के गवाहों की ज़बान बन्दी आरम्भ हुई । पहली गवाही मोहनलाल की हुई । यह वही आदमी था, जिसकी पहली दरखास्त का मसौदा स्वयं कोर्ट के जजों ने बनाया था । पर यह बात फैसला हो चुकने पर प्रमाणित हुई । दूसरी साक्षी पर कमालुद्दीन खाँ की हुई । उसने कहा—“महाराज ने मेरे नाम की मुहर मुझ से मांगी थी, आज १४ वर्ष हुए, मुझे वह वापस नहीं मिली ।” जज के दस्तावेज़ दिखाने पर उसने अपनी मोहर की छाप को भी पहचान लिया । उसने यह भी कहा कि इस बात की खबर खाजा पैट्रिक सफरुद्दीन और मेरे नौकर हुसेन अली को भी है ।

दस्तावेज़ पर मुहर में अब्दुल कमालुद्दीन की छाप थी । जिरह में जब उससे पूछा गया कि तुम्हारा नाम तो कमालुद्दीन खाँ है, यह मुहर तुम्हारी कैसी ? तब गवाह ने कहा—“धर्मा-वतार । मैं कभी भूठ नहीं बोलूँगा । मैं दिन में पाँच बार नमाज़ पढ़ता हूँ, मेरा नाम पहले अब्दुल कमालुद्दीन ही था । पर तब से अब मेरी हैसियत बढ़ गई है । इसलिये मैंने अपने नाम के आगे का टुकड़ा छोड़ कर नाम के पीछे लगा लिया है ।”

जिरह में जब पूछा गया कि तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि तुम्हारा नाम गवाहों में दर्ज है ? तब उसने कहा—“महाराज ने मुझसे ख़ुद जिक्र किया था कि हमने तुम्हारे नाम की मुहर गवाहों में लगा दी है; ज़रूरत पड़े तो इसके सबूत में तुम्हें गवाही देनी पड़ेगी । पर मैंने भूठी गवाही से साफ़ इन्कार कर

दिया था, या अल्लाह ! भला मैं भूठी गवाही दे सकता था ?”

हुसेन अली, ख्वाजा पैट्रिक और सफरुद्दीन ने भी उसकी बात की पुष्टि की। दस्तावेज पर अब्दुल कमालुद्दीन, शिलाव-बर्सिह और माधवराव के दस्तखत थे। कमालुद्दीन की गवाही तो हो चुकी, बाकी दोनों मर चुके थे। शिलावतसिह के दस्तखत पहचानने को राजा नवकृष्ण आये थे। ये कायस्थ थे। इन्होंने शपथ पूर्वक कहा कि ये शिलावतसिह के दस्तखत नहीं हैं।

इतनी साक्षी होने पर भी मामला जोरदार नहीं हुआ। वादी मोहनप्रसाद ६ बार और उसका गुमास्ता कृष्णजीवन बार २४ बार गवाहों के कटहरे में खड़े किये गये। बार २ जिरह किये जाने पर कृष्णजीवन ने झुंझला कर कहा—“पद्ममोहन-दास के हाथ का लिखा एक इकरार नामा बुलाकीदास ने स्वयं लिखा था; इसमें बुलाकीदास ने महाराज के १७६५ में ४८,०२१) रुपये के एक तमस्सुक की बाबत साफ लिखा था।”

कृष्णजीवन के इस इजहार से कोर्ट के जजों और हेस्टिंग्स के चेहरों का रंग फ़क्र हो गया। पर इम्पे साहेब ने गम्भीरता से कहा—“कृष्णजीवन ने अब तक जो गवाही दी थी, वह करारेपन से दी थी, पर इस इकरार नामे की बात कहती बार उसका कण्ठ अवरुद्ध हुआ है। इसलिये अन्तिम बात मिथ्या जान पड़ती है। निस्सन्देह पद्ममोहन ने महाराज नन्द कुमार की साजिश से एक इकरारनामा तैय्यार कर लिया था।

उधर कान्त पोद्दार, मुन्शी नव कृष्ण, गंगा गोविन्दसिह, राजा राजबल्लभ और स्वयं हेस्टिंग्स साहेब नए नए साक्षी तैय्यार कर रहे थे और किसी तरह काम बनता न देख कर, उन्होंने आजिम अली को गवाह के कटहरे में लाकर खड़ा किया।

आजिम अली नमक की कोठी के एजेन्ट एक अंगरेज का खानसामा था। क्लाइव की प्रतिष्ठित सभा के सभ्य आवश्य-

कता होने पर इसे सरकारी गवाह बनाया करते थे, क्योंकि उस समय सरकारी वकील नहीं होता था। जब किसी पर बमक की चोरी का अपराध लगाया जाता था तो आजिम अली गवाह बनता था। पर अब वह सभा लोप हो गई थी। आजिम अली ने अब एक औरत से निकाह पढ़ कर लाल बाजार में जूते की दुकान खोल ली थी।

तीसरी जून से सबूत के गवाहों की ज़बान बन्दी आरम्भ हुई थी और ११ वीं जून को सबूत की गवाही समाप्त हुई थी। फिर भी १२ वीं जून को आजिम अली गवाह पेश किया गया। यह कार्यवाही बेजान्ता थी, पर मुकद्दमे में जान्ता ही क्या था।

गवाहों के कटहरे में आजिम अली को खड़ा होते देख महाराज के गुमशते और उनके दामाद के देवता कूच कर गये। वह एक सिद्धहस्त गवाह था। वे समझ गये, बस यह चश्म-दीद गवाह बनकर आया है। चैतन्याबाबू ने इस समय धूर्तता से काम लिया। उन्होंने हाथ के इशारे से आजिम को सौ, फिर दो सौ, फिर तीन सौ रुपये देने का इशारा किया, पर आजिम न माना। वह हलफ़ उठा कर कहने लगा—

“मैं महाराज नन्दकुमार का मकान जानता हूँ। उनके गुमशता चैतन्य नाथ ने मेरी दूकान से जूता लिया था। मैं सन् १७६६ के जुलाई मास में चैतन्य बाबू से जूतों के दामों का तकाज़ा करने महाराज नन्दकुमार के मकान पर गया। उसके दस दिन पहले बुलाकी दास की मृत्यु होगई थी। वहाँ मैंने चैतन्य बाबू को काम में फँसे हुए पाया। पूछने पर उन्होंने कहा—“इस समय महाराज एक जाली दस्तावेज़ बना रहे हैं, उसी में मैं इस समय फँसा हुआ हूँ। इसके बाद देखा, महाराज बैठक में नाक पर चश्मा चढ़ा कर एक बक्स में से २५-३० मुहर निकाल

कर उनका नाम जोर २ से पढ़ रहे हैं। एक मुहर को उन्होंने कमालुद्दीन की कहकर चैतन्य नाथ को दिखाया भी था ?”

आजिम का यह इजहार सुनकर कोर्ट के जजों की आनन्द से बत्तीसी खुल गई। वे उत्सुकता से कहने लगे—“गो आन” (आगे कहो)।

आजिमअली—हुजूर इसके बाद तमस्सुक की शकल के कागज पर वह मुहर छाप दी गई।

एक जज—कहे जाओ, कहे जाओ।

आजिम अली—इसके बाद चैतन्य बाबू से महाराज ने कहा कि जहाँ मुहर लगाई है, उसके पास ही अब्दुलकमालुद्दीन का नाम भी लिख दो।

दूसरा जज—कहे जाओ।

आजिमअली—चैतन्य बाबू ने कमालुद्दीन का नाम लिख दिया।

तीसरा जज—क्या तुम लिख पढ़ सकते हो ?

आजिमअली—हुजूर अब तो आंखों से दिखाई ही कम देता है, पर आगे फारसी पढ़ लिख सकता था।

सर इम्पे—आगे बोलो।

आजिमअली—हुजूर इसके बाद उसी कागज पर महाराज ने शिलावतसिंह और माधवराव के नाम भी गवाहों में लिख दिये।

इस इजहार से घबराकर चैतन्य बाबू ने इशारे से एक हज्जार रुपये का इशारा किया। तब आजिम ने भी इशारे से ही कहा—घबराओ मत, सब पर पानी फेरे देता हूँ। उधर जज और फरियादी के वकील अधीर होकर—“गो ऑन, गो ऑन” कहने लगे।

आजिमअली—सब काम खत्म होने पर महाराज उसे पढ़ने लगे ।

जजों ने अत्यानन्दित होकर कहा—अच्छा, अच्छा, फिर क्या हुआ ?

आजिमअली—बस पढ़ कर महाराज ने उसे अपने बक्स में रख लिया । तभी हमने सुना कि बुलाक़ीदास ने महाराज को तमस्सुक लिख दिया है ।

सब जज—(एक साथ) फिर ! फिर !! आजिम अली—हुजूर, बस इसके बाद ही घर के भीतर मुराी बोली और नींद टूट गई । मेरी छोटी स्त्री ने कहा—मियाँ ! आज क्या बिस्तर से नहीं उठोगे ? देखो, कितनी धूप चढ़ गई है ।

यह सुनते ही द्विभाषिये ईलियट साहेब ने आजिम अली के मुँह की ओर देखा । सहसा उनके मुँह से निकल पड़ा—आह !

इधर तो इम्पे साहब ने द्विभाषिये से अन्तिम बात समझाने को कहा और उधर गवाह से कहा—गो ऑन' ।

आजिम अली—‘हुजूर, इसके बाद मैंने अपनी छोटी औरत से कहा—मीर की लड़की, मैंने ख्वाब में देखा है कि मैं महाराज नन्द कुमार के मकान पर गया हूँ और वे बुलाक़ीदास के नाम से एक ज़ाली दस्तावेज़ बना रहे हैं ।

जब इलियट साहेब ने गवाह की बातों को इम्पे को समझाया तब तो सुप्रीम कोर्ट के सुयोग्य जज विमूढ़ हो आजिम के मुँह को देखने लगे । पर अब आजिम ने ‘गो ऑन’ की प्रतीक्षा न कह कर कहना जारी रखा—

“धर्मावतार ! मेरी बात सुनकर मेरी छोटी स्त्री ने कहा—“मियाँ ! तुम हमेशा राजा, उमरा, साहबों के मकान पर जाते आते हो, इसी से सपने भी तुम्हें ऐसे ही दीखते हैं ।”

जज शून्य हृदय से बयान सुन रहे थे। अन्त में जज चेम्बर्स ने द्विभाषिये से कहा—गवाह से दरियाफ्त करो कि इसने हमारे सामने अभी जो कुछ कहा है, वह सब ख्वाब की बातें हैं।

प्रश्न करने पर आजिमअली ने कहा—हुजूर ख्वाब में जो मैंने देखा वही सच सच बयान कर दिया है। तीन चार दिन की बात है इस ख्वाब की बातें मैंने मोहन प्रसाद बाब से कही थीं। उन्होंने चट कहा कि तुम्हें गवाही भी देनी पड़ेगी। मैंने कहा जो देखा है सो कह दूँगा, मेरा उसमें क्या हर्ज है। धर्मावतार ! मैं कमीना नहीं, हैसियतदार आदमी हूँ। मेरी छोटी औरत मीर साहब की लड़की है। उसके पिदर अब्दुल लतीफ एक ज़िले के मालिक हैं। और मौलवी अब्दुल रहमान रिश्ते में मेरे साले होते हैं।

आजिम की इस प्रशस्त विरूदावलि को सुन कर चैतन्य बाबू से न रहा गया। वे पीछे से बोल उठे—चाचा ! आज तो तुम बड़े आलीखानदान बन गये। लाल बाज़ार की रहमानी की लड़की के साथ निकाह पढ़वा कर कहते हो कि मौलवी लतीफ हुसैन मेरे ससुर हैं।

आजिमअली—(क्रोध से) दुहाई है धर्मावतार की, दिन दहाड़े, सरे इजलास एक शरीफ की इज्जत ली गई। मैं इस पर तौहीन का मुकद्दमा चलाऊँगा। इसका इतना मक़दूर कि मेरी पाक दामन सास साहब को यह लाल बाज़ार की रहमानी कहे। धर्मावतार ! मेरी सास अब परदानशीन हैं। वे आगे अनक्ररीब आठसाल तक लाल बाज़ार में कुछ २ बेपरदे थीं। पर छै महीने हुए मौलवी साहब ने उनके साथ निकाह पढ़वाकर उन्हें अब परदानशीन बना लिया है। एक ऐसे इज्जत-

दार घराने की पर्दानशीन औरत की शान में ऐसी बाहियात जवान निकालना सरासर जुर्म में दाखिल है। अदालत बेरी फरियाद सुने।

गवाह के रङ्ग ढङ्ग देख कर सारी अदालत सन्नाटे में आ गई। अन्त में इम्पे साहेब ने महाराज के बैरिस्टर फरार साहेब से पूछा—क्या आपको इस गवाह की साक्षी प्रमाण रूप से ग्रहण करने में कुछ उअ है ?

बैरिस्टर ने कहा—“जब गवाह स्वप्न की बात कह रहा है तो मैं नहीं समझता कि उसकी साक्षी कैसे प्रमाण भूत मानी जाय।

इम्पे—मि० फरार ! इस गर्म मुल्क में पूरी पूरी नींद शायद ही किसी को आती हो। प्रायः लोग अर्द्धतन्द्रा अवस्था में रहते हैं। ऐसी दशा में यदि कोई मनुष्य आँख, कान, आदि इन्द्रियों द्वारा कोई विषय ग्रहण करे तो उसके कथन को लॉर्ड थारलो साक्षी रूप से ग्रहण किये जाने में कोई आपत्ति उपस्थित न करेंगे।

बैरिस्टर—मुझे लार्ड थारलो के मतामत से कुछ भी मतलब नहीं। यदि आप उसकी गवाही प्रमाण मानना ही चाहते हैं तो मेरा उअ दर्ज कर दिया जाय।

न्यायमूर्ति इम्पे साहेब ने मातहत तीनों जजों से सलाह करके आजिमअली की गवाही प्रमाण स्वरूप ग्रहण कर ली और आसामी के बैरिस्टर को सफाई के गवाह पेश करने की आज्ञा दी। बैरिस्टर फरार ने कहा कि आसामी पर जुर्म प्रमाणित ही नहीं हुआ, तब सफाई कैसी ? आसामी निर्दोष है। उसे रिहाई मिलनी चाहिये।

जज ने कहा—अपराध सिद्ध हुआ है, आप सफाई पेश

न करेंगे तो हमें जूरियों को समझाने के लिये संग्रहीत प्रमाणों की आलोचना करनी पड़ेगी ।

जिस दस्तावेज के सम्बन्ध में झगड़ा उठा था, इसकी यहाँ पर संक्षिप्त रूप से व्याख्या कर देना अप्रासङ्गिक न होगा । मुर्शिदाबाद में एक भारी राजनैतिक विद्वान पंडित बापूदेव जी शास्त्री रहते थे । नवाब अलीवर्दी खाँ उनका बड़ा सत्कार करते थे और उनसे सदा राज काज में परामर्श लेते रहते थे । इन शास्त्री जी के पास महाराज ने १२ वर्ष की उम्र से २० वर्ष की उम्र तक आठ वर्ष संस्कृत शास्त्रों की शिक्षा पाई थी । जब महाराज २२ वर्ष के हुए, तब नवाब अलीवर्दी खाँ ने पंडित जी के अनुरोध से उन्हें मेहबूदल परगने का लगान वसूल करने पर नियुक्त कर दिया । धीरे २ वे अपनी योग्यता से हुगली के फौजदार बन गये । इस पद पर आपने लगभग ३ लाख रुपये कमाये । इसके बाद गुरुदर्शन की अभिलाषा से एक बार वे मुर्शिदाबाद गये और उनकी कन्या के लिये, जिसे वे अपनी धर्म-भगिनी कर के मानते थे, कुछ आभूषण साथ ले गये । परन्तु जब वे मुर्शिदाबाद पहुँचे, तब उन्हें खबर मिली कि गुरुपत्नी का देहान्त हो गया और उनकी लड़की विधवा हो गई है । ऐसी दशा में उन्होंने आभूषणों के लाने की चर्चा तक गुरु जी से नहीं की और उन गहनों को अपने परिचित बुलाकीदास महाजन की दुकान में अमानत की तरह जमा करा दिया और मन में संकल्प किया कि किसी अवसर पर उन्हें बेचकर उनसे जो रुपये आवेंगे, उन्हें प्रमदा देवी को दे देंगे ।

दैवयोग से मीरकासिम और अङ्गरेजों के युद्ध में मुर्शिदाबाद लूट लिया गया । बुलाकीदास का भी सर्वस्व लूटा गया । बुलाकीदास धर्मात्मा थे । उन्होंने महाराज को उनकी अमानत के बदले में ४८,०२१) रुपये का तमस्सुक लिख दिया । बुलाकी-

दास मर गये, और उसी दस्तावेज को जाली करार देकर महाराज पर मुकदमा चलाया गया।

खैर महाराज की ओर से सफाई की गवाहियाँ पेश हुईं। बड़े २ लोगों ने गवाहियाँ दीं। गवाही समाप्त हो चुकने पर जजों ने जूरियों को मुकद्दमा समझाया और उस पर एक लम्बी वक्तृता भी दी। वक्तृता समाप्त होने पर जूरी लोग दूसरे कमरे में उठ गये। आधे घण्टे के बाद उन्होंने लौट कर कहा—
“महाराज नन्दकुमार अपराधी हैं।”

यह सुनते ही महामति इम्पे साहब ने महाराज को फाँसी का हुक्म दे दिया।

हुक्म सुनाकर महाराज फिर जेल में भेज दिये गये। इस बार खेमे के बजाय एक दुतल्ला मकान उन्हें दिया गया। हज्जारों लोग शत्रु मित्र उनसे मिलने आते थे। नवाब मुबारकुल्ला ने कौन्सिल की सेवा में एक पत्र भेजा था। उसमें उसने प्रार्थना की थी कि इंग्लैंड के महाराज की आज्ञा आने तक फाँसी रोकी जाय।

स्वयं महाराज ने भी जनरल क्लीवरिङ्ग और सर फ्रान्सिस के पास एक पत्र इस आशय का भेजा था—

“सर्व शक्तिमान ईश्वर के बाद आप पर मुझे आशा है। मैं ईश्वर के नाम पर नम्रतापूर्वक आपसे अनुरोध करता हूँ, कि इंग्लैंड के बादशाह की आज्ञा आ लेने तक आप मेरी मृत्यु-आज्ञा को मुलतबी करा दें। हिन्दुओं के मतानुसार मैं न्याय के दिन इस संकट से उबारने के लिये आपको आशीष दूँगा।”

मार्शमैन लिखते हैं:—

“सुप्रीमकोर्ट से फैसला होने पर भी कौन्सिल को इतनी शक्ति थी कि वह इंग्लैंड से आज्ञा आने तक फाँसी रोक दे। परन्तु कौन्सिल के सभ्यों ने इस मामले में पड़ना पसन्द नहीं

किया। नवाब मुबारकुद्दौला के अलावा महाराज के भाई शम्भूनाथ राव आदि कई व्यक्तियों ने भी आवेदन पत्र भेजे, परन्तु उसका कुछ फल न हुआ।”

महाराज को पाँचवीं अगस्त को फाँसी दी गई। किन्तु जनरल क्लीवरिंग ने १४ अगस्त को महाराज का वह पत्र कौंसिल में खोला। उस दिन महाराज का दशम संस्कार हो चुका था। १६ अगस्त को एक मन्तव्य बनाकर उस पत्र की प्राप्ति कौंसिल के कागज पत्रों में से निकाल दी गई।

क्लीवरिंग को जो पत्र उर्दू में महाराज ने लिखा था, उसके विषय में हेटिंग्स ने कहा कि इसमें जजों के आचरण की आलोचना की गई है। अतः यह पत्र जजों के पास भेज देना चाहिये। परन्तु फ्रान्सिस साहब ने कहा—“ऐसा करने से पत्र का महत्त्व बढ़ जायगा। इसमें लिखी हुई बातें भूठी और जजों का अपमान करने वाली हैं। मेरी राय में यह पत्र शेरिफ साहब को दे दिया जाय, ताकि वे इसे किसी आम जगह में सब लोगों के सामने किसी जल्लाद के हाथ से जलवा दें। दूसरे दिन सोमवार को वह पत्र चौराहे पर जल्लाद के हाथ से जलवा दिया गया।

दण्डाज्ञा सुनाने के बाइसवें दिन महाराज को फाँसी लगाई गई। यह समय उन्होंने ईश्वराधना में व्यतीत किया। फाँसी के दिन बड़े सवेरे जब महाराज पूजा में बैठे, एकाएक कोठरी का द्वार खुला और सामने कलकत्ते के मेकरेव साहब शेरिफ दीख पड़े। उन्होंने द्विभाषिये से कहा—“महाराज से निवेदन करो कि आज हम आप से अन्तिम भेंट करने आये हैं। हम ऐसी चेष्टा करेंगे कि ऐसे बुरे समय में (फाँसी में) महाराज को अधिक कष्ट न हो! मुझे इस घटना में शरीक होने का दुख है। महाराज विश्वास रखें कि अन्तिम समय तक मैं उनके साथ

रहूँगा, और उनकी अभिलाषाओं को पूरी करने की चेष्टा करूँगा ।

महाराज ने उन्हें धन्यवाद देते हुए कहा—मैं आशा करता हूँ कि मेरे कुटुम्बियों पर भी आपकी ऐसी ही कृपा बनी रहेगी । प्रारब्ध अटल है । आप मेरा सलाम कौन्सिल के सभ्यों को कहना ।

❀

❀

❀

मेकरेव लिखते हैं—“बात करते वक्त महाराज सांस न भरते थे, न उदास मालूम होते थे; और न उनका कण्ठ अवरुद्ध दिखलाई देता था । उनका चेहरा गम्भीर था, उस पर विषाद का कुछ भी चिन्ह न था । महाराज की दृढ़ता देखकर मेकरेव अधिक देर न ठहर सके । बाहर आने पर जेलर ने कहा,—जब से महाराज के मित्र उनसे मिलकर गये हैं, तब से वे बराबर अपने हिसाब किताब की जाँच पड़ताल कर रहे हैं और नोट लिख रहे हैं ।

फाँसी का समय ७ बजे प्रातः काल था । मेकरेव साहब ठीक समय से आधा घण्टा पूर्व जेल गये । वहाँ फाँसी का सब सामान ठीक था । अङ्गरेजों की अमलदारी में ब्राह्मण को फाँसी लगाने का यह प्रथम ही अवसर था । हज्जारों मनुष्य देखने आये थे । उन सब की आँखों में आँसू झलक रहे थे । खबर पाकर महाराज उतर कर नीचे आये । इस समय उनका मुख प्रसन्न था शेरिफ साहब के बैठने पर आप भी एक कुरसी पर बैठ गये । इतने में किसी ने घड़ी जेब से निकाल कर देखी । यह देख महाराज तत्काल उठ खड़े हुए और बोले “मैं” तैयार हूँ ।” पीछे घूम कर देखा तो तीन ब्राह्मण खड़े थे । ये उनका मृतक शरीर लेने के लिये आये थे । महाराज ने उन्हें छाती से लगाया । महाराज प्रसन्न थे, पर ब्राह्मण फूट फूट कर रो रहे थे ।

मेकरेव ने घड़ी निकाल कर कहा—“समय तो हो गया।

किन्तु जब तक आप न कहेंगे, तब तक वह पापिनी क्रिया आरम्भ न की जायगी। एक घण्टे तक सब चुप बैठे रहे, बीच-बीच में महाराज कुछ बातचीत करते रहे और माला फेरते रहे। इसके बाद महाराज उठे, शेरिफ की तरफ देखा और दोनों चल दिये ! जेल के फाटक पर पालकी तैयार थी। महाराज पालकी पर सवार होकर जेल की तरफ चले। शेरिफ और डिप्टीशेरिफ पालकी के पीछे पीछे चल रहे थे। भीड़ बहुत थी, पर दंगा फसाद का कुछ लक्षण न था। टिकटी के पास पहुँच कर महाराज ने कुछ ब्राह्मणों के न आने के विषय में पूछा। महाराज उनके विषय में पूछ ही रहे थे कि वे भी आ गये। उनसे एकान्त में बात करने के ख्याल से मेकरेव साहब ने अन्य अफसरों को हटाना चाहा, परन्तु महाराज ने उन्हें रोक कर कहा—“मैं सिर्फ बच्चों और घर की स्त्रियों के सम्बन्ध में उनसे कुछ कहना चाहता हूँ।” इसके बाद उन्होंने कहा—“जो ब्राह्मण मेरी मृतदेह ले जायेंगे, उन्हें शेरिफ साहब अपनी निगरानी में रखलें। उनके सिवा ~~अन्य~~ कोई मेरे शरीर का स्पर्श न करे।

शेरिफ ने पूछा—क्या आप अपने मित्रों से मिलना चाहते हैं ?

महाराज ने कहा—मित्र तो बहुत हैं, पर उनसे मिलने का न यह स्थान है और न समय।

शेरिफ ने फिर पूछा—फाँसी पर चढ़ कर महाराज फाँसी का तख्ता हटाने का इशारा किस प्रकार देंगे ?

महाराज ने कहा—हाथ हिलाते ही तख्ता सरका दिया जाय।

मेकरेव ने कहा—किन्तु नियमानुसार आपके हाथ तो बांध दिये जायेंगे, आप पैर हिलाकर सूचना दे दें ।

महाराज ने स्वीकार किया ।

शेरिफ ने महाराज की पालकी को फाँसी के तख्ते तक लाने की आज्ञा दी पर महाराज पालकी छोड़ कर पैदल ही चल दिये । तख्ते के पास पहुँचकर आपने दोनों हाथ पीछे कर दिये । अब उनके मुख पर कपड़ा लपेटने का समय आया । उन्होंने अङ्गरेज के हाथ से कपड़ा लपेटने में आपत्ति की । शेरिफ ने एक ब्राह्मण सिपाही को रूमाल लपेटने का हुक्म दिया । महाराज ने उसे भी रोका । महाराज का एक नौकर उनके पैरों में लिपट रहा था, उसी को महाराज ने आज्ञा दी । इसके बाद आप चबूतरे पर चढ़कर अकड़ कर खड़े हो गये । मेकरेव साहब लिखते हैं:—

“मैं खिन्न हो अपनी पालकी में घुस गया, किन्तु बैठने भी न पाया था कि महाराज ने पूर्वसूचना के अनुसार पैर का इशारा दे दिया, और तख्ता खींच लिया गया । बात की बात में महाराज के प्राण पखेरू उड़ गये । नियत समय तक शव रस्सी पर लटकता रहा । फिर ब्राह्मणों के हवाले कर दिया गया ।”

सत्यानन्द शास्त्री लिखते हैं—“ज्योंही महाराज के गले में फन्दा डाल कर तख्ता खींचा गया, त्यों ही लोग चीख मार मार कर भागने लगे । वे भागते जाते थे और कहते जाते थे “ब्राह्म हत्या हुईल ! कलिकाता अपवित्र हुईल ! देश पापे परिपूर्ण हुईल ! फिरिङ्गेर धर्माधर्म ज्ञान नाईं !!!”

ब्राह्मणों ने उस दिन निर्जल व्रत रखा । बहुत से ब्राह्मण कलकत्ते को छोड़कर अन्यत्र रहने लगे । नगर में हाहाकार

मच गया उसकी गलियाँ लोगों के करुण क्रंदन से प्रतिध्वनित हो उठी ।”

इसी प्रकार अंगरेजी न्याय का आडम्बर समाप्त हुआ । प्रसिद्ध बैरिस्टर पी० मित्र लिखते हैं—”जिन साक्षियों के आधार पर महाराज को प्राण दण्ड दिया गया, उनके सहारे आजकल के विचारक किसी मनुष्य की तो बात दूर रही, एक मक्खी को भी फाँसी की आज्ञा देना न्यायानुमोदित न समझेंगे ।”

प्रसिद्ध इतिहास लेखक मार्शमैन लिखते हैं—“महाराज की फाँसी की आज्ञा इंग्लैंड के उस समय के जघन्य कानून के अनुसार होने पर भी हर तरह न्याय के विरुद्ध थी । जिस कानून के अनुसार फाँसी दी गई थी, वह घटना के कितने ही वर्षों बाद प्रचलित किया गया था ।”

लार्ड मैकाले लिखते हैं—“कोई भी विचारवान् मनुष्य इस बात में सन्देह नहीं कर सकता कि इम्पे साहेब ने यह नीच कृत्य गवर्नर जनरल को खुश करने के लिये ही किया था । साथ ही उन्होंने इसकी पुष्टि में हेस्टिंग्स का वह पत्र उद्धृत किया है, जिसमें इसी घटना की ओर संकेत करके लिखा गया है कि इम्पे साहेब की सहायता से निज धन, मान और प्रतिष्ठा की रक्षा हुई थी ।” वह सहायता यही हत्या थी । इसके बदले में हेस्टिंग्स ने इम्पे साहेब को वर्द्धमान (बर्दमान) में एक पुल काठे का दिलाकर लाखों की आय कराई थी ।”

मैकाले ने साफ लिखा है—“जैफरीन की मृत्यु के बाद इम्पे साहेब को छोड़कर अन्य किसी विचारक ने अंगरेज न्यायासन को कलंकित नहीं किया ।”

विलायत लौटने पर इम्पे साहेब पर भी मुकद्दमा चला था । वहाँ उन्होंने उस समय उस पत्र की एक प्रति पेश की थी, जो जल्लाद के द्वारा नीचता पूर्वक अपमान से जला दिया गया था । और तब यह बात भी खुली कि गवर्नर साहब ने चोरा चोरी उसकी एक प्रति इनके पास भेजकर शपथ ले ली कि इसका जिक्र किसी से न करेंगे ।

सन् ५७ के कुछ संस्मरण

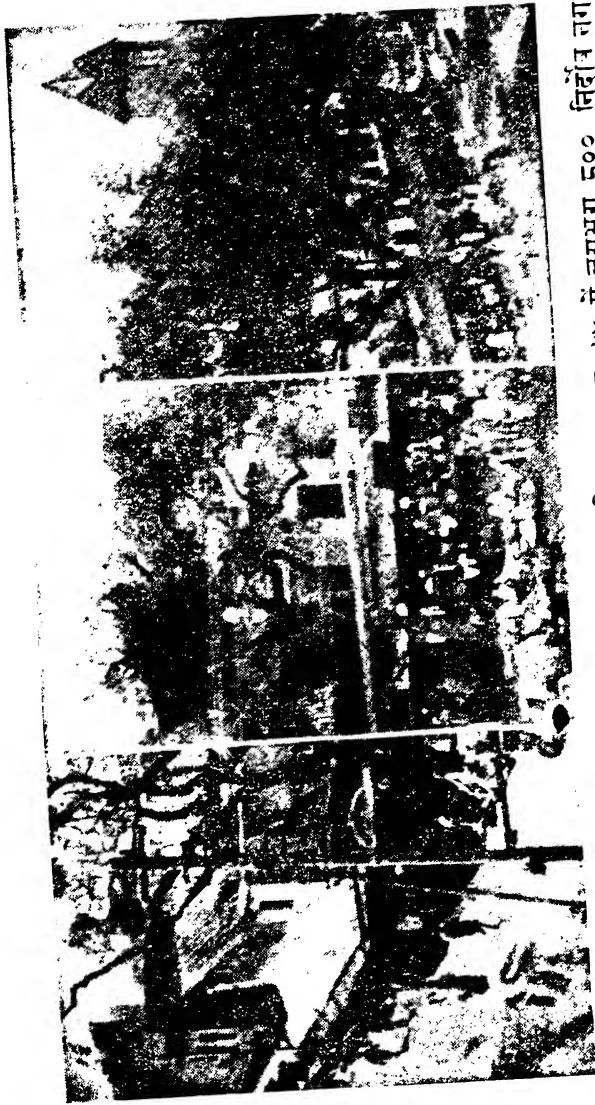
अंग्रेजी सेना द्वारा ग्रामों का जलाया जाना

एक अंग्रेज अपने पत्र में लिखता है—“हमने एक बड़े गाँव में आग लगा दी जो कि लोगों से भरा हुआ था। हमने उन्हें घेर लिया और जब वे आग की लपटों में से निकल कर भागने लगे तो हमने उन्हें गोलियों से उड़ा दिया।”

निर्दोष भारतीय जनता का संहार

इतिहास लेखक सर जान के लिखता है :—

“फौजी और सिविल दोनों तरह के अंगरेज अफसर अपनी अपनी खूनी अदालतें लगा रहे थे, अथवा बिना किसी तरह के मुकद्दमों का ढोंग रचे और बिना मर्द औरत या छोटे बड़े का विचार किये भारतवासियों का संहार कर रहे थे। इसके बाद खून की प्यास और भी अधिक भड़की। भारत के गवर्नर जनरल ने जो पत्र इङ्गलिस्तान भेजे उनमें हमारी ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के कागजों में यह बात दर्ज है कि बूढ़ी औरतों और बच्चों का उसी तरह बध किया गया है, जिस प्रकार उन लोगों का, जो विप्लव के दोषी थे। इन लोगों को स्तब्ध समझ कर फाँसी नहीं दी गई, बल्कि उनको गाँव के अन्दर जलाकर मार डाला गया, शायद कहीं कहीं उन्हें इत्त-



चौक इलाहाबाद के सात नीम के वृक्षों में से चार ; जिन पर सन् ५७ में लगभग ८०० निर्दोष नगर निवासियों को फांसी पर लटका दिया गया ।



कानपुर जिले में अंगरेजों से ता के सिमाही एक गांव में आग लगा रहे
हैं। घास के रस्ती पुख्त निकतकर भाग रहे हैं।

फाकिया गोली से भी उड़ा दिया गया। अंगरेजों को गर्व के साथ यह कहते हुए अथवा पत्रों में लिखते हुए संकोच न हुआ कि हमने एक भी हिन्दुस्तानी को नहीं छोड़ा और काले हिन्दुस्तानियों को गोलियों से उड़ाने में हमें बड़ा विनोद और आश्चर्य जनक आनन्द अनुभव होता था।” एक पुस्तक में जो अंगरेज सरकार की ओर से प्रकाशित हुई, लिखा है—“सड़कों के चौरस्तों पर और बाजारों में जो लाशें टँगी हुई थीं, उनको उतारने में सूर्योदय से सूर्यास्त तक मुर्दे ढोने वाली आठ आठ गाड़ियाँ तीन तीन महीने तक लगी रहीं और इस प्रकार एक स्थान पर छः हजार मनुष्यों को फटपट खतम करके परलोक भेज दिया गया।” × × × जब कोई अंगरेज यह पढ़ता है कि किसी काले रंग के बदमाश ने किसी मिस्टर चैम्बर्स या किसी मिस्टर जेनेरल्स को काट कर मार डाला तो क्रोध के मारे उसका दम घुटने लगता है, किन्तु भारतवासियों के इतिहासों में अथवा, यदि इतिहास न हुए तो, उन परम्परागत वृत्तान्तों में हमारी क्रौम के विरुद्ध यह स्मरण रहेगा कि भारत की माताएँ, पत्नियाँ और बच्चे जिनके नामों से हम उतनी अच्छी तरह परिचित नहीं हैं, अंगरेजों के प्रतिकार की बाढ़ के निर्दयता के साथ शिकार हुए।”

ग्रामनिवासियों सहित ग्रामों का जलाया जाना

इलाहाबाद के अपने एक दिन के कृत्यों का वर्णन करते हुए एक अंगरेज अफसर लिखता है:—एक यात्रा में मुझे अद्भुत आनन्द आया। हम लोग एक तोप लेकर एक स्टीम पर आद गये। सिक्ख और गोरे सिपाही शहर की ओर बढ़े। हमारी किस्ती ऊपर को चलती जाती थी और हम अपनी तोप से दाँये बाँये गोले फेंकते जाते थे। यहाँ तक कि हम बुरे २

ग्रामों में पहुँचे। किनारे पर जाकर हमने अपनी बन्दूकों से मोलियाँ बरसानी शुरू कीं। मेरी पुरानी दो नली बन्दूक ने कई काले आदमियों को गिरा दिया। मैं बदला लेने का इतना ध्यासा था कि हमने दांये बांये गाँवों में आग लगानी शुरू की। लपटें आस्मान तक पहुँची और चारों ओर फैल गईं। हवा ने उन्हें फैलने में और भी मदद दी जिससे मालूम होता था कि बागी और बदमाशों से बदला लेने का मौका आ गया है। हर रोज हम लोग विद्रोही गाँवों को जलाने और मिटा देने के लिये निकलते थे और हमने बदला ले लिया है। × × लोगों की जान हमारे हाथों में है और मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि हम किसी को नहीं छोड़ते। अपराधी को एक गाड़ी के ऊपर बैठा कर किसी—दरख्त के नीचे ले जाया जाता है। उसकी गर्दन में रस्सी का फन्दा डाल दिया जाता है और फिर गाड़ी हटा दी जाती है और वह लटका हुआ रह जाता है।”

असहाय स्त्रियों और बच्चों का संहार

इतिहास लेखक होम्स लिखता है—

बूढ़े आदमियों ने हमें कोई नुकसान न पहुँचाया था; असहाय स्त्रियों से जिनकी गोद में दूध पीते बच्चे थे, हमने उसी तरह बदला लिया जिस तरह बुरे से बुरे आदमी से।”

कत्लेआम

सर जार्ज केम्पबेल लिखता है—

“और मैं जानता हूँ कि इलाहाबाद में बिना किसी तमीज के कत्लेआम किया गया था और इसके बाद नील ने वे काम किये थे जो कत्लेआम से भी अधिक मालूम होते थे। उतने

लोगों को जानबूझ कर इस तरह की यातनाएँ, जहाँ तक हमें सबूत मिलते हैं, भारतवासियों ने कभी किसी को नहीं दीं।”

तोप के मुँह से उड़ाया जाना

एक अंगरेज लेखक लिखता है—“५५ नम्बर पल्टन के कैदियों के साथ अधिक भयंकर व्यवहार किया गया, ताकि दूसरों को शिक्षा हो। उनका कोर्ट मार्शल हुआ, उन्हें दण्ड दिया गया और उनमें से हर तीसरे मनुष्य को तोप के मुँह से उड़ाने के लिये चुन लिया गया।”

एक अंगरेज अफसर जो इन लोगों के तोप से उड़ाये जाने के समय उपस्थित था, उस दृश्य का वर्णन करते हुए लिखता है।

“उस दिन की परेड का दृश्य विचित्र था। परेड पर लगभग नौ हजार सिपाही थे। एक चौरस मैदान के तीन ओर फौज खड़ी कर दी गई। चौथी ओर दस तोपें थीं। पहले दस कैदी तोपों के मुँह से बांध दिये गये। इसके बाद तोप खाने के अफसर ने अपनी तलवार हिलाई, तुरन्त तोपों की गरज सुनाई दी और धुएँ के ऊपर हाथ पैर और सिर हवा में उड़ते हुए दिखाई देने लगे। यह दृश्य चार बार दोहराया गया। हर बार समस्त सेना में से जोर की गूँज सुनाई देती थी, जो दृश्य की बीभत्सता के कारण लोगों के हृदय से निकलती थी। उस समय से हर सप्ताह में एक या दो बार उसी तरह के प्राणदण्ड की परेड होती रहती है और हम अब उससे ऐसे अभ्यस्त हो गये हैं कि हम पर उसका कोई असर नहीं होता।”

इतिहास लेखक के लिखता है कि ५५ नम्बर पल्टन के अधिकांश सिपाहियों की निर्दोषता को कर्नल निकल्सन और सर जॉन लारेन्स दोनों ने अपने पत्रों में स्वीकार किया है।

मनुष्य का शिकार

सन् ५७ में जनरल हेवलाँक और रिनॉर्ड के आधीन कम्पनी की सेना की इलाहाबाद से कानपुर तक की यात्रा के विषय में सर चार्ल्स डिल्क लिखता है—

“सन् १८५७ में जो पत्र इंगलिस्तान पहुँचे उनमें एक ऊँचे दर्जे का अफसर जो कानपुर की ओर सेना की यात्रा में साथ था, लिखता है—“मैंने आज की अंग्रेजी तारीख में खूब शिकार मारा। बागियों को उड़ा दिया। यह याद रखना चाहिये कि जिन लोगों को इस प्रकार फाँसी दी गई या तोप से उड़ाया गया, वे सशस्त्र बागी न थे, बल्कि गाँव के रहने वाले थे, जिन्हें केवल सन्देह पर पकड़ लिया जाता था। इस कूच में गाँव के गाँव इस क्रूरता के साथ जला डाले गये और इस निर्दयता के साथ निर्दोष ग्रामवासियों का संहार किया गया कि जिसे देखकर एक बार मुहम्मद तुगलक भी शरमा जाता।”

सती चौरा घाट का हत्याकाण्ड

२६ जून को किले के अन्दर के सब अंगरेजों ने अपने आपको नाना के सुपुर्द कर दिया। किला, तोपखाना और भीतर के तमाम अस्त्र शस्त्र और खजाना नाना के हवाले कर दिया गया। नाना की तरफ से वायदा किया गया कि समस्त अंगरेजों को किश्तियों में बैठा कर और मार्ग के लिये रसद दे कर इलाहाबाद भेज दिया जायगा।

उसी रात को चालीस किश्तियों का प्रबन्ध कर दिया गया। उनमें रसद का सामान रख दिया गया। २७ तारीख को सबरे अंगरेजी भण्डा किले पर से उतार लिया गया। सम्राट् बहादुर शाह का भंडा उसकी जगह फहराने लगा और समस्त अंगरेजों को हाथियों और पालकियों में बिठलाकर



नाना साहेब

किले से डेढ़ मील दूर सती चौरा घाट पर पहुँचा दिया गया ।

किंतु इस बीच इलाहाबाद और उसके आस पास के इलाके से असंख्य मनुष्य, जिनके घरद्वार, सम्बन्धियों और बाल बच्चों को जनरल नील के सिपाहियों ने जलाकर खाक कर दिया था, कानपुर नगर में आ आकर एकत्रित हो रहे थे । इन लोगों के बयानों और इलाहाबाद में कम्पनी की सेना के अत्याचारों को सुन सुन कर कानपुर की जनता और वहाँ के देशी सिपाहियों का क्रोध भड़क रहा था । २७ जून को सबेरे १० बजे किश्तियाँ सती चौरा घाट से चलने वाली थीं । नाना उस समय अपने महल में था । घाट पर सिपाहियों और जनता की भीड़ थी । कहा जाता है कि क्रोध से उन्मत्त सिपाहियों में से किसी एक ने पहले कर्नल इवर्ट्स पर हमला किया । तुरन्त मार काट शुरू हो गई । लगभग समस्त अंगरेज इतिहास लेखक स्वीकार करते हैं कि ज्योंही नाना को इसका समाचार मिला, उसने तुरन्त आज्ञा भेजी कि अंगरेज पुरुषों को मार डालो किन्तु बच्चों और स्त्रियों को कोई हानि न पहुँचाओ ।

नाना की आज्ञा के पहुँचते ही १२५ अङ्गरेज स्त्रियाँ और बच्चे कैद करके सौदा कोठी पहुँचा दिये गये । अङ्गरेज पुरुषों को लाइन बांध कर सती चौरा घाट पर खड़ा किया । उनमें से एक ने जो शायद पादरी था, प्रार्थना की कि मरने से पहले मुझे इजाजत दी जाय कि मैं अपने भाइयों को इंजील में से कुछ ईश्वर प्रार्थना पढ़ कर सुनाऊँ । उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली गई । जब वह ईश्वर प्रार्थना कर चुका तो हिन्दुस्तानी सिपाहियों ने अङ्गरेजों के सिर तलवार से कट कर दिये । अङ्गरेज पुरुषों में से केवल चार एक किश्ती में बैठकर भाग निकले । इस प्रकार ७ जून को कानपुर के अन्दर लगभग १ हजार अङ्गरेज थे, उनमें से २७ जून को केवल चार पुरुष

अपनी फुर्ती द्वारा और १२५ स्त्रियाँ बच्चे नाना साहब की उदारता द्वारा ब्रिन्दा बचे ।

कानपुर में फांसियाँ

१७ जुलाई सन् ५७ को जनरल हेवलाक की सेना ने कानपुर में प्रवेश किया । उस समय चार्ल्स बॉल लिखता है—

“जनरल हेवलाक ने सरहद्दूद्दीलर की मृत्यु के लिये भंयकर बदला चुकाना शुरू किया । हिन्दुस्तानियों के गिरोह के गिरोह फाँसी पर लटका दिये गये । मृत्यु के समय कुछ विप्लव कारियों ने जिस प्रकार चित्त की शान्ति और अपने व्यवहार में ओज का परिचय दिया, वह उन लोगों के सर्वथा योग्य था, जो कि किसी सिद्धान्त के कारण शहीद होते हैं ।”

इनमें से एक व्यक्ति की मिसाल देते हुए चार्ल्स बाल लिखता है कि वह बिना जरा सी भी घबराहट के ठीक इस प्रकार फाँसी के तख्ते पर चढ़ गया जिस प्रकार एक योगी अपनी समाधि में प्रवेश करता है ।

पंजाब का ब्लैक हॉल और अजनाले का कुआँ

२६ नवम्बर पल्टन के कुछ थके हुए सिपाही अमृतसर की एक तहसील अजनाले से ६ मील दूर रावी नदी के किनारे पड़े हुए थे । यह वे सिपाही थे जो ३० जुलाई की रात को लाहौर की छावनी के पहरे से निकल भागे थे । इन लोगों ने विद्रोह में किसी प्रकार का भाग नहीं लिया था, परन्तु केवल सन्देह के कारण इनसे हथियार रखवा लिये गये थे और इन्हें कैद कर लिया गया था । इन निर्दोष सिपाहियों के साथ जुडीशल कमिश्नर सर राबर्ट माण्टगुमरी ने जैसा व्यवहार किया, उसका वर्णन अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर फ्रेड्रिक कूपर ने अपनी

The crisis in the Punjab. नामक पुस्तक में बड़े विस्तार के साथ किया है।

“३१ जुलाई को दोपहर के समय जब हमें मालूम हुआ कि ये लोग रावी के किनारे पड़े हुए हैं तो हमने अजनाले के तहसीलदार को कुछ सशस्त्र सिपाहियों सहित उन्हें घेरने के लिये भेज दिया। शाम को चार बजे के करीब हम ८० या ९० सवारों को लेकर मौके पर पहुँचे। बस फिर क्या था, शीघ्र ही उन थके माँदे लोगों पर गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं। बहुत से उनमें से रावी में कूद पड़े और बहुतेरे बुरी तरह घायल होकर निकल भागे। उनकी संख्या पाँच सौ थी। भूख प्यास के कारण वे इतने निर्बल हो गये थे कि रावी नदी की धार में न ठहर सके। नदी के ऊपर की ओर लगभग १ मील के फासले पर एक टापू था। जो लोग तैरते हुए रावी पार कर गये उन्होंने भाग कर यहाँ शरण ली, पर यहाँ भी भाग्य ने उनका साथ न दिया। दो किशियाँ मौके पर मौजूद थीं। तीन सशस्त्र सवार इन किशियों पर बैठकर उन्हें पकड़ने के लिये भेज दिये गये थे। ६० बन्दूकों के मुँह उनकी तरफ कर दिये। जब उन लोगों ने बन्दूकें देखीं तो उन्होंने हाथ जोड़कर अपनी निर्दोषता प्रकट की और प्राण भिक्षा मांगी। परन्तु उन्हें शीघ्र ही गिरफ्तार कर लिया गया और थोड़े थोड़े कर रावी के उस पार पहुँचा दिए गये। गिरफ्तार होने से पहले करीब ५० के इनमें से निराश होकर रावी में कूद पड़े और फिर न दिखाई दिये। किनारे पर पहुँचकर इन लोगों को खूब कसकर बांध दिया गया और इनकी कण्ठीमालाएँ तोड़ कर पानी में फेंक दी गईं। उस समय जोर की वर्षा हो रही थी, पर उस समय वर्षा में ही उन्हें सिक्ख सवारों की देख रेख में अजनाले पहुँचा दिया गया।

अजनाले के थाने में हमने इनको फाँसी देने के लिये और

गोलियों से उड़ाने के लिये रस्सियों एवं पचास सशस्त्र सिक्ख सिपाहियों का प्रबन्ध कर रखा था। २८२ बंधे हुए सिपाही, जिनमें कि कई एक देशी अफसर भी थे, आधीरात के समय अजनाले के थाने पर पहुँचे। सबको अजनाले के थाने में बन्द कर दिया गया। जो थाने में न आ सके उन्हें पास ही की तहसील में जो कि बिल्कुल नई बनी थी, एक छोटे से गुम्बद में भर दिया गया। यह गुम्बद बहुत तज़ था, पर तो भी उसके दरवाजे चारों तरफ से बन्द कर दिये गये और वर्षा के कारण फाँसी दूसरे दिन सवेरे के लिये स्थगित कर दी गई।

दूसरे दिन बकरीद थी। प्रातःकाल इन अभागों को दस-दस करके बाहर निकाला गया। दस सिक्ख एक ओर वन्दूकें लिये खड़े हुए थे और चालीस उनकी मदद के लिये। सामने आते ही इन लोगों को गोली से उड़ा दिया जाता था।

जब थाना खाली हो गया तो तहसील की बारी आई। जब गुम्बद के २१ सिपाही बन्दूक का निशाना बन चुके तो मालूम हुआ कि बाकी सिपाही गुम्बद में से बाहर नहीं निकलना चाहते। अन्दर जाकर देखा तो ४५ सिपाही पड़े पड़े सिसक रहे थे। अनजाने ही हौलवे ल ब्लैक होल हत्याकाण्ड फिर से दोहराया गया।

शीघ्र ही इन लोगों की लाशें घसीट कर बाहर निकाली गई और उन्हें एक पुराने कुएँ में जोकि अजनाने के थाने से सौ गज के फासले पर था, डाल दिया गया। कुएँ में जो जगह बाकी रही थी वह ऊपर से मिट्टी डलवा कर भर दी गई और उस पर एक ऊँचा टीला बना दिया गया। एक कुआँ कानपुर में है, परन्तु एक कुआँ अजनाले में भी है। जो सिपाही गोली से उड़ा दिये अथवा कुएँ में डाल दिये गये, उनमें से अधिकांश



किश्तियों पर बैठकर इलाहाबाद से भागते हुए हिन्दुस्तानियों पर अंगरेजी सेना का गोले बरसाना



जून १८५७ में बग़ावत के सन्देह पर हिन्दोस्तानी सिपाहियों का तोप के मुँह से उड़ाया जाना ।

हिन्दू थे। उन्होंने मरते समय सिक्खों को गंगा जी की दुहाई देकर बानत मलामत की।”

दिल्ली में क़त्लेआम और लूट

सन् १७ में दिल्ली के पतन के बाद दिल्ली के अन्दर कम्पनी के अत्याचारों के विषय में लार्ड एल्फ़िंस्टन ने सर जान लारेन्स को लिखा है—“मोहासरे के ख़त्म होने के बाद से हमारी सेना ने जो अत्याचार किये हैं, उन्हें सुनकर हृदय फटने लगता है। बिना मित्र अथवा शत्रु में भेद किये ये लोग सबसे एक सा बदला ले रहे हैं। लूट में तो वास्तव में नादिरशाह से बढ़ गये हैं।”

मान्टगुमरी मार्टिन लिखता है—“जिस समय हमारी सेना ने शहर में प्रवेश किया तो जितने नगर निवासी शहर की दीवारों के अन्दर पाये गये, उन्हें उसी जगह संगीनों से मार डाला गया। आप समझ सकते हैं कि उनकी संख्या कितनी अधिक रही होगी, जब मैं आपको बतलाऊँ कि एक एक मकान में चालीस २ पचास २ आदमी छिपे बैठे हुए थे। ये लोग विद्रोही न थे, बल्कि नगर निवासी थे, जिन्हें हमारी दयालुता और क्षमाशीलता पर विश्वास था। मुझे खुशी है कि उनका भ्रम दूर हो गया।”

इसके बाद एक दूसरा अंगरेज लेखक लिखता है:—

“दिल्ली के बाशिन्दों के क़त्ले आम का खुला ऐलान कर दिया गया, यद्यपि हम जानते थे कि उनमें बहुत से हमारी विजय चाहते थे।”

रसल लिखता है:—

“कभी २ मुसलमानों को मारने से पहले उन्हें सूअर की खालों में सीं दिया जाता था, उन पर सूअर की चर्बी मल दी जाती थी और फिर उनके शरीर जला दिये जाते थे और हिन्दुओं का भी जबरदस्ती धर्म भ्रष्ट किया जाता था।

कूका-बलिदान

विप्लव यज्ञ की आहुतियाँ

गुरुरामसिंह का जन्म सन् १८२४ ईस्वी में भैली नगर, जिला लुधियाना में हुआ था। वे युवावस्था में महाराज रणजी-तसिंह की सेना में नौकरी करने के लिये भरती हो गये थे। परन्तु अधिकतर ईश्वरोपासना में विलीन रहने के कारण वे अपना कार्य भी ठीक न कर पाते थे। इसी से त्याग पत्र देकर वे वहाँ से चले आये और गाँव में ही शान्तिपूर्वक भगवद्-भजन करने लगे। भक्ति भाव के कारण आपका नाम बहुत प्रसिद्ध हो गया और लोग दूर-दूर से दर्शनों के लिये आने लगे। आपने समाज की बुराइयों के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया। परन्तु फिर शीघ्र ही यह अनुभव हुआ कि देश की वास्तविक उन्नति राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त किये बिना नहीं हो सकती। इस-लिये उनके धार्मिक उपदेशों में राजनैतिक बातों का भी प्रचार होने लगा। कहते हैं कि श्री रामदास नामी एक साधु ने उन की प्रसिद्धि की बात सुनी तो उनके पास जाकर कहा—“साहब ! यह समय इस तरह वैयक्तिक आनन्द उड़ाने का नहीं है। छोड़िये भक्ति मार्ग को और देश में कर्म शीलता का संचार कर उसे स्वतन्त्र कीजिए। इन्हीं श्री रामदास का जिक्र सरकारी रेकार्ड्स में है। परन्तु फिर एकाएक वे किधर गायब हो गये, यह नहीं जाना जा सका। सरकारी काराखानों में भी कुछ निश्चित रिपोर्ट नहीं है। लोगों का कहना है कि उन्होंने रूस की ओर प्रस्थान कर दिया था। जो हो, गुरु रामसिंह राजनैतिक क्षेत्र में कटिबद्ध होकर उतर आये। इनका धार्मिक सम्प्रदाय अलग बन गया था, जिसके कि वे गुरु समझे जाते थे। वह नाम धारी कहलाता था।

उस समय उन्होंने देश में असहयोग का प्रचार किया। शिक्षा, अदालत, अदि सभी चीजों के बहिष्कार के साथ ही साथ रेल, तार और डाक का भी बहिष्कार कर दिया और डाक का अपना निजी प्रबन्ध कर लिया। यह सब देख कर, सरकार बौखला उठी और उन पर विशेष बन्दिशें लगा दी गई।

परन्तु गुरु रामसिंह ने कार्य क्षेत्र को और भी विस्तृत कर दिया। अधिकतर गुप्त रूप से ही कार्य होने लगा। पंजाब प्रांत को २२ जिलों में विभाजित कर २२ अध्यक्ष नियुक्त कर दिये गये। जो कि अपने संगठन को बढ़ाते और दीक्षा देते जाते थे। कुछ दिनों में ही यह राजनैतिक तथा धार्मिक सम्प्रदाय जोर पकड़ गया। परन्तु बाह्य आडम्बर कम हो जाने के कारण सरकार का सन्देह दूर हो गया और सब बन्दिशें हटा दी गई। यह बात सन् १८६६ की है। बन्दिशें हटते ही उत्साह बढ़ा। लोग उन्मत्त हो उठे। उनके लक्ष्य में और आदर्श में गो रक्षा का भाव बहुत जोरों से मौजूद था।

१८७१ में कुछ कूके वीर अमृतसर से जा रहे थे। गौहन्ताओं से मुठभेड़ हो गई। सब को कत्ल करके वे सीधे भैणी की ओर चल दिये। इधर अमृतसर में सभी प्रतिष्ठित हिन्दु पकड़ लिये गये। गुरु रामसिंह को समाचार मिला। तुरन्त उन लोगों को कोर्ट में जाकर अपना अपराध स्वीकार करने और आत्म समर्पण करने को लौटा दिया गया। लोगों पर इस बात का बहुत प्रभाव पड़ा। सरकार एक व्यक्ति विशेष का यह प्रभाव बढ़ता देख न सकी।

सन् १८७२ में १३ जनवरी को भैणी में माघी का मेला होने वाला था। सहस्रों कूके उधर जा रहे थे। रास्ते में जाते हुए एक कूके का एक गौ के ऊपर मालेर कोटला में मगड़ा हो गया और एक गाय वहीं गिराकर हलाल कर दी गई। वह कूक

और मायूस होकर वहाँ से गया और भरे दीवान में अपनी दुख गाथा कह सुनाई। लोगों में उत्तेजना बढ़ी। सभी ने गुरु रामसिंह से आप्रह किया कि जिस विप्लव की आयोजना इतने दिनों से की जा रही है, वह आज ही आरम्भ कर देना चाहिये। परन्तु पर्याप्त तैयारी न दीखने से गुरुजी उनसे सहमत न हुए। उन्होंने गले में पगड़ी डालकर उन लोगों से शांत रहने की प्रार्थना की। बहुत से लोग उनका अनुनय विनय सुन शांत हो गये, परन्तु १५० व्यक्ति प्रतिहिंसा की आग से जल उठे। वे शांत न हो सके, उन्होंने विद्रोह खड़ा करने की घोषणा कर दी। तब गुरु जी ने एक उपाय सोचा। उन्होंने पुलिस को कहला भेजा कि इन उत्तेजित लोगों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं, अतः इनकी किसी कार्यवाही का उत्तर दायित्व मुझपर न रहेगा। उन्होंने सोचा था कि इससे शेष संगठन बच जायगा तो फिर शीघ्र ही पूरी तैयारी से विप्लव मचा दिया जायगा।

इधर इन लोगों ने मलौध नामक एक किले पर आक्रमण कर एक तोप, कुछ तलवारें और घोड़े निकाल लिये। कहा जाता है कि इस किले के सरदारों ने विप्लव में साथ देने का वचन दे रखा था। उसी भरोसे पर इन लोगों ने उनसे साथ देने का आप्रह किया। परन्तु वे सरदार अपरिपक्व विद्रोह उठता देख, साथ देने का साहस ही न कर पाये। अब इन लोगों ने शस्त्र हासिल करने के ख्याल से उन्हीं के किले पर आक्रमण कर दिया। अगले दिन प्रातःकाल मालेर कोटला शहर पर आक्रमण कर दिया और महल तक में जा घुसे हालांकि वहाँ पहले से ही लोग सतर्क किये जा चुके थे और असंख्य सैनिक पहरे पर नियुक्त थे। लड़ाई हुई। इन लोगों ने खजाने पर आक्रमण किया, परन्तु विशेष कारणों से इन्हें लौटना पड़ा। पीछा हुआ, खूब लड़ाई हुई। ये लोग बड़ी वीरता



१० जून, सन् १८५७ को पेशावर में हिन्दुस्तानी सिपाहियों का तोप के मुंह से उड़ाया जाना । तोप की आवाज के साथ २ धुएँ से ऊपर चारों ओर टांगें, हाथ और सिर उड़ते हुए दिखाई देते थे ।

से लड़े और अन्त में पटियाला रियासत के सीमान्त-स्थित रद नामक गाँव के निकटवर्ती जंगल में लड़ते हुए ६८ व्यक्ति पकड़े गये। उनमें ५० को तो अगले दिन लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर मि० कॉवन ने भालेर कोटला में तोप से उड़ा दिया। बारी बारी से सहर्ष जयनाद करते हुए वे लोग तोप से बंध जाते और एक ही धमाके के शब्द के बाद न जाने वे किधर विलुप्त हो जाते। इस तरह ४६ को तो उड़ा दिया गया, परन्तु पचासवाँ एक तेरह वर्षीय बालक था उसपर दयालु होकर मिसेज कॉवन ने अपने पति से उसे क्षमा करने को कहा। मि० कॉवन ने झुक कर गुरु रामसिंह को गाली बकते झुकते उससे कहा—कि तुम कह दो कि तुम उसके अनुयायी नहीं तो छोड़ दिये जाओगे, परन्तु अपने गुरु के प्रति यह घृणित और कुत्सित शब्द बकते सुन उस बालक को ऐसा क्रोध आया कि तड़प कर पहरे वालों के हाथों से निकल गया और मि० कॉवन को दाढ़ी से पकड़ लिया और तब तक नहीं छोड़ा जब तक कि उसके दोनों हाथ नहीं काट दिये गये और उसे भी वहीं पर ढेर न कर दिया गया।

शेष सोलह व्यक्ति अगले दिन मलौध में फांसी पर लटक दिये गये। जिस आनन्द और हर्ष से वे लोग अपना प्राणोत्सर्ग कर रहे थे, वह देखते ही बनता था। उन लोगों ने, उन निष्फल विद्रोही सैनिकों ने, अपने आदर्श के लिये अपने प्राण दे दिये और निज रक्त से पंजाब के ललाट को और भी गौरव मय बना दिया।

उधर गुरु रामसिंह जी १८१८ के रेजुलेशन के अनुसार गिफ्तार कर लिये गये और बर्मा में निर्वासित करके भेज दिये गये वहीं पर १८८५ में जेल में ही आपका देहावसान हो गया।

खुदीराम बोस

विप्लववादियों के इतिहास का श्रीगणेश मुजफ्फरपुर के लोमहर्षण हत्या काण्ड ही से हुआ था। यह घटना मुजफ्फरपुर में पहले पहल ३० अप्रैल १९०८ को हुई थी। उस समय क्रमशः उत्तेजना का एक स्रोत बहना प्रारम्भ हो गया था।

किसी दिन यही स्रोत प्रबल उच्छ्वास में बांध तोड़ कर ज्वालामुखी के सदृश अनल वर्षा करके आत्म प्रकाश करेगा यह कौन जानता था !

श्री किंग्स फोर्ड साहब ने कलकत्ते में प्रधान प्रेसिडेन्सी मैजिस्ट्रेट के कार्य काल में विप्लववादियों के कतिपय नवयुवकों को राजद्रोहात्मक लेख लिखने के कारण दण्ड दिया था। आप की बदली कलकत्ते से मुजफ्फरपुर हुई थी। आप यहाँ जिला जज बनकर आए थे। आपकी ही हत्या के निमित्त श्री प्रफुल्ल कुमार चाकी और श्री खुदीराम बोस नामक दो नवयुवक कलकत्ते से मुजफ्फरपुर भेजे गये थे।

उपर्युक्त दोनों युवक मुजफ्फरपुर आए और स्टेशन के समीपवर्ती धर्मशाला में जा टिके। वे लोग वहाँ १०—१२ दिन तक रहे और बम मारने का उपयुक्त अवसर ढूँढने लगे।

मुजफ्फरपुर में गोरे साहबों का एक क्लब है, जिसके समीप ही जिला जज श्री किंग्सफोर्ड साहब की कोठी थी। कलकत्ते के पुलिस अधिकारियों को इस षड्यन्त्र की खबर लग चुकी थी, जिसके फलस्वरूप कलकत्ते के पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट को २० अप्रैल १९०८ को श्री किंग्सफोर्ड साहब की रक्षा का प्रबंध करने के लिये लिखा था। उसके बाद ही दो सशस्त्र पुलिसों

का पहरा श्री किंग्सफोर्ड साहब वी रक्षा के लिये पड़ने लगा ।

क्लब में सांयकाल प्रायः सभी गोरे हाकिम मिलते हैं, यह देखकर ही उन दोनों ने श्री किंग्सफोर्ड साहब की हत्या का समय वही उपयुक्त समझा । उन दोनों ने यह सोचा था कि जब साहब गाड़ी पर चढ़कर घर जाने लगेंगे तो उसी समय बम फेंकना ठीक होगा ।

श्री किंग्सफोर्ड साहब जिस फिटन पर चढ़ कर निकलते थे, उसी रंग और कार की गाड़ी स्थानीय अंगरेज वकील श्री पी० के नेडी की भी थी, पर इसकी स्त्रवर चाकी और खुदीराम को न थी । उन दोनों ने तो यह पता लगा लिया था कि किंग्सफोर्ड साहब अमुक रंग की फिटन तथा अमुक रंग के घोड़ों पर चढ़ कर अमुक समय क्लब जाते हैं और वापिस आते हैं ।

३० अप्रैल १९०८ की बात है अंधेरी रात थी । समय साढ़े आठ का था उसी समय प्रफुल्ल चाकी और खुदीराम बोस क्लब के फाटक पर स्थित वृक्षों की ओट में खड़े हो गये । अभाग्यवश केनेडी साहब की स्त्री और लड़की फिटन पर चढ़ कर घर की ओर चलीं । किंग्सफोर्ड साहब के भाग्य अच्छे थे । गाड़ी जैसे बाहर आई, ठीक उसी समय बम फेंका गया । जोरों का धड़ाका हुआ और गाड़ी चूर २ हो गई ।

दोनों महिलाओं को बड़ी चोट आई । साईस तो वहीं बेसुध होकर गिर गया । कुमारी केनेडी तो एक घण्टे के बाद ही मर गई और केनेडी साहब की स्त्री की मृत्यु दूसरी मई को हुई ।

इधर दोनों युवक भाग निकले । शहर में यह खबर बिजली की तरह दौड़ गई । श्री किंग्सफोर्ड साहब की शरीर रक्षा के निमित्त जो दो सशस्त्र पुलिस के सिपाही रखे जाते थे, उस दिन सहसीलदार खाँ और फैज़ुल्लाह का पहरा था ।

उन दोनों ने श्री खुदीराम बोस और प्रफुल्ल चाकी को सांय

काल लूब के सामने वाली सड़क पर घूमते हुए देखा था और उन दोनों से चले जाने को भी कहा था ।

थोड़ी देर बाद धमाका का शब्द सुनते ही तहसीलदार खां आगे बढ़ा और दोनों महिलाओं को ज़रूमी देखकर थाने में इस की रिपोर्ट की । उसने उन दोनों (खुदीराम और चाकी) को भागते भी देखा था ।

शहर चारों ओर से घेर लिया गया । उधर खुदीराम और चाकी भाग निकले । रातों रात खुदीराम २५ मील पैदल चलकर बैनी गाँव में पहुँच गया और चाकी भागता २ समस्तीपुर जा पहुँचा खुदीराम और चाकी के हुलिये की ख़बर चारों ओर दे दी गई थी और पकड़ने का वारन्ट भी निकाला जा चुका था ।

खुदीराम बोस एक मोदी की दूकान पर पहली मई १९०८ को फतहसिंह तथा शिवप्रसादसिंह कान्सटिबिलों द्वारा पकड़ा गया । जिस समय वह पकड़ा गया, उस समय उसके पास एक बड़ा खाली तथा एक छोटा भरा हुआ पिस्तौल निकला और ३० कारतूस मिले । बैनी से बोस रेल द्वारा मुजफ्फरपुर लाया गया उस समय स्टेशन पर उसके दर्शनों के लिये सारा शहर उमड़ पड़ा था ।

जब वह स्टेशन पर उतरा तो प्रफुल्ल-वदन था और थी उस के मुख पर हास्य की मधुमयी रेखा । उस समय मुजफ्फरपुर के जिला मजिस्ट्रेट श्री० एच० सी० उडमैन साहब थे । उन से खुदीराम ने बड़ी वीरता से कहा था—“मैंने स्वयं ही बम फेंक कर हत्या की है ।”

उधर प्रफुल्ल चाकी भागता हुआ समस्तीपुर जा पहुँचा । स्थानीय श्री० शिवचन्द्र चैटर्जी वकील का नाती श्री० नन्दलाल बनर्जी सिंहभूमि में उन दिनों पुलिस सब इन्स्पेक्टर था । वह छुट्टी में मुजफ्फरपुर आया था और हत्या के दिन मुजफ्फरपुर



बन्दी वेश में खुदीराम बोस



श्री० काशीराम



श्री० करतारसिंह

ही में था। वह हत्या के दूसरे दिन अर्थात् पहली मई १९०८ को नौकरी पर सिंहभूमि जा रहा था, दैवयोग से उसी ट्रेन से प्रफुल्ल चाकी भी कलकत्ते के लिये समस्तीपुर में सवार हुआ। नन्दलाल मुजफ्फरपुर में की गई कल की हत्या का समाचार सुन ही चुका था, इसलिये समस्तीपुर में चाकी को गाड़ी में सवार होते देख उसके कान खड़े हो गये।

नन्दलाल चाकी से बातें करने का बहाना ढूँढ़ने लगा, यह चाकी को बहुत अखरा। वह उस गाड़ी से उतर कर दूसरे डिब्बे में जा बैठा। इधर नन्दलाल ने चाकी के हुलिये की खबर तार द्वारा मुजफ्फरपुर दे दी और मुकामा में चाकी को पकड़ने का उसे एक तार मिला। मुकामा पहुँचने पर नन्दलाल ने चाकी से कहा कि मैं आपको सन्देह पर गिरफ्तार करने आया हूँ।

वह प्लेट फार्म पर पकड़ा गया। चाकी ने एक पर पिस्तौल चलाया पर निशाना खाली गया। अन्त में अन्य उपाय न देख कर प्रफुल्लकुमार ने रिवाल्वर से आत्मघात कर विप्लववादियों के उच्चतम चरित्र का दिग्दर्शन करा दिया।

यथा समय खुदीराम बोस पर मुकद्दमा चला और इन्डियन पेनलकोड की धारा ३०२ इस पर लगाई गई। वह दौरा सुपुर्द हुआ और स्पेशल जज श्री० कानूँ डफ़ द्वारा मुकद्दमे का विचार हुआ। सरकार की ओर से श्री० मानुक तथा श्री विनोद मजूमदार पैरवी करने के लिये आये थे।

खुदीराम की ओर से पहले तो एक भी वकील पैरवी करने के लिये तैय्यार नहीं हुआ था। अन्त में श्री० कालीदास बोस तैय्यार हो गए। उस स्थिति में काली बाबू ही ऐसे उत्साही सज्जन का काम था, जिन्होंने खुदीराम बोस की ओर से बहस की। मुकद्दमा ८-१० दिनों तक चला। उस समय खुदीराम की

अवस्था केवल १८ वर्ष की थी और दूध के दांत अभी भी पूरे नहीं टूटे थे ।

उसे फाँसी की सजा मिली । इस फैसले के विरुद्ध माननीय श्री० ब्रोट तथा श्री रिम्स के इजलास में हाईकोर्ट में अपील हुई ।

अपील ८, ६, १३ जुलाई १९०८ को सुनी गई और फाँसी की सजा बहाल रही ।

इधर खुदीराम बोस बहुत प्रसन्न बदन था । वह कभी भी उदास नहीं हुआ, क्योंकि उसने तो हथेली पर जान रख कर ही यह खेल खेला था ।

फाँसी का दिन ११ अगस्त १९०८ निश्चित हुआ था । खुदीराम ने जेल से श्री० कालीदास बोस से अपनी अन्त्येष्टी क्रिया करने की प्रार्थना की और जिला मजिस्ट्रेट ने भी यह प्रार्थना मंजूर करली ।

१० अगस्त १९०८ की बात है । दूसरे दिन खुदीराम बोस को फाँसी होने वाली थी । उसके मृतक दाह संस्कार का भार काली बाबू के ऊपर पड़ा था ।

बहुतों के मन में विचार तरंगे उठ रही थीं कि प्रभात होते ही खुदीराम की जीवन लीला समाप्त हो जायगी ।

जेल से बाहर पुलिस का कड़ा पहरा था । दर्शनार्थियों की संख्या अवर्णनीय थी ।

एक हाथ में गीता लेकर खुदीराम फाँसी के तख्ते पर हंसता हंसता जा खड़ा हुआ और देखते ही देखते उसके प्राण पखेरू उड़ गये ।

लोग कहते हैं कि उस दिन तपस्वी खुदीराम का दिव्य स्वरूप देखने ही योग्य था । उसके घुंघराले बालों ने प्रशस्त लल्लाट को ढंक लिया था, अधखुले नेत्रों से मरने पर भी

मानो अमृत ढलक रहा था। दृढ़बद्ध ओष्ठपुटों में संकल्प की जाम्रत रेखा फूटी पड़ती थी।

एक सुसज्जित शैय्या पर खुदीराम को शयन करा ललाट पर चन्दन लगा दिया गया और बिछौने के चारों ओर पुष्प मालाएँ लटका दी गई थीं। उस नूतन वेष में खुदीराम ऐसा मालूम पड़ता था मानो वह एक मधुर हास्य हंस रहा हो। अन्त्येष्टी क्रिया के लिये लोग उसे घाट पर ले चले। सम्मुख सागर तरङ्गों की तरह नरमुण्ड दर्शनार्थ उमड़ा आ रहा था। वृहत् जन समूह खुदीराम की श्मशान यात्रा में सम्मिलित हुआ था।

सुन्दर चिता बनाई गई। धू धू करके चिता जल उठी। काली बाबू ने ही सुगन्धित पदार्थ, काष्ठ और घृत की आहुति दी।

अस्थि सूर्ण और भस्म के लिये परस्पर छीना ऋपटो होने लगी। कोई सोने की डिब्बी में, कोई चांदी के और कोई हाथी-दांत के छोटे छोटे डिब्बों में वह पुनोत भस्म भर ले गए। एक मुट्ठी भस्म के लिये हजारों स्त्री पुरुष प्रमत्त हो उठे थे।

खुदीराम ने अपनी जान पर खेल कर इस प्रकार भारत जननी पर अपनी भक्ति-श्रद्धांजलि अर्पित की।

कन्हार्लाल दत्त

तुम्हें जिनसे ख्वाहिशें दुश्मनी, तेरी आरजू भी अजीब है।
वो हैं तस्त पे तू है खाक पे, वो अमीर हैं तू गरीब है।

×

×

×

×

कन्हार्लाल सचमुच ही विप्लव-युग का कन्हार्लाल था। १८८७ की

कृष्णाष्टमी की काली अंधियारी रात में उसने पहले पहल इस दुनिया की रोशनी देखी थी । उस दैवी ज्योति के आलोक से एक बार फिर भारत के प्राण जगमगा उठे । विपत्तियों के हृदय दहल गये और इतिहास के पृष्ठ खून से तरबतर हो गये । वह ऐसा प्रकाश था, जिसकी आभा आज तक कम न हुई, प्रत्युत दिनों दिन बढ़ती ही चली गई । आज कन्हैया का पार्थिव शरीर हमारे बीच में नहीं है, फिर भी उसका मूर्तिमान् आदर्श बरबस हमारे हृदयों को अपनी और आकर्षित कर रहा है । To See him was to love him की बात अक्षरशः सत्य थी । बचपन से ही उसके ढंग औरों से निराले थे । पढ़ने लिखने में वे प्रायः सब से प्रथम ही रहा करते थे और स्कूल के सभी लड़के उनसे विशेष स्नेह रखते थे दीन दुखियों से तो उन्हें कुछ विशेष सहानुभूति थी और एक धनी मानी के घर जन्म लेकर भी वे प्रायः निर्धन विद्यार्थियों के साथ ही रहा करते थे । आज किसी के लिये किताबें खरीदी जा रही हैं, तो कल एक और के लिये कपड़ों का प्रबन्ध हो रहा है, और परसों किसी तीसरे के लिये भोजन की व्यवस्था की जा रही है । सारांश यह कि कन्हैया बड़ा उदार चरित तथा दयावान् था और देश सेवा के भाव उस कोमल हृदय में वचपन से ही अङ्कुरित हो उठे थे ।

बम्बई और बंगाल में शिक्षा पाकर ग्रेजुएट होने के बाद कन्हैया यह कहकर कि नौकरी की तलाश में कलकत्ते जाता हूँ, घर से निकल पड़े । विदा होते समय उनकी माता ने स्वप्न में भी यह न सोचा था कि उनका प्यारा कन्हैया किसी और ही उद्देश्य को लेकर कलकत्ते जा रहा है ।

स्वदेशी आन्दोलन समाप्त हो चुका था और क्रान्ति का धुआँ छिपे छिपे बंगाल में जोरों के साथ फैल रहा था । आघात

पर आघात लगने से बंगाल में एक मर्मभेदी आतनाद घहरा उठा। घर बार पर लात मार कर बंगाली युवकों ने प्राणों की बाजोलगानी शुरू की। अंकुर तो उग ही चुका था, अब परिस्थिति अनुकूल पाकर उसने विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लिया। माता की ममता, पिता का प्रेम, धन वैभव का लोभ अथवा मृत्यु का भय अब कन्हैयालाल को अपने कर्त्तव्य से अलग न कर सका। उसने अन्त समय तक पर्वत की भांति गंभीर रह कर अपने कर्त्तव्य का पालन किया। उस समय विप्लव कार्य को देश व्यापी बनाने के लिये कन्हैयालाल ने जिस संलग्नता के साथ प्राणपण से अधिक परिश्रम किया था, वह बिरले ही लोगों में दिखाई देता है।

चन्द्रनगर में विप्लव का केन्द्र स्थापित कर, सन् १९०७ में कन्हैयालाल कलकत्ते आ गया। कुछ दिन मानिकतल्ला बाग में श्री० उपेन्द्र आदि के पास रहकर उसे चटगांव के एक कारखाने के प्रचार के लिये जाना पड़ा किन्तु एक अमीर का लड़का आखिर कुली बनकर कब तक छिपा रह सकता था। अस्तु, कुछ ही दिनों बाद उसे फिर वापस आना पड़ा। इस बार मानिकतल्ला न जा कर उसने एक बम की फैक्टरी में अपना अड्डा जमाया। उसे केवल धर्म चर्चा अच्छी न लगती थी, वह तो काम चाहता था।

मई, सन् १९०८ के आरम्भ में उक्त बाग की तलाशी लो गई और गिरफ्तारियां शुरू हो गईं। कन्हैयालाल भी पकड़ कर अलीपुर जेल में लाया गया। जेल में एक ही प्रकृति वाले कितने ही नवयुवकों का काफी जमाव हो गया। काम तो कुछ था नहीं, अतएव कहीं धर्म की चर्चा होने लगी तो कहीं दो चार ने राजनीति पर बहस शुरू कर दी। नित्य ही विवाद हुआ करता था, किन्तु कन्हैयालाल ने कभी भी उसमें भाग न लिया। सब को तंग करना

तथा सोना, यही उसके दो मुख्य काम थे। जिस समय नरेन्द्र गोसाईं के बारे में बात छिड़ती तो कोई कहता कि उसे मृत्यु दण्ड हो और कोई किसी अन्य प्रकार के दण्ड का विधान तैयार करता, किन्तु उस समय भी कन्हारई ने कभी एक बात भी न कही।

एक दिन अचानक कन्हारई के पेट में बड़े जोरों का दर्द होने लगा और उसे अस्पताल भेज दिया गया। सत्येन्द्रकुमार खांसी आने के कारण पहले ही से वहीं पर थे। उन्होंने नरेन्द्र से अपने सरकारी गवाह बनने की इच्छा प्रकट की। उन पर विश्वास कर एक दिन नरेन्द्र एक अंग्रेज की संरक्षता में उनसे कुछ सलाह करने आया। अच्छा अवसर हाथ आया देख सत्येन्द्र ने उस पर फायर कर दिया। गोली पैर में लगी, किन्तु नरेन्द्र गिरा नहीं। उसे भागते देख कन्हारई आगे बढ़ा, पर उस अंग्रेज ने उसे पकड़ लिया। कन्हारईलाल ने उस पर भी गोली चलाई और वे महाशय हाथ घायल हो जाने के कारण अलग खड़े होकर चिल्लाने लगे। नरेन्द्र को अस्पताल से बाहर होते देख, कन्हारई ने उसका पीछा किया। फाटक पर पहरेदार ने रिवाल्वर देखकर स्वयं ही दरवाजा खोल दिया और उंगली के इशारे से यह भी बता दिया कि नरेन्द्र उस ओर गया है। इस बार नरेन्द्र को देखते ही उसकी पिस्तौल दनादन गोलियां उगलने लगी। उस समय किसी को भी उसकी उग्र मूर्ति का सामना करने का साहस न हुआ। जेल के और कर्मचारी तो इधर उधर छिप गये, किन्तु जेलर साहब मुसोबत में आगये। बेचारा अपने मोटे ताजे शरीर के आधे भाग को एक लकड़ी की तिपाई के नीचे छिपाकर पड़ रहा। नरेन्द्र के गिर जाने पर जब उसकी पिस्तौल खाली हो गई तो उसे गिरफ्तार कर लिया गया। अभियोग चलने पर इन दोनों को ही फांसी की सजा हुई। १० नवम्बर, सन् १९०८

तक, जिस दिन उन्हें फांसी दी गई थी, उनका वजन १६ पाउन्ड बढ़ गया था ।

कन्हाई के फांसी के दिन का वर्णन श्री मोतीलाल राय ने बड़े ही करुणाजनक शब्दों में किया है, अतएव उसे उन्हीं के शब्दों में हम प्रस्तुत करते हैं।

“कन्हाईलाल का शव लेने के लिये हम लोग धीरे २ एक अंग्रेज के पीछे चल दिये । उस समय शोक और दुःख से सारा शरीर कांप रहा था । धीरे २ लोहे के फाटक को पार कर हम लोगों ने भीतर प्रवेश किया । सहसा उस व्यक्ति ने उंगली से एक कमरा दिखाया । उसी छोटे कमरे में सिर से पैर तक काले कम्बल से ढका हुआ कन्हाईलाल का मृत शरीर पड़ा था । हम लोगों ने उसे आंगन में लाकर रखा । किसी को भी ऊपर का कम्बल उतारने का साहस न हुआ । आशु बाबू की आंखों से आंसुओं की झड़ी लग गई । एक एक कर सभी रोने लगे । उस समय उस गोरे ने कहा—‘रोते क्यों हो ? जिस देश में ऐसे वीर युवक जन्म लेते हैं वह देश धन्य है । जन्म लेकर मरना ही होगा । इस प्रकार की मृत्यु मनुष्य कब पाते हैं ।’ हम लोग विस्मित नेत्रों से उसकी ओर देखने लगे । साहब ने शव बाहर ले जाने को कहा । हमने डरते २ कम्बल उतारा । ओह, उस दिव्य स्वरूप का परिचय कराना हमारी शक्ति से परे है । लम्बे २ बालों ने प्रशस्त ललाट को ढक लिया था । अधखुली आंखों से उस समय भी अमृत ढलक रहा था । दृढ़-बद्ध ओष्ठ-पुटों में सकल्प की जाग्रत रेखा फूटी पड़ती थी, फूलों आदि से सजाये जाने पर ऐसा जान पड़ता था, मानों वह एक मधुर हंसी हंस रहा हो ।

उस दिन जेल के बाहर उसके स्वागत के लिये मानव समुद्र उमड़ आया था । बाहर आते ही वन्देमातरम् की आवाज के साथ ही फूलों की वर्षा होने लगी । कन्हाई की शमशान यात्रा

के समय इतना जन समूह उमड़ आयगा, इसकी आशा न थी ।

एक छोटी वक्तृता के बाद चिता में आग दे दी गई और कुछ घण्टों के बाद वहां राख के एक ढेर के सिवा और कुछ न रहा । उस समय चिता की एक मुट्ठी भस्म पाने के लिये लोगों में एक प्रकार की छीना झपटी सी मच गई । मैं भी आस्थि का एक टुकड़ा चांदी की डिब्बी में रखकर घर वापस आया ।

आधीरात का समय था । ऐसा जान पड़ा कि घर एक प्रकार की दुर्गन्धी से भरा है । मैं भयभीत होकर उठ बैठा । उस समय कन्हारई की विधवा माता का करुण-क्रन्दन हृदय को विदीर्ण करने लगा । मैं घुटने टेक कर बैठ गया और उस वीर प्रसविनी विधवा की चरण रज मस्तक में लगा ली, और करुण स्वर से कहा—“वन्देमातरम् ।”

— — —

करतारसिंह

करतारसिंह की आयु उस समय २० वर्ष की भी न होने पाई थी, जब उन्होंने स्वतंत्रता देवी की बलिवेदी पर निज रक्ताञ्जलि भेंट कर दी । आंधी की तरह वे एकाएक कहीं से आए, आग भड़काई, सुषुप्त रण-चण्डी को जगाने की चेष्टा की, विप्लव-यज्ञ रचा और अन्त में स्वयं भी उसी में स्वाहा हो गये । वे क्या थे, किस लोक से एकाएक आ गये थे और फिर भट से किधर चले गये, हम कुछ भी समझ न सके । १६ वर्ष की छोटी अवस्था में ही उन्होंने इतने भारी कार्य कर दिये कि सोचने पर आश्चर्य होता है । इतना साहस, इतना आत्म विश्वास, इतना आत्म त्याग, इतनी तत्परता, इतनी लगन बहुत कम देखने को मिलेगी । भारतवर्ष में वास्तविक विप्लवी कहे जाने

वाले बहुत कम व्यक्ति पैदा हुए हैं। परन्तु उन इने गिने विप्लवियों में भी श्री० करतारसिंह सर्वतोमुखी हैं। उनकी नस-नस में विस्रव समा गया था। उनके जीवन का एकमात्र आदर्श उनकी एकमात्र अभिलाषा, एकमात्र आशा जो भी था, यही विस्रव था इसी के लिए वे जिये और अन्त में इसी के लिये वे मर गये।

सन् १८६६ में आपका जन्म सराबा नामक गांव (जिला लुधियाना) में हुआ था। आप माता पिता के एकलौते पुत्र थे। बड़े लाड़-चाव से पालन-पोषण हो रहा था। अभी बिल्कुल छोटी अवस्था थी कि पिता का देहान्त हो गया। परन्तु आपके दादा ने बड़े यत्न से आपको पाला। आपके पिता का नाम सरदार मंगलसिंह था। आप के एक चाचा तो संयुक्त प्रान्त में पुलिस सब इंस्पेक्टर थे और दूसरे उड़ीसा के मुहकमा जंगलात के किसी ऊंचे पद पर कार्य करते थे। करतारसिंह पहले तो अपने गांव के ही प्राइमरी स्कूल में पढ़ते रहे, बाद में लुधियाना के खालसा हाईस्कूल में दाखिल हुए। पढ़ने लिखने में बहुत तेज नहीं थे, किन्तु कुछ ऐसे बुरे भी न थे। शरारती बहुत थे, हर एक की जान पर छेड़खानी से आफत बनाये रहते। आपको सहपाठी “अफलातून” कहा करते थे। सभी लोग आपसे बहुत प्यार करते थे। स्कूल में आपका एक जुदा गुट था। खेलों में आप अगुआ थे। नेतागिरी के सभी गुण आप में विद्यमान थे। नवम श्रेणी तक वहीं पढ़ कर फिर अपने चाचा के पास उड़ीसा चले गये। वहां जाकर मैट्रीक्युलेशन पास किया और कालिज में पढ़ने लगे। ये वही १६१०-११ के दिन थे। उधर आपको स्कूल कालेज के कोर्स के संकीर्ण दायरे से बाहर की बहुत सी पुस्तकें पढ़ने का सुअवसर मिला। आन्दोलन के दिन थे। उसी वायुमण्डल में रहकर आपके देश तथा स्वतन्त्र प्रेम के भाव और भी प्रबल हो उठे

अमेरिका जाने की इच्छा हुई। घर वालों ने बहुत हुज्जत नहीं की। आपको अमेरिका भेज दिया गया। सन् १९१२ में आप सानफ्रानसिस्को बन्दर पर पहुँचे। इमिग्रेशन विभाग वालों ने विशेष पूछ ताछ के लिये आपको रोक लिया।

आफीसर के पूछने पर आपने कहा—यहां पढ़ने के लिये आया हूँ।

आफीसर ने कहा—“क्या हिन्दुस्तान में पढ़ने का स्थान तुम्हें नहीं मिला।”

उत्तर दिया—“मैं उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिये ही कैलीफोर्निया के विश्वविद्यालय में दाखिल होने के विचार से आया हूँ।”

“और यदि तुम्हें अमेरिका में न उतरने दिया जाय, तो ?”

इस प्रश्न का उत्तर करतारसिंह ने बहुत सुन्दर दिया। आपने कहा—“तो मैं समझूंगा कि बड़ा भारी अन्याय हुआ। विद्यार्थियों के रास्ते में ऐसी अड़चनें डालने से तो संसार की उन्नति रुक जायगी। कौन जानता है कि मैं ही यहां शिक्षा पाकर संसार की भलाई का बड़ा भारी कार्य करने में समर्थ न हो सकूँ। और उतरने की आज्ञा न मिलने पर संसार उससे वंचित नहीं रह जायगा।”

आफिसर महोदय ने इस उत्तर से प्रभावित होकर उतर जाने की आज्ञा दे दी।

स्वतन्त्र देश में जाकर कदम कदम पर आपके सुकोमल हृदय पर आघात लगने लगे। Damn Hindoo और Black Coolie आदि शब्द उन उन्मत्त गोरे अमेरिकनों के मुँह से सुनते ही वे पागल से हो उठे। उन्हें पद पद पर देश का अभिमान अखरने लगा। घर याद आने पर पराधीन, जंजीरों से

जकड़ा हुआ, अपमानित, लुटा हुआ, निःशक्त भारत आंखों के सामने आ जाता। वह कोमल हृदय धीरे धीरे सख्त होने लगा और देश की स्वतन्त्रता के लिये जीवन अर्पण करने का निश्चय धीरे धीरे दृढ़ होता गया। उस समय के उस भावुक हृदय के वेग को हम क्या समझेंगे।

अब वे चैन से बैठ सकते, यह असम्भव था। अब चुपचाप शांति से काम न चलेगा। देश कैसे स्वतन्त्र हो यही एक मुख्य प्रश्न उनके सामने आ गया। और अधिक सोचे बिना ही उन्होंने वहीं भारतीय मजदूरों का संगठन शुरू कर दिया। उनमें स्वतन्त्रता प्रेम का भाव जाग्रत करने लगे। हर एक के पास घण्टों बैठकर समझाना, इस अपमानित पराधीन जीवन से तो मृत्यु हजार दर्जे अच्छी है। कार्य आरम्भ होने पर कुछ और लोग भी उनके साथ आ मिले और मई १९१२ में इन लोगों की एक सभा हुई। कोई ६ सज्जन रहे होंगे। सबने तन मन धन देश की स्वतन्त्रता पर निछावर करने की प्रतिज्ञा की। इधर इन्हीं दिनों पंजाब के निर्वासित देशभक्त सरदार भगवानसिंह वहीं पहुँच गये। धड़ाधड़ सभाएँ होने लगीं। उपदेश होने लगे। कार्य होता रहा। क्षेत्र तैयार होता गया।

फिर अपने सम्वाद पत्र की आवश्यकता अनुभव हुई। 'ग़दर' नामक पत्र निकाला। उसका पहला अंक पहली नवम्बर १९१३ को प्रकाशित हुआ था। उस पत्र के सम्पादकीय विभाग में करतार सिंह भी थे। आप जोरों से लिखा करते थे। इसे सम्पादक गण स्वयं ही हैण्ड प्रेस पर छापते भी थे। करतारसिंह मतवाले विद्रोही युवक थे। हैण्ड प्रेस चलाते २ थक जाने पर वे पंजाबी गीत गाया करते—

सेवा देश दी जिंदगिए बड़ी औखी,
 गल्लाकरनियां ढेर सुखल्लियां ने ।
 जिन्हां इस सेवा बिच पैर पाया,
 उन्हां लख मुसीबतां भल्लियां ने ।

अर्थात्—“अरे दिल, देश की सेवा बड़ी मुश्किल है, बातें बनाना बड़ा आसान है । जो लोग इस सेवा मार्ग पर अग्रसर हुए, उन्हें लाखों विपत्तियां भेलनी पड़ीं ।”

करतारसिंह उस समय जिस चाव से मिहनत करते थे—
 कठिन परिश्रम करने पर भी जिस तरह हंसते-हंसाते रहते थे,
 उससे सभी का उत्साह दूना हो जाता था ।

भारत को किस तरह स्वतन्त्र करवाना होगा, यह और किसी को पता हो अथवा न हो, किसी ने इसके सोचने में मगज पच्ची की हो अथवा नहीं, पर हमारे नायक ने तो खूब सोच रखा था । इसी से तो उसी बीच में आप न्यूयार्क की हवाई जहाजों की कम्पनी में भरती हुए और वहां दत्तचित्त से हवाई जहाज चलाना, मरम्मत करना और बनाना सीखने लगे । शीघ्र ही इस कला में वे दक्ष हो गये । सितम्बर १९१४ में कामागाटा मारु जहाज को नृशंस गोरे शाही के हाथों अकथनीय कष्ट सहन करने के बाद लौटना पड़ा था, तभी हमारे नायक करतारसिंह, कोई एक बिसवी मि० गुप्ता तथा एक अमेरिकन अनारकिस्ट ‘जैक’ को साथ लेकर हवाई जहाज पर जापान आये थे और कोब में बाबा गुरुदत्तसिंह जी से मिलकर सब बातचीत कर गये थे ।

युगान्तर आश्रम सानफ्रान्सिस्को के गदर प्रेस में गदर तथा उसके अतिरिक्त गदर दीं गूँज इत्यादि अनेक पुस्तकें छपती और बटती गईं । प्रचार जोरों से होता गया, जोश बढ़ा ।

फरवरी १९१४ में ही स्टॉकटन की सार्वजनिक सभा में तिरङ्गा झंडा फहराया गया, तभी स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व के नाम पर शपथें ली गईं। उस सभा के प्रभावशाली वक्ताओं में तरुण करतार भी थे। घोर परिश्रम तथा गाढ़े पसीने की कमाई को देश की स्वतन्त्रता के लिये खर्च करने का निश्चय सभी श्रोताओं ने घोषित कर दिया। ऐसे ही दिन बीत रहे थे। एका-एक योरोप में महाभारत छिड़ने का समाचार मिला। अब क्या था, आनन्द और उत्साह की सीमा न रही। एकाएक सभी गाने लगे—

चलो चल्लिये देशनूँ युद्ध करन
एहो आखिरी वचन ते फर्मान होगये ॥

अर्थात्—“चलो, देश को युद्ध करने चलें, यही है आखिरी वचन और फर्मान।”

विद्रोही करतार ने देश को लौटने का प्रचार जोरों से किया और फिर स्वयं भी “निथन मारू” जहाज द्वारा अमेरिका से चल दिये और १५—१६ सितम्बर १९१४ को कोलम्बो पहुँच गए। उन दिनों पंजाब तक पहुँचते न पहुँचते साधारणतया अमेरिका से आने वाले ‘भारत रत्ना कानून’ की गिरफ्त में आ जाते थे। बहुत कम आदमी स्वतन्त्र रूप से पहुँच सकते। करतारसिंह सही सलामत आ पहुँचे। बड़े जोरों से कार्य शुरू हुआ। संगठन की कमी थी परन्तु जैसे तैसे वह भी पूरी की गई। दिसम्बर १९१४ में पिंगले—मराठावीर—भी आ पहुँचा। उसी के प्रयत्न से बनारस षड्यन्त्र के अभिनेता श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल तथा रासबिहारी पंजाब में आए। कार्य संगठित होना शुरू हुआ। करतारसिंह हर जगह, हर समय मौजूद होते। आज मोगा में गुप्त समिति की मीटिंग है तो वहाँ पर आप विद्यमान हैं, कल

लाहौर के कालिजों के विद्यार्थियों में प्रचार हो रहा है। परसों किसी डकैती के लिये शस्त्र लिये जा रहे हैं। अगले दिन फिरोजपुर छावनी के सिपाहियों से जोड़-तोड़ हो रहा है। अगले रोज कलकत्ते शस्त्रों के लिये जा रहे हैं। कमी का प्रश्न उठने पर आपने एक के यहां डकैती का प्रस्ताव किया। डाके का नाम सुनते ही विद्रोही वीर सन्न हो गये, परन्तु आपने कह दिया—“कोई डर नहीं है। भाई परमानन्द भी डकैती से सहमत हैं।” पूछ आने का भार आपको सौंपा गया। अगले दिन, बिना मिले ही जाकर कह दिया—“पूछ आया हूँ। वे सहमत हैं।”

विद्रोह की तैयारी में केवल धनाभाव के कारण कुछ देर हो, यह वह सहन नहीं कर सकते थे। उस दिन वे लोग डकैती के लिये रब्बों नामक गांव में गये थे। करतार अध्यक्ष थे। डकैती हो रही थी। घर में एक अत्यन्त सुन्दर युवती भी थी। उसे देख कर एक पापात्मा साथी का मन विचलित हो गया। उसने लड़की का हाथ पकड़ लिया। उस कामलोलुप नर पशु की आकृति देख लड़की घबरा गई और उसने जोर से चीत्कार कर दिया। तुरन्त तरुण करतार रिवाल्वर ताने उसी स्थान पर आ पहुँचे। उस व्यक्ति के माथे पर पिस्तौल रख कर उसे निःशस्त्र कर दिया और फिर क्रुद्ध सिंह की तरह गरज कर कहा—“पामर ! तेरा अपराध बहुत भीषण है। इस समय तुम्हें मृत्यु दी जानी चाहिये। परन्तु विशेष परिस्थितियों के कारण तुम्हें क्षमा करने पर बाध्य हूँ। इसलिये तुरन्त इस युवती के पांव पर सिर रख कर क्षमा प्रार्थना करो कि हे बहिन ! मुझ पापी को क्षमा करो। और उधर माता के चरण पकड़ कर कहो, माता ! मैं इस नीचता के लिये क्षमा चाहता हूँ। यदि ये तुम्हे क्षमा कर देंगी तो तुम्हे जीता छोड़ूंगा, वरना अभी गोली से उड़ा दूंगा।” उसने वैसा ही किया। बात कुछ बहुत बढ़ी

तो थी नहीं। यह देख दोनों स्त्रियों की आंखें भर आईं। मां ने प्यार से करतारसिंह को सम्बोधित कर कहा—“बेटा, ऐसे धर्मात्मा और सुशील युवक होकर तुम इस भीषण कार्य में किस तरह सम्मिलित हुए हो ?” करतारसिंह का भी जी भर आया। कहा—मां, रुपये के लोभ से नहीं, अपना सर्वस्व लगा कर भी डाके ढालने चले थे। हम अंगरेजी सरकार के विरुद्ध विद्रोह करने की तैय्यारी कर रहे हैं। शस्त्र आदि खरीदने के लिये रुपया चाहिये। वह कहां से लें ? मां ! उसी महान् कार्य के लिये आज यह नीच कर्म करने पर हम बाध्य हुए हैं।”

उस समय बड़ा दर्दनाक दृश्य था। मां ने फिर कहा—“इस लड़की की शादी करनी है। इसके लिये रुपया चाहिये। कुछ देते जाओ तो बेहतर हो।” सभी धन उसके सामने रख दिया गया और कहा गया—“जितना चाहिये ले लीजिये।” कुछ धन लेकर शेष सभी उसने स्वयं बड़े चाव से करतारसिंह की झोली में डाल दिया और आशीर्वाद दिया कि ‘जाओ बेटा तुम्हें सफलता प्राप्त हो।’

हकैती जैसे भीषण कार्य में सम्मिलित होने पर भी करतारसिंह का हृदय कितना भावुकतापूर्ण, कितना पवित्र, कितना महान् था, यह उक्त घटना से स्पष्ट है।

बंगाल दल के संसर्ग में आने से पहले ही आपने शस्त्रों के लिये लाहौर छावनी की मेराजीन पर हमला करने की तैय्यारी करली थी। एक दिन ट्रैन में जाते हुए एक फौजी सिपाही से भेंट हो गई। वह मेराजीन का इंचार्ज था। उसने चाबियां दे देने का वादा किया। २५ नवम्बर को आप कुछेक दुःसाहसी साथियों को लेकर वहां जा धमके, परन्तु एकाध दिन पहले उपरोक्त सिपाही के किसी अन्य स्थान को तबादला हो जाने से

सारा कार्य बिगड़ गया। परन्तु दिल छोड़ना, घबरा जाना ऐसे विप्लवियों के चरित्र में नहीं होता।

फरवरी में विद्रोह की तैयारी थी। पहले सप्ताह आप पिगले तथा दो एक अन्य साथियों सहित आगरा, कानपुर, इलाहाबाद, बनारस, लखनऊ तथा मेरठ आदि में गये और विद्रोह के लिये फौजों से जोड़-तोड़ कर आये।

आखिर वह दिन भी निकट आने लगा जिसका विचार आते ही इन लोगों के हृदय हर्ष, चाव तथा भय आदि अनेक भावों से धड़कने लगते थे। २१ फरवरी १९१५ समस्त भारत में विद्रोह मचाने का दिन निश्चित हुआ था। तैयारी इसी विचार से हो रही थी, परन्तु ठीक उसी समय उनके विशाल आशातुर की जड़ में बैठा एक चूहा उसे काट रहा था। तने के एक दम खोखले हो जाने पर आंधी के एक ही थपेड़े से वह ज़मीन पर गिर जायगा, यह वे नहीं जानते थे। चार पांच रोज पहले सन्देह हो गया। कृपाल की कृपा से सब गोबर हो जायगा, इसी भय से करतारसिंह ने रासबिहारी से २१ के स्थान पर १६ फरवरी को ही विद्रोह खड़ा कर देने को कहा था। वैसा ही हो जाने पर भी कृपालसिंह को भेद मालूम हो गया। उस विराट् विप्लवायोजन में उस एक नर पिशाच का अस्तित्व कितना भयानक परिणाम का कारण हुआ। रासबिहारी और करतारसिंह भी यथोचित प्रबन्ध कर अपना भेद न छिपा सके।

पागल करतार पचास साठ व्यक्ति लेकर पूर्व निश्चय के अनुसार १६ फरवरी को फिरोज़पुर छावनी में जा पहुँचे। आज अभी कुछेक घंटों के बाद रणचण्डी का ताण्डव नृत्य प्रारम्भ हो जायगा ! करतारसिंह अपने तिरंगे झण्डे को अभी अभी भारत भूमि में फहरा देंगे। आज ही और अभी गुरु गोविन्द

के अनुयायी करतार तथा उनके सहकारियों में बढ़ चढ़ के मरने मारने की उत्कण्ठा पैदा हो जायगी ।

करतारसिंह छावनी में घुस गये । अपने साथी फौजी हवलदार से मिले । विद्रोह की बात कही । परन्तु कृपाल ने तो पहले ही सब कुछ बिगाड़ रखा था । भारतीय सैनिक निशस्त्र कर दिये गये थे । धड़ाधड़ गिरफ्तारियां हो रही थीं । हवलदार ने साफ इन्कार कर दिया । करतारसिंह का आप्रह व्यर्थ हुआ । निराश, हताश लौट आये । सब प्रयत्न, सब परिश्रम, एक दम व्यर्थ हो गया । पंजाब में गिरफ्तारियों का बाजार गर्म हो गया । विपत्ति में पड़ते ही अनेक विप्लवी अकलमन्द बनने लगे । उन्हें अपने पुराने आदर्श में भ्रम दीखने लगा । आज वह पकड़ा गया, कल वह फूट गया । ऐसी ही दशा में रासू बाबू हताश होकर मुर्दे की नाईं लाहौर के एक मकान में पड़े थे । करतारसिंह भी आकर एक और चारपाई पर दूसरी ओर मुंह करके लेट गये । वे एक दूसरे से कुछ बोले नहीं । परन्तु चुप ही चुप में एक दूसरे के हृदय में वे घुसकर सब समझ गये थे । उनकी उस समय की वेदना का अनुमान हम लोग क्या लगा सकेंगे ।

दूरे तदबीरपर सर फोड़ना शेवा रहा अपना ।

बसीले हाथ ही आए न किस्मत आजमाई के ।

निश्चय हुआ, सभी पश्चिमी सीमा से उस पार लांघकर विदेश चले जाएँ । रासू बाबू कलमा पढ़ने लगे । परन्तु उन्होंने एकाएक निश्चय बदल डाला, वे बनारस चले गये । परन्तु करतारसिंह पश्चिम की ओर चल दिए । वे तीन व्यक्ति थे—श्री करतारसिंह, श्री जगतसिंह, तथा श्री हरनामसिंह टुण्डा, ब्रिटिश भारत की सीमा से पार निकल गये । शुष्क पहाड़ में जाते जाते एक रमणीक स्थान आया । छोटी सी सुन्दर नदी

वह रही थी। उसी के किनारे बैठ गये। चने खोलकर चबाने लगे। कुछ जलपान हो चुकने के बाद करतारसिंह गाने लगे—

बनी सिर शेरों दे, की जाणा भञ्ज के।

भावुक करतार कवि भी थे। अमेरिका में उन्होंने यह कविता लिखी थी। मतलब है “कि शेरों के सर पर आ बनी है, अब भाग कर नहीं जायेंगे?” सुरीली आवाज में यही एक पंक्ति गाई गई थी। झट से रुक गये और बोले—“क्यों जी जगतसिंह, क्या कविता दूसरों के लिये ही लिखी गई थी? क्या हम पर उसका कुछ भी दायित्व नहीं? आज हमारे साथी विपत्ति में फंसे पड़े हैं और हम अपना सर छुपाने की चिन्ता में व्यग्र हो रहे हैं।” एक ने दूसरे की ओर देखा। निश्चय हुआ, भारत लौटकर उन्हें छुड़ाने का प्रयत्न किया जाय, फिर आगे नहीं गये। वहीं से लौट आये। जानते थे, मृत्यु मुंह फाड़े उनकी प्रतीक्षा में खड़ी है। परन्तु इससे क्या होता था? उनकी तो उत्कट इच्छा यही थी कि कहीं कोई घमासान शुरू हो जाय, लड़ते लड़ते प्राण दे दे। सरगोधा के पास चक्र नम्बर/५ में गये। फिर से विद्रोह की चर्चा छेड़ दी। वहीं पकड़े गये। जंजीरों से जकड़ दिये गये। निर्भीक बन्दी विद्रोही करतारसिंह लाहौर स्टेशन पर लाए गये। पुलिस कप्तान से कहा—‘मि० टामकिन, कुछ खाने को तो ला दो।’ ओह, कितना मस्तानापन था। उस सुन्दर मूर्ति को देखकर शत्रु मित्र सभी मुग्ध हो जाते थे। गिरफ्तारी के समय वे बड़े प्रसन्न थे। प्रायः कहा करते थे—“साहस से मर जाने पर मुझे ‘बागी’ का खिताब देना। कोई याद करे तो बागी करतारसिंह कह कर याद करे।”

जेल में बंद होने पर भी उस अशान्त हृदय को शान्ति न

मिली। एक दिन लोहा काटने के यन्त्र मंगवा लिये। ६०-७० अभियुक्तों को इकट्ठा किया। निश्चय हुआ, चार पांच के अलावा—जो कि बिल्कुल निर्बल तथा निर्दोष थे—सभी लोग उसी रात जेल से भाग निकले। बाहर से यह समाचार भी आ गया था कि लाहौर छावनी मेगाजीन के इंचार्ज महाशय सहायता के लिये तैय्यार हैं। निश्चय हुआ कि ५०-६० व्यक्ति जेल से निकलते ही सीधे लाहौर छावनी जायें। उन लोगों की सहायता से मेगाजीन से हथियार निकाल कर सभी को सशस्त्र कर दिया जाय और उसके बाद फिर से विद्रोह किया जाय। विचार था, जेलें तोड़ कर कैदियों को निकाला जाये ताकि वे सभी लोग विप्लव की तैय्यारी में जुट जायें। परन्तु करतारसिंह के लिये उस निराशा और विफलता के युग में ऐसी आशा दुराशा मात्र थी। किसी एक साधारण कैदी को कुछ भेद मिल गया। सभी को कोठरियों में बन्द कर दिया गया। बेड़ियां पहना दी गईं। तलाशी हुई सब चीजें करतार सिंह की कोठरी में पानी की सुराही रखने वाले स्थान के नीचे खुदे हुए एक छेद में मिल गईं। सब प्रयत्न निष्फल हो गया।

अभियोग चला। उस समय करतारसिंह की आयु केवल साढ़े अठारह वर्ष की थी। सभी अभियुक्तों में से आप छोटी अवस्था के थे। परन्तु जज महोदय लिखते हैं:—

He is one of the most important of these 61 accused; and has the largest dossier of them all. There is practically one Department of this conspiracy in America on the voyage, and in India in which this accused has not played his part.

एक दिन आपके बयान देने की बारी आई। आपने सब मान लिया। सब कुछ मानता देख कर जज महोदय लिखने से

रुक गये ! सारा दिन करतारसिंह बयान देते रहे । मुंह में कलम दबाये जज देखते रहे, कुछ लिखा नहीं । बाद में इतना ही कहा—“करतारसिंह आज तुम्हारे बयान नहीं लिखे गए । तुम सोच समझकर बयान दो । तुम जानते हो, तुम्हारे अपने ही बयानों का क्या नतीजा निकल सकता है ?”

देखने वाले बताते हैं, जज के इन शब्दों पर उसने एक अदा से केवल इतना कहा था—फांसी ही लगा दोगे न, और क्या ? “हम उससे डरते नहीं हैं ।”

उस दिन कोर्ट उठ गई । अगले दिन फिर करतार सिंह का बयान शुरू हुआ । जज लोगों की पहले दिन कुछ ऐसी धारणा थी कि करतार सिंह ऐसा बयान भाई परमानंद के इशारे पर दे रहा है । परन्तु वे वैसविक तरुण हृदय के गाम्भीर्य को नहीं समझ पाये थे । करतार सिंह का बयान ज्यादा जोरदार ज्यादा जोशीला तथा पहले दिन की तरह स्वीकृति सूचक था ।

अन्त में आपने कहा—मेरे अपराध के लिये मुझे या तो आजीवन कारागार का दण्ड मिलेगा, या फांसी । परन्तु मैं तो फांसी को ही श्रेय दूंगा । ताकि शीघ्र ही फिर जन्म लेकर भारत स्वतन्त्रता युद्ध के लिये तैयार हो जाऊं । जब तक भारत स्वतन्त्र न होगा, तब तक ऐसे ही बार बार जन्मधारण कर फांसी पर लटकता रहूँ, यही अभिलाषा है । और यदि पुनर्जन्म में स्त्री बना तो भी अपने ऐसे विद्रोही पुत्रों को जन्म दूंगा ।”

आपकी दृढ़ता ने जज लोगों को भी प्रभावित किया, परन्तु उन्होंने एक उदार शत्रु की तरह आपकी वीरता को वीरता न न कह कर ढिठाई के शब्द से याद किया । जज महोदय लिखते हैं ।

He is a youngman, no doubt, but he is certainly one of the worst of these conspirators;

and is a thoroughly Callous Scoundrel, proud of his exploits, to whom no mercy, whatever, can be or should be shown.

वीर और उदार शत्रु पराजित सैनिक से ऐसा व्यवहार नहीं किया करते। परन्तु यहां ऐसा ही हुआ। करतारसिंह को केवल गालियां ही मिलीं हों, सो ही नहीं, मृत्युदण्ड भी मिला। उन्हीं को दूँदते हुए पुलिस वालों के हाथ से पानी पीकर कई बार चम्पत हो जाने वाले वीर करतार विद्रोह के अपराध में मृत्यु दण्ड के भागी बने। आपने वीरता पूर्वक मुस्कराते हुए जज से कहा “Thank you !”

करतार, तुम्हारे जीवन में कौन ऐसी विशेष घटना हो गई थी, जिससे तुम मृत्यु देवी के ऐसे उपासक बन गये ? करतार सिंह फांसी की कोठरी में बन्द हैं। दादा आकर पूछते हैं—करतार सिंह, किनके लिये मर रहे हो ? जो तुम्हें गालियां देते हैं ? तुम्हारे मरने से देश का कुछ लाभ हो, सो भी तो नहीं दीखता।

करतार सिंह ने धीरे से पूछा—“पितामह, अमुक व्यक्ति कहां है ?”

“प्लेग से मर गया।”

“अमुक कहां है ?”

“हैजो से मर गया।”

“तो क्या आप चाहते थे कि करतारसिंह भी महीनों बिस्तर पर पड़ा रह कर दर्द से कराहता हुआ, किसी रोग से मरता ! क्या उस मृत्यु से यह मृत्यु अच्छी नहीं ?” दादा चुप हो गये।

आज दुनिया में फिर प्रश्न उठता है, उनके मरने का लाभ क्या हुआ ? वे किस लिये मरे ? उत्तर स्पष्ट है। मरने के लिये मरे। उनका आदर्श ही देश सेवा में मरना था, इससे अधिक

वे कुछ नहीं चाहते थे। मरना भी अज्ञात रह कर चाहते थे।
उनका आदर्श था—*Unsung, Unhonoured, and un-*
wept.

“चमन जारे मुहब्बत में उसी ने बाग़बानी की,
कि जिसने अपनी मिहनत को ही मिहनत का समर जाना।
नहीं होता है, मोहताज़े नुमायश फ़ैज़ शबनम का,
अंधेरी रात में मोती लुटा जाती है गुलशन में।”

डेढ़ साल तक मुकद्दमा चला। सम्भवतः वह १९१६ का
नवम्बर ही था, जबकि उन्हें फांसी पर लटका दिया गया। वे
उस दिन भी सदा की तरह प्रसन्न थे। उनका वज़न १० पाउण्ड
बढ़ गया था। ‘भारत माता की जय’ कहते हुए वे फांसी के तख्ते
पर चढ़ गये।

सूफ़ी अम्बाप्रसाद

सूफ़ी जी का जन्म १८५८ में मुरादाबाद में हुआ। आपका
दाहिना हाथ जन्म से ही कटा था। आप हंसी में कहा करते थे—
“अरे भाई, हमने सत्तावन में अङ्गरेजों के विरुद्ध युद्ध किया, हाथ
कट गया, मृत्यु हो गई। पुनर्जन्म हुआ। हाथ कटे का कटा आ
गया।”

आपने मुरादाबाद, बरेली और जालन्धर आदि कई शहरों
में शिद्दा पाई। एफ. ए. पास कर लेने के बाद आपने बकालत
पढ़ी, परन्तु की नहीं। आप उर्दू के प्रभावशाली लेखक थे।
आपने यही काम संभाला।

सन् १८६० ई० में आपने मुरादाबाद से ‘जाम्युलइल्म’

नमक उर्दू साप्ताहिक पत्र निकाला। इसका प्रत्येक शब्द इनकी आन्तरिक अवस्था का परिचय देता था। वे हास्यरस के प्रसिद्ध लेखक थे। परन्तु उनमें गम्भीरता भी कम न थी। वे हिन्दू-मुस्लिम एकता के कट्टर पक्षपाती थे और शासकों की कड़ी आलोचना किया करते थे।

सन् १८६७ में आपको राजद्रोह के अपराध में डेढ़ वर्ष का कारागार मिला जब ६६ में छूट कर आये तो यू० पी० के कुछ छोटे २ राज्यों पर अङ्गरेज लोग हस्तक्षेप कर रहे थे। सूफ़ी जी ने वहाँ के अफसरों तथा रेजिडेन्टों का खूब भण्डाफोड़ किया। आप पर मिथ्या दोषारोपण का अभियोग चलाया गया और सारी जायदाद जब्त कर छः साल का कारागार दिया गया। जेल में उन्हें अकथनीय कष्ट सहन करने पड़े। परन्तु वे कभी विचलित न हुए।

सूफ़ी जी जेल में बीमार पड़े। एक गलीज़ कोठरी में बन्द थे। उन्हें औषधि नहीं दी जाती थी। यहां तक कि पानी आदि का भी ठीक प्रबन्ध न था। जेलर आता और हंसता हुआ प्रश्न करता—“सूफ़ी, अभी तक तुम ज़िन्दा हो?” खैर, ज्यों त्यों कर जेल कटी और १६०६ के अन्त में आप बाहर आए।

सूफ़ी जी का निजाम हैदराबाद से घनिष्ठ सम्बन्ध था। जेल से छूटते ही आप वहां गये। निजाम ने उनके लिये एक अच्छा सा मकान बनवाया। मकान बन जाने पर उन्होंने सूफ़ी जी से कहा—“आपके लिये मकान तैयार हो गया है।” आपने उत्तर दिया—“हम भी तैयार हो गये हैं।” आपने वस्त्र आदि उठाये और पंजाब की ओर चल दिये। वहां जाकर आप हिन्दुस्तान अखबार में कार्य करने लगे। आपकी चतुरता, वाक्पटुता और समझदारी देखकर सरकार की ओर से एक हजार रु० मासिक जासूस विभाग से पेश किया गया था, परन्तु आपने उनकी

अपेक्षा जेल और दरिद्रता को ही श्रेष्ठ समझा। बाद को 'हिन्दुस्तान' सम्पादक से भी आपकी न बनी और आपने वहां से भी त्यागपत्र दे दिया।

उन्हीं दिनों सरदार अजीतसिंह ने 'भारतमाता' सोसाइटी की नींव डाली और पंजाब के न्यू कालोनी बिल के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया। सूफ़ी जी का भी मेल उनसे बढ़ने लगा। उधर वे भी इनकी ओर आकर्षित होने लगे।

सन् १९०७ में पंजाब में फिर धर पकड़ आरम्भ हुई, तो सरदार अजीतसिंह के भाई सरदार विशनसिंह और भारत-माता सोसाइटी के मन्त्री महता आनन्दकिशोर सूफ़ी जी के साथ नैपाल चल दिये। वहां नैपाल रोड के गवर्नर श्री जंगबहादुर जी से आपका परिचय हो गया। वे इनसे बहुत अच्छी तरह पेश आये। बाद को श्री जंगबहादुर जी सूफ़ी जी को आश्रय देने के कारण ही पदच्युत कर दिये गये। उनकी सम्पत्ति भी जब्त कर ली गई। खैर, सूफ़ी जी वहां पकड़े गये और लाहौर लाये गये। लाला पिण्डीदास जी के पत्र 'इण्डिया' में प्रकाशित आपके लेखों के सम्बन्ध में ही आप पर अभियोग चलाया गया। परन्तु निर्दोष सिद्ध होने पर बाद में आपको छोड़ दिया गया।

तत्पश्चात् सरदार अजीतसिंह भी छूट कर आ गये और सन् १९०८ में 'भारत माता बुक सोसाइटी' की नींव डाली गई। इसका अधिकतर कार्य सूफ़ी जी ही किया करते थे। आपने 'बागी मसीह' या 'विद्रोही ईसा' नामक एक पुस्तक प्रकाशित करवाई जो बाद को जब्त कर ली गई।

इसी वर्ष लोकमान्य तिलक पर अभियोग चलाया गया और उन्हें भी ६ वर्ष कारागार मिला। तब देशभक्त मण्डल के सभी सदस्य साधु बनकर पर्वतों की ओर यात्रा करने के लिये

निकल पड़े। पर्वतों के ऊपर जा रहे थे। एक भक्त भी साथ आया। साधु बैठे तो उस भक्त ने सूफी जी के चरणों पर शीश नवाकर नमस्कार किया। बड़ा जैन्टिलमैन था। खूब सूट बूट पहिने था। सूफी जी के चरणों पर शीश रक्खा और पूछने लगा—“बाबा जी, आप कहां रहते हैं?”

सूफी जी ने कठोर स्वर में उत्तर दिया—“रहते हैं, तुम्हारे सिर में”

“साधुजी आप नाराज क्यों हो गये?”

“अरे बेवकूफ ! तूने मुझे क्यों नमस्कार किया ? इतने और साधु भी तो थे, इनको प्रणाम क्यों न किया ?”

“मैंने आपको ही बड़ा साधु समझा था।”

“अच्छा खैर, जाओ खाने पीने की वस्तुएं लाओ।”

वह कुछ देर पीछे अच्छे अच्छे पदार्थ लेकर आया। खा पीकर सूफी जी ने उसे फिर बुलाया और कहने लगे “क्यों वे, हमारा पीछा छोड़ेगा या नहीं ?” “भला मैं आपसे क्या कहता हूँ जी ?” “चालाकी को छोड़। आया है जासूसी करने जा, जा, अपने बाप से कह देना कि सूफी पहाड़ में ग़दर करने। जा रहा है।”

वह चरणों पर गिर पड़ा—“हुजूर, पेट की खातिर सब कुछ करना पड़ता है।”

आपने सन् १९०६ में पेशवा अखबार निकाला। उन्हीं दिनों बंगाल में क्रांतिकारी आंदोलन ने जोर पकड़ा। सरकार को चिंता हुई कि कहीं यह आग पंजाब का भी दहन न कर डाले। अस्तु दमन चक्र चलना आरम्भ हुआ। तब सूफी जी, और सरदार अजीतसिंह और ज्याउलहक ईरान चले गये। वहां पहुंच कर ज्याउलहक की सलाह बदल गई। उसने चाहा इन्हें पकड़वा दूं तो कुछ इनाम भी मिलेगा और सज़ा भी न होगी। परन्तु

सूफ़ी जी ताड़ गये। उन्होंने उसे आगे भेज दिया। वह वहाँ रिपोर्ट करने गया और यह दोनों बच निकले।

ईरान में अंगरेजों ने इनकी बहुत खोज की और उन्हें कई प्रकार के कष्ट सहन करने पड़े। कहा जाता है कि वे एक स्थान पर घेर लिये गये। वहाँ से निकलना असम्भव सा हो गया। वहीं व्यापारियों का एक काफ़िला ठहरा हुआ था। ऊँटों पर बहुत से सन्दूक लदे थे। उनमें वस्त्र आदि भरे थे। एक ऊँट के दोनों सन्दूकों में सूफ़ी जी तथा अजीतसिंह को बंद किया गया और वहाँ से बचा कर निकाला गया।

फिर किसी अमीर के घर ठहरे। पता चल गया और वह घर घेर लिया गया। उसी समय उन दोनों को बुरका पहिना ज़नाने में बिठा दिया गया। सब तलाशी ली गई और अन्त में स्त्रियों की भी तलाशी ली जाने लगी। एक दो स्त्रियों के बुरके उठाये भी गये, परन्तु मुसलमान लोग लड़ने मरने के लिये तैय्यार हो गये और फिर अन्य किसी स्त्री का बुरका नहीं उतारने दिया गया। इस तरह वे दोनों यहाँ से भी बचे।

पीछे उन्होंने वहाँ से 'आबेहयात' पत्र निकाला और राष्ट्रीय आन्दोलन में भी भाग लेने लगे। सरदार साहब के टर्की चले जाने पर वहाँ का सारा कार्य इन्हीं के सर आ पड़ा और फिर ये वहाँ पर 'आक्रा सूफ़ी' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

सन् १९१५ में जिस समय ईरान में अंगरेजों ने बिल्कुल प्रभुत्व जमाना चाहा तो फिर कुछ उथल पुथल मची थी। शीराज पर घेरा डाला गया। उस समय सूफ़ी जी ने बायें हाथ से रिवाल्वर चलाकर मुकाबला किया था, परन्तु अन्त में आप अंगरेजों के हाथ आ गये। इन्हें कोर्ट-मार्शल किया गया। फैसला हुआ, कल गोली से उड़ा दिये जाओगे। सूफ़ी कोठरी में बंद थे। प्रातः समय देखा, वे समाधि की अवस्था में थे, परन्तु

उनके प्राण पखेरू उड़ चुके थे। उनके जनाजे के साथ असंख्य ईरानी गये और उन्होंने बहुत शोक मनाया। कई दिन तक नगर में उदासी सी छाई रही। सूफी जी की कब्र बनाई गई। अभी तक हर वर्ष उन की कब्र पर उत्सव मनाया जाता है। लोग इनका नाम सुनते ही श्रद्धा से सर झुका लेते हैं। वे पैर से भी लेखनी पकड़ कर अच्छी तरह लिख सकते थे।

कहते हैं कि जब भोपाल या किसी और स्टेट में रेजिडेन्ट कुछ खराबी कर रहे थे और उसके हड़प करने की चिन्ता में थे तो वहां का भेद प्रकाशित करने के लिये 'अमृत बाज़ार पत्रिका' की ओर से सूफी जी वहां भेजे गये। यह बात १८६० ई० के लगभग की है।

एक पागल सा मनुष्य रेजिडेन्ट के बैरे के पास नौकरी की खोज में आया और अन्त में केवल भोजन पर ही रख लिया गया। वह पागल बर्तन तो साफ़ करता तो मिट्टी में लतपत हो जाता। मुंह पर मिट्टी पोत लेता। वह सौदा खरीदने में बहुत चतुर था। अस्तु, चीजें खरीदने उसे ही भेजा जाता था।

उधर "अमृत बाज़ार पत्रिका" में रेजिडेन्ट के विरुद्ध धड़ा-धड़ लेख निकलने लगे। अन्त को वह इतना बदनाम हुआ कि पदच्युत कर दिया गया। जिस समय वह स्टेट के बाहर पहुँच गया तो एक जंकशन पर एक काला सा मनुष्य हैट लगाये पतलून बूट पहने उसकी ओर आया। उसे देखकर रेजिडेन्ट चकित सा रह गया। यह तो वही है जो मेरे बर्तन साफ़ किया करता था। आज पागल नहीं है। उसने आते ही अंगरेज़ी में बातचीत शुरू की। उसे देख वह कांपने लगा। अन्त में उसने कहा—“तुम्हें इनाम तो दिया जा चुका है, अब तुम मेरे पास क्यों आये हो?”

“आपने कहा था, जो मनुष्य उस गुप्तचर को, जिसने कि आपका भेद खोला है, पकड़वाये, उसे आप कुछ इनाम देंगे।”

“हां, कहा तो था। क्या तुमने उसे पकड़ा?”

“हां, हां, इनाम दीजिये। वह में स्वयं ही हूँ।” वह थर-थर कांपने लगा। बोला—यदि राज्य के अन्दर ही मुझे तेरा पता चल जाता तो बोटी बोटी उड़वा देता।” खैर, उसने इन्हें एक सोने की घड़ी दी और कहा—“यदि तुम स्वीकार करो तो जासूस विभाग से एक हजार मासिक वेतन दिलवा सकता हूँ।” परन्तु सूफी जी ने कहा—“अगर वेतन ही लेना होता तो तुम्हारे बर्तन क्यों साफ करता?”

आज सूफी जी इस लोक में नहीं हैं, पर ऐसे देश भक्त का स्मरण भी स्फूर्तिदायक होता है।

— —

इंग्लैंड की सभा में

उन दिनों इंग्लैंड में सावरकर का बड़ा जोर था। “इण्डिया हाऊस” द्वारा जोरों से प्रचार हो रहा था कि, कन्हाईलाल और सत्येन्द्र की फांसी के समाचार ने वहां और भी उत्तेजना फैला दी। अस्तु श्री मदनलाल ठीगरा भी उक्त हाऊस के सदस्य बन गये। एक दिन रात के समय सावरकर जी तथा मदनलाल में बहुत देर तक गुप्त बातचीत होती रही। अन्त में सावरकर ने उनसे ज़मीन पर हाथ रखने को कहा। मदनलाल के दोनों हाथ पृथ्वी पर रखते ही सावरकर ने ऊपर से सूवा मार दिया। सूवा उसे छेद कर पार निकल गया और खून की धार बह चली, किन्तु फिर भी उस वीर की आकृति में अन्तर न आया।

सावरकर जी ने सूबा दूर फेंक दिया। उस समय दोनों के हृदय प्रेम से गद् गद् हो उठे। उनकी आंखों से आंसुओं की धारा बह चली। हाथ फैलाने भर की देर थी। दोनों हृदय एक दूसरे से मिल गये। आंखों के आंसू पोंछते हुए सावरकर ने मदन को छाती से लगा लिया।

अगले दिन इण्डिया हाऊस की मीटिंग में मदनलाल न आये। कुछ लोगों ने उन्हें सर करजन वायली की स्थापित की हुई भारतीय विद्यार्थियों की सभा में जाते देखा था। वायली साहब भारत मंत्री के एडीकांग थे और भारतीय विद्यार्थियों पर खुफिया पुलिस का प्रबन्ध कर उनकी स्वाधीनता को कुचलने के प्रयत्न में लगे रहते थे। मदन के इस आचरण पर इण्डिया हाऊस के विद्यार्थियों में आलोचना शुरू हो गई। किन्तु सावरकर के समझाने पर सब चुप हो गये।

सन् १९०६ की पहली जुलाई का दिन था। सर करजन इम्पोरियल इन्सटीट्यूट जहांगीर हाल की सभा में किन्हीं दो व्यक्तियों से बातचीत कर रहे थे कि देखते-देखते मदनलाल ने सामने आकर उन पर पिस्तौल का फायर कर दिया। सभा में हा-हा कार मच गया और मदनलाल पकड़ कर जेल में बन्द कर दिये गये। चारों ओर से उन पर गालियों की बौछारें पड़ने लगीं, यहां तक कि स्वयं पिता ने भी सरकार के पास तार भेजा कि मदनलाल मेरा लड़का नहीं है।

जिस जमय इंगलैण्ड में विपिन बाबू के सभापतित्व में उनके कार्य के विरोध में सभा हो रही थी और उन पर घृणा का प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास किया जा रहा था तो सावरकर जी उसका विरोध करने खड़े हो गये। इतने में एक अङ्गरेज ने

क्रोध में आकर यह कहते हुए कि “Look ! How Straight the English fist goes” उनके एक घूँसा मार दिया। पास ही में एक भारतीय युवक खड़ा था। उसने यह कहकर कि “Look ! How Straight the Indian Club goes” उस अङ्गरेज के सर पर लाठी जमा दी। गड़बड़ हो जाने से सभा विसर्जित हो गई और वह प्रस्ताव पास न हो सका।

अदालत में मदनलाल ने सब बातें मानते हुए कहा—“मैं मानता हूँ कि मैंने उस दिन एक अङ्गरेज की हत्या की, किन्तु वह उन अमानुषिक दण्डों का एक साधारण सा बदला है जो भारतीय युवकों को फांसी और काले पानी के रूप में दिये गये हैं। मैंने इस कार्य में अपनी अन्तरात्मा के अतिरिक्त और किसी से परामर्श नहीं लिया। एक हिन्दू के नाते मेरा अपना विश्वास है कि मेरे देश के साथ अन्याय करना ईश्वर का अपमान करना है, क्योंकि देश की पूजा श्री रामचन्द्र की पूजा है और देश की सेवा श्रीकृष्ण की सेवा है।”

इसके बाद नीरव आकाश की ओर देखकर उस भक्त पुजारी ने कहा—

“मुझ जैसे निर्धन और मूर्ख युवक पुत्र के पास माता की भेंट के लिये अपने रक्त के अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है ? और इसीसे मैं अपने रक्त की श्री श्रद्धांजलि माता के चरणों में चढ़ा रहा हूँ।”

भारत में इस समय केवल एक ही शिक्षा की आवश्यकता है और वह है, मरना सीखना, और उसके सिखाने का एक मात्र ढंग स्वयं मरना है।

मेरी ईश्वर से यही प्रार्थना है कि मैं बार २ भारत की ही गोद में जन्म ले उसी के कार्य में प्राण देता रहूँ। वन्देमातरम्।”

अन्त को वीरतापूर्वक फांसी के तख्ते पर खड़े होकर “वन्देमातरम्” की ध्वनि के साथ १६ अगस्त सन् १९०६ को अपनी इह लीला समाप्त करदी ।

दिल्ली के हुतात्मा

मास्टर अमीरचन्द

दिल्ली के मिशन हाई स्कूल में मास्टर थे । उस समय आप स्वामी रामतीर्थ के भक्त थे । बाद में जब लाला हरदयाल ने अपने विचारों का प्रचार किया तो ये भी उनसे सहमत हो गये और उसी कार्य का प्रचार करने लगे ये उर्दू तथा अंगरेजी के अच्छे लेखक थे । १९०८ में जब हरदयाल भारत से चलने लगे तो दल का सराभार इनको ही सौंप गये थे ।

ये एक जिन्दादिल और आजादी परस्त आदमी थे । हंसी में कहा करते थे कि दिल्ली में आकर किसी से भी बन्दर मास्टर का मकान पूछने पर मेरे घर का पता मिल सकेगा ।

दिल्ली और लाहौर में बम फेंकने वालों का पता न चला । चारों ओर तलाशी हो रही थी कि कलकत्ते के राजा बाजार में एक मकान की तलाशी होने पर अवधबिहारी का पता निकल आया । ये उन दिनों अमीरचन्द के मकान पर ही रहते थे । सन्देश तो पहले से ही था । अस्तु, तलाशी ली गई और मकान में एक बम की टोपी मिल गई । इसी तलाशी में लाहौर से लिखा हुआ एक पत्र भी मिला, जिसमें M. S. के हस्ताक्षर थे । पूछने पर पता चला कि वह दीनानाथ का लिखा हुआ था ।

बहुत से दीनानाथ पकड़ लिये गये । परन्तु बाद में वास्तविक दीनानाथ का भी पता चल गया । उसकी भी तलाशी हुई और गिरफ्तार होने पर उसी ने सारा भेद खोल दिया । इनपर Liberty leaflet के लिखने का अपराध लगाया गया और विशेष कर नीचे लिखी बातें खास तौर पर आपत्तिजनक मानी गईं :—

“We are so many that we can seize and snatch from them their cannons.”

और

“Reforms will not do, Revolution and general massacre of all the foreigners, especially the English will and alone can serve our purpose.”

अदालत से फांसी की सजा सुनाई जाने पर ये हंस दिये । उस समय इनकी अवस्था पचास वर्ष की थी । दिल्ली के बड़े २ आदमियों ने सफाई की गवाही में आपके उच्च चरित्र की बहुत प्रशंसा की थी । उसीपर अपील के फैसले में जज ने लिखा था—

“It must be born in mind that patriots of Amirchand's type are often, except in regard to the monomania possessing them, estimable men, and of blameless private life.”

अदालत में इनके गोद लिये हुए लड़के सुल्तानचंद ने सरकारी गवाह बनकर इनके विरुद्ध गवाही दी थी । किसी ने ठीक कहा है—

बागवां ने आग दी जब आशियाने को मेरे ।

जिन पै तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे ॥



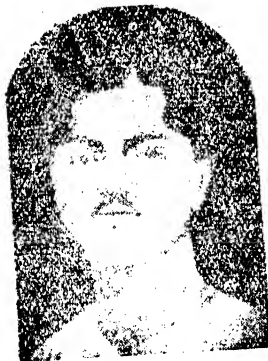
श्री० भाई भागसिंह



श्री० मास्टर अमीरचन्द



श्री० जगतसिंह



लाहड़ी

उस समय मास्टर अमीरचंद भी संभल न सके और कोर्ट में ही उनके नेत्रों से झर झर आंसू गिरने लगे। मनुष्य सब कुछ सहन कर सकता है, परन्तु अपने प्रिय जनों का—जिनको हृदय में सबसे ऊँचा स्थान दे रखा हो उनका—विश्वासघात सहन करना असम्भव है। आज मास्टर जी जैसा गम्भीर और दृढ़ चित्त व्यक्ति भी अपने आंसू न रोक सका। उनका वह दत्तक पुत्र आज भी जीवित है और मज्जे में जीवन व्यतीत कर रहा है।

मास्टर अमीरचंद ने पुत्र के विश्वासघात पर भले ही अश्रुपात किया हो, परन्तु मृत्युदण्ड सुन कर वे एक दम प्रफुल्लित हो उठे। वे संसार के साधारण व्यक्तियों से बहुत ऊंचे थे। इसका विशेष परिचय उन्होंने सहर्ष फांसी की रस्सी गले में डाल कर दिया। आज वे इस संसार में नहीं, परन्तु उनका नाम है, सुकृति है, उनका विप्लव है।

श्री० अवध विहारी

बी० ए० पास करने के बाद इन्होंने लाहौर सेन्ट्रल ट्रेनिंग कालिज से बी० टी० पास किया था। ये बुद्धिमान् और चतुर युवक थे। जज ने भी अपने फ़ैसले में लिखा था—

“Avadh Behari is only 25 years of age, but he is highly educated and intelligent man.”

राजा बाज्जार कलकत्ते में पता मिल जाने पर ये अमीरचंद के मकान पर ही गिरफ्तार किये गये। उस समय यू० पी० तथा पंजाब का नेतृत्व इनके हाथ में था। वे प्रायः निम्नलिखित पद्य गाया करते थे—

एहसान ना खुदा का माने मेरी बला,
किश्ती खुदा पे छोड़ दूँ लंगर को तोड़ दूँ।

अदालत से इनपर तेरह अपराध लगाये गये । कहा जाता है कि लाहौर लारेन्स गार्डन के बम की टोपी इन्हीं ने वसन्तकुमार के साथ मिलकर लगाई थी और इसमें इनका पूरा हाथ था ।

इनको फांसी की सज़ा दी गई । जिस दिन फांसी होने को थी, उस दिन एक अंगरेज़ ने इनसे पूछा—“आपकी अन्तिम इच्छा क्या है ?” इन्होंने उत्तर दिया—“यही कि अंग्रेजी साम्राज्य नष्ट भ्रष्ट हो जाय ।” उसने कहा—“शांत हूजिये । आज तो शान्तिपूर्वक प्राण दीजिये, अब इन बातों से क्या फायदा ?” इस पर इन्होंने जवाब दिया—“आज शांति कैसी ? मैं तो चाहता हूँ कि आग भड़के, चारों ओर आग भड़के । तुम भी जलो, हम भी जलें और हमारी गुलामी भी जले और अन्त में भारत कुन्दन बन कर रह जाय ।”

फांसी के समय आपने स्वयं कूदकर रस्सी गले में डाल ली और वन्देमातरम् के साथ हँसते हँसते बिदा हो गये ।

भाई बालमुकुन्द

इनका जन्म चकवाल के पास एक गांव (जिला भेलम) पंजाब में हुआ था । पहले तो उधर ही शिक्षा पाते रहे, बाद में लाहौर डी० ए० बी० कॉलेज में हो गये । बी० ए० पास करने के बाद आपने देश सेवा का व्रत धारण कर लिया । और लाला लाजपतराय जी के तत्कालीन अछूतोद्धार आन्दोलन में काम करने लगे और दूर पर्वतों में, जहाँ पर कि अन्धकार का गढ़ है, जाकर अनेक असुविधाओं में भी अपना कार्य बहुत उत्साह तथा साहस से करते रहे । उनके सहकारी उनकी संलग्नता और तत्परता की तारीफ़ आज भी मुक्तकण्ठ से करते हैं । उधर पंजाब में विलबदल का संगठन कार्य १९०८ में सरदार अजीत-

सिंह और सूफी अम्बाप्रसाद के १६०७ ई० वाले आन्दोलन के बाद से शुरू हो गया था। १६०६ में बंगाल के एक स्थायित वैस्विक उनके पास पहुँचे। तब एक संगठित दल कायम करने का उद्योग होने लगा। उधर १६०८ में श्री लाला हरदयाल जी एम० ए० अपनी शिक्षा बीच में ही छोड़कर इंग्लैंड से लौट आये। उन्होंने एक दम विप्लव का प्रचार शुरू कर दिया था। कुछ ही दिनों में अनेक आदर्शवादी युवक उनके अनुयायी हो गये। इसी बीच में उन्हें भारत छोड़कर यूरोप जाना पड़ा।

कुछ ही दिनों के बाद सूफी अम्बाप्रसाद और सरदार अजीतसिंह भी ईरान जाने को बाधित हुए। तब यह युवक दिल्ली के प्राणम्य शहीद मास्टर अमोरचन्द जी से राजनैतिक शिक्षा पाते रहे। उधर १६१० में श्रीरासबिहारी बोस देहरादून में जंगलात के विभाग में नौकरी करने लगे थे और बंगाल की ओर से, बंगाल से बाहर समस्त उत्तर भारत में विप्लवदल संगठित करने का भार आप पर ही पड़ा था। आपने लाहौर में सभी वैस्विक युवकों का पुनर्संगठन किया और एक कार्यकारिणी समिति नियुक्त की गई। उसमें लाहौर के दल का भार श्री बालमुकुन्द पर सौंपा गया था। इस दल की ओर से लिबर्टी नामक क्रांतिकारी पर्चे बांटे गये थे।

१६१२ ई० में सर माइकेल ओडायर ने पंजाब की गवर्नरी की बागडोर अपने हाथ में ली। उसी समय उन्हें बताया गया था कि पंजाब में एक ज्वालामुखी तैय्यार हो रहा है, जो किसी वक्त पर फट सकता है। वह उसी के लिये तैय्यार होकर शासन का भार ले ही रहे थे कि दिल्ली में लार्ड हार्डिज तत्कालीन वायसराय के जुलूस पर चाँदनी चौक में बम फेंका गया।

सन् १६१० में इंग्लैंड के बादशाह एडवर्ड सप्तम का देहान्त

होने से उनके ज्येष्ठ पुत्र जार्ज पंचम वहां की गद्दी पर बैठे। बंग-भंग और उसके कारण होने वाले राजनैतिक आन्दोलन से इस समय भारत सरकार और ब्रिटिश सरकार दोनों ही घबरा रही थीं। वह दोनों बंगाल को एक करना चाहते तो अवश्य थे, किन्तु अपनी शान बनाने के लिये किसी उपयुक्त अवसर की तलाश में थे। जार्ज पंचम के इंगलैंड की गद्दी पर बैठने से उन्होंने सोचा कि सम्राट का राजतिलक भारत में भी देहली दरबार में किया जाये और उस अवसर पर समस्त भारत में राजभक्ति का प्रचार किया जाये। यह भी निश्चय किया गया कि इसी अवसर पर सम्राट के मुख से दोनों बंगाल को एक करने की घोषणा कराई जाये, जिससे इस कार्य को सम्राट को उदारता समझ कर उनके विषय में जनता में राजभक्ति का संचार हो। इस योजना के अनुसार सम्राट जार्ज पंचम को भारत लाकर १२ दिसम्बर सन् १९११ को देहली में ऐसा भारी दरबार किया गया कि उसकी धूम देश-देशान्तरों में छा गई। इस अवसर पर सम्राट ने घोषणा की—“अब से भारत की राजधानी कलकत्ते के स्थान पर देहली को बना कर पाण्डवकालीन प्राचीन इन्द्रप्रस्थ के वैभव का फिर उद्धार किया जाता है। बंगाल की प्रजा के आंतरिक असन्तोष को ध्यान में रखते हुए पूर्वीय और पश्चिमी बंगाल को मिलाकर फिर लेफ्टिनेंट गवर्नर के आधीन प्रथक् प्रांत बनाया जाता है। आसाम को चीफ कमिश्नर के आधीन प्रथक् प्रान्त बनाया जाता है। प्राचीन मगध राजधानी के वैभव का पुनरुद्धार करके पटने को एक स्वतन्त्र प्रान्त की राजधानी बनाया जाता है। इस प्रान्त में बिहार, छोटा नागपुर और उड़ीसा के जिले होंगे। इस प्रान्त का नाम बिहार उड़ीसा होगा। बिहार उड़ीसा प्रान्त को भी एक लेफ्टिनेन्ट गर्वनर के आधीन किया गया।

सम्राट् जार्ज पंचम ने अपना वायसराय बना कर लार्ड हार्डिंज को दरबार से पहले ही भेज दिया था। देहली में नई राजधानी बनाने के लिये एक और नगर नई देहली की आधार शिला रखी गई। वायसराय और भारत सरकार के लिये देहली में अस्थायी स्थान बनाये गये। यह तय किया गया कि वायसराय लार्ड हार्डिंज २३ दिसम्बर १९१२ को राजधानी में पहली पहल अत्यन्त समारोहपूर्वक देहली में प्रवेश करें। किन्तु जिस समय उनकी सवारी देहली के चांदनी चौक में आई तो अज्ञात दिशा की ओर से एक भयानक बम उनके ऊपर फेंका गया, किन्तु निशाना ठीक नहीं बैठा। बम वायसराय के न लग कर उनके पीछे बैठे हुए उनके अंगरक्षक के लगा, जिससे वह घटनास्थल पर ही मर गया। वायसराय के भी सिर के पीछे के भाग में कुछ चोट लगी, जिससे वह उसी समय मूर्छित हो गये। पुलिस ने उसी समय सारे चांदनी चौक को घेर लिया। दुकानों की छतों पर दर्शक स्त्री पुरुषों की बड़ी भीड़ थी। सबकी सावधानी से जांच की गई। किन्तु बम फेंकने वाले की परछाई तक को न जाना जा सका। इसके पांच मास बाद मई १९१३ में लाहौर के लारेंस गार्डन में सभी सिविलियन पदाधिकारी एकत्रित हुए थे। उन सभी को उड़ा देने के लिये वहां एक बम रखा गया। परन्तु उस बम के फटने से एक हिन्दुस्तानी चपरासी के सिवा और कोई न मर सका। सरकार लाख सिर पटक कर बैठ रही, किन्तु दुर्घटना का इस समय भी कुछ कारण न मिला।

इधर राजा बाजार कलकत्ता की तलाशी में श्री अवधविहारी का नाम मिल गया। उनकी तलाशी पर दीनानाथ का पता मिला। दीनानाथ पकड़ा गया। जोधपुर से भाई बालमुकुन्द और एम० ए० के विद्यार्थी श्री बलराज इत्यादि अनेक लोग पकड़े गये।

दीनानाथ के वक्तव्य के अनुसार भाई बालमुकुन्द जी के पास उस समय भी दो बम मौजूद थे। उन्हीं की तलाश में उनके गांव वाले घर की तलाशी में दो दो गज तक गहरी जमीन खोद डाली गई थी। सारी छतें उधेड़ डाली गईं, परन्तु वहां कुछ न मिल सका।

अभियोग चला। वे दिन बड़े विचित्र थे। उन दिनों किसी क्रान्तिकारी से सहानुभूति प्रदर्शित करना आग से खिलवाड़ करना था। बड़े बड़े नेताओं ने अभियुक्त के सम्बन्धियों को घर पर परामर्श लेने आते देखकर धक्के देकर बाहर निकाल दिया था। ऐसी दशा में कौन किसकी सहायता करता? भाई परमानन्द जी ने ही भाई बालमुकुन्द जी के अभियोग में सब प्रबन्ध किया, परन्तु उस मतवाले सैनिक को यह सब नाटक-मात्र जान पड़ता था। उन्होंने अन्त में मृत्युदण्ड सुनने पर सहर्ष केवल इतना ही कहा था—“आज मुझे अत्यन्त आनन्द हो रहा है, क्योंकि इसी नगर में जहां कि हमारे पूर्व पुरुष श्री भाई मतिराम जी ने स्वतन्त्रता के लिये प्राण दिये थे—वहीं पर आज मैं भी—मां के चरणों पर आत्मसमर्पण कर रहा हूं।” आखिर उन्हें १६१५ के प्रारम्भ में फाँसी दे दी गई। घर की हालत अजीब थी। बड़ी मुश्किल से कुछ रुपया पैसा जुटाकर भाई परमानन्द जी ने प्रिवी कौन्सिल के लिये एक वकील को तार दिया था। एक महाशय ने पूछा—“भाई जी! बालमुकुन्द जी के बारे में क्या हो रहा है?” आपने उत्तर दिया—“प्रिवी कौन्सिल में अपील करने की चेष्टा कर रहे हैं।” फिर पूछा गया—“और स्वयं आपका क्या हो रहा है?” उत्तर दिया—“खुद भी तैयार बैठे हैं।” इङ्गलैंड से अपील खारिज होने का तार पहुँचते न पहुँचते भाई परमानन्द जी भी धर लिये गये। तब तक १६१५ के विराट् विप्लव का सब प्रयास निष्फल

हो चुका था। उसी के फलस्वरूप उनकी गिरफ्तारी हुई थी।

इधर भाई बालमुकुन्द जी को फांसी हो गई। उस दिन कहते हैं, उनके आनन्द की सीमा न रही थी। सिपाहियों से पंजा छुड़ाकर फाँसी के तख्ते पर जा खड़े हुए थे। ओह, ऐसा साहस इन वैसविकों के अतिरिक्त और कहाँ मिलेगा ? मृत्यु के प्रति इतनी अपेक्षा दिखाने का साधारण दुनियादार लोग साहस नहीं कर सकते।

इनके सुन्दर बलिदान को इनकी धर्म-पत्नी श्री मती राम-रखी ने सती होकर और भी चार चांद लगा दिये। बात यह थी कि वे उनसे बहुत प्यार करती थीं। विवाह हुए भी अभी कुछ दिन ही हुये थे। वे उनसे जेल में मिलने गईं, पूछा—“भोजन कैसा मिलता है ?” उत्तर में जेल की बालू मिली रोटी दिखाई गई। घर आकर वैसा ही भोजन तैयार कर खाने लगीं। फिर मिलीं। पूछा—“सोते कहाँ पर हैं ?” उत्तर मिला—“इस ग्रीष्म ऋतु में भी अन्धकारमय कोठरी में दो कम्बल ओढ़कर।” घर आकर वैसा ही रहना शुरू कर दिया। एक दिन बाहर से रोने धोने का शब्द सुनकर उन्होंने सब कुछ समझ लिया। उठीं। स्नान किया, वस्त्राभूषण पहन कर शृङ्गार किया और अपने प्रियतम से मिलने के लिये तैयार होकर घर के अन्दर एक चबूतरे पर बैठ गईं। फिर वे नहीं उठीं। दूर—जहाँ तक स्थूल दृष्टि देख सकती है, जहाँ तक आततायी शासकों का कानून विधान पहुँच सकता है उससे बहुत दूर—उस पार, जहाँ पर जेल नहीं, फांसी नहीं, विसव नहीं, पराधीनता भी नहीं, केवल प्रेम ही प्रेम है। उसी लोक में वे अपने चिर प्रियतम श्री बालमुकुन्द जी से अनन्तकाल तक सहवास का आनन्द उठाने के लिये चली गईं।

(१०४)

काकोरी केस

काकोरी लखनऊ जिले में एक छोटा सा गांव है। काकोरी स्टेशन ईस्ट इंडियन रेलवे की सहारनपुर मुगलसराय लाइन पर लखनऊ से सहारनपुर को आते हुए तीसरा स्टेशन है। उसके और लखनऊ के बीच में केवल एक स्टेशन आलमनगर ही है। काकोरी स्टेशन लखनऊ स्टेशन से कुल आठ मील है।

हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन को अस्त्रशस्त्रों के खरीदने के लिये रुपयों की बड़ी भारी आवश्यकता थी। एसोसिएशन के सदस्यों ने अपने ही घरों में चोरियां कीं, चंदा भी किया, पर खर्च पूरा नहीं हुआ। तब रुपया प्राप्त करने के लिये डाका डालना निश्चय किया गया। पं० रामप्रसाद विस्मिल ने प्रस्ताव किया कि डाक के थैले लूटे जावें।

दस आदमी राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, पं० रामप्रसाद विस्मिल, अशफाकुल्लाखाँ, शचीन्द्रनाथ बक्शी, मुकन्द लाल, मन्मथ लाल गुप्त, चन्द्रशेखर आज़ाद, मुरारी शर्मा, बनवारीलाल, तथा एक अन्य और ये सब ६ अगस्त १९२५ को संध्या समय शाहजहाँपुर से हथियार, छेनी, घन, हथौड़ी आदि से लैस होकर ८ डाउन गाड़ी पर सवार हो गये। इस गाड़ी में रेल के खजाने के अतिरिक्त कोई और खजाना भी जा रहा था, जिसके साथ बंदूकों का पहरा था। इसके अतिरिक्त गाड़ी में कई बंदूकें और भी थीं। कुछ पल्टनियां गोरे भी शस्त्र सहित मौजूद थे, जिनमें शायद एक मैजर भी सैकिंड क्लास में था। अपने स्काउट से यह समाचार पाकर पहिले तो यह लोग असमंजस में पड़ गये, किन्तु नौजवानों ने अपने उत्साह में पीछे हटना उचित न समझा।

अशफाकुल्ला, राजेन्द्र लाहिड़ी तथा शचीन्द्र नाथ बक्शी सैकिंड



क्लास में सवार हुए। इस टुकड़ी का नेतृत्व अशफाक कर रहे थे। शेष सात व्यक्ति तीसरे दर्जे में सवार हुए। इसका नेतृत्व पं० रामप्रसाद कर रहे थे। इन लोगों के पास चार नये मौजरे पिस्तौल थे। इनके अतिरिक्त अन्य कई छोटे मोटे हथियार भी थे। मौजरे पिस्तौलों के साथ पचास से अधिक कारतूस थे।

जब गाड़ी काकेरी स्टेशन से थोड़ी दूर निकल आई, तो सेकिन्ड क्लास के कमरे वालों ने खतरे की जंजीर बड़ी जोर से खींचकर गाड़ी को खड़ा कर लिया। मुसाफिर लोग खिड़कियों से सिर निकालकर देखने लगे कि मामला क्या है। गार्ड भी जंजीर खेंचे जाने वाले डब्बे की ओर जाने लगा। उस समय दिन की रोशनी कुछ २ बाकी थी। गाड़ी खड़ी होते ही दसों व्यक्ति अपने २ डिब्बों से उतर कर काम में लग गये। गार्ड साहब को पिस्तौल दिखा कर जमीन पर लेट जाने की आज्ञा दी गई। गार्ड के आँधे मुँह जमीन पर लेट जाने पर सबने अपने २ हथियार निकाल लिये। गाड़ी के दोनों ओर दो २ मनुष्य खड़े कर दिये गये। इनके पास दस गोलियों की एक सहस्र गज तक मार करने वाली मौजरे पिस्तौलें थीं। शेष छै व्यक्ति रेल के थैले वाले डब्बे में घुस गये। उन्होंने धक्का देकर खजाने वाले सन्दूक को डिब्बे से नीचे गिरा दिया। अब उस सन्दूक को खोलने का प्रश्न उपस्थित हुआ। घन आदि मार कर उसमें थोड़ा बहुत सुराख तो कर लिया गया, किन्तु इससे कुछ अधिक काम न बना।

इस समय अशफाक पहरा देने वाले चार व्यक्तियों में से था। उसने यह दशा देखकर मौजरे पिस्तौल मन्मथनाथ गुप्त के हाथ में दे दी और घन पर जुट गया। उन लोगों में सबसे बलिष्ठ वही था। उसने शीघ्र ही सुराख को बड़ा कर दिया। अब थैले निकाल कर चादर में बांध लिये गये। इसी समय

लखनऊ से कोई मेल टूटने आ रही थी। गाड़ी बड़ी जोर से गुरजती हुई आई और बिना रुके हुए निकल गई। उसको देखकर इन लोगों ने अपने हथियार जरा छिपा लिये थे। इसके बाद यह लोग फिर अपने काम में लग गये। इन लोगों ने यह सब काम दस मिनट से भी कम समय में करके बैलों को लेकर झाड़ियों का रास्ता लिया। गाड़ी के हथियारबंद हिन्दुस्तानी सैनिक अपने स्थान पर जहां के तहां बैठे रहे और मैजor साहिब तथा अन्य गोरो ने तो अपने डिब्बों की खिड़कियां तक लगा लीं।

काकेरी के षडयन्त्र के सम्बन्ध में २६ सितम्बर १९२५ को एक साथ शाहजहांपुर, बनारस, इलाहाबाद और लखनऊ आदि स्थानों में गिरफ्तारियां की गईं। चालीस व्यक्ति पकड़े गये।

प्रारम्भिक जांच के पश्चात् २८ व्यक्तियों पर मुकद्दमा कायम किया गया। इनमें से चन्द्रशेखर आज्ञाद, अशफाक और शचीन्द्र बक्शी भागे हुए थे। इस मुकद्दमे में पांच हजार की डकैती के लिये सरकार ने दस लाख रुपये से भी अधिक खर्च कर दिया। अशफाकुल्ला, रामप्रसाद विस्मिल, राजेन्द्र लाहिड़ी और रोशनसिंह को फांसी दी गई।

पं० रामप्रसाद विस्मिल—का जन्म सन् १९०० के लग-भग ग्वालियर राज्य के किसी गांव में हुआ था। बाद में आपके पिता पं० मुरलीधर सपरिवार शाहजहांपुर में आकर बस गये। आप पं० गेंदालाल दीक्षित के साथ मैनपुरी षडयन्त्र में काम कर चुके थे। उस समय आप अङ्गरेजी की दसवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। पं० गेंदालाल दीक्षित के पकड़े जाने पर आपने १६ वर्ष की अवस्था में अपने साथ पन्द्रह विद्यार्थियों को लेकर पहली डकैती की। अपने पिता से आपने शादी का बहाना

करके बिना गाड़ीवान के ही गाड़ी मांगी। रात को सब लोग निश्चित स्थान पर गये। किन्तु अन्धकार के कारण स्थान न मिला। आखिर दूसरे दिन आप उस स्थान पर पहुंचे। आपने तीन विद्यार्थियों को मकान की छत पर चढ़ा दिया और अन्दर कूदने के लिये कहा। किन्तु वह लोग डर गये। आपने पहले तो डांटा और फिर गोली चलाई, जिससे एक का साफा नीचे आ पड़ा। आखिर वह नीचे कूद पड़े। उन्होंने अन्दर से मकान का दरवाजा खोल दिया। आप छत पर खड़े २ सबको आदेश देने लगे। इतने में गांव वाले आ गये और ईंटें चलाने लगे। एक ईंट आप की आंख पर भी लगी। आखिर आपने गोली चलाकर भीड़ की ईंट वर्षा को बन्द करा दिया। डकैती हो चुकने पर आप अपने थके हुए साथियों को ज्यों त्यों करके गाड़ी के पास वापिस लाए। चोट का कारण पूछे जाने पर आपने पिता से कहा—“बैल बिगड़ गये। गाड़ी उलट गई और मेरे चोट आ गई।”

मैनपुरी षडयन्त्र में वारन्ट पर आप फरार हो गये। इन दिनों आपको बड़े २ कष्ट सहने पड़े। कई २ बार तो आपको पैसा पास न होने के कारण घास तथा पत्तियां खाकर ही रह जाना पड़ा। नेपाल, आगरा तथा राजपूताना आदि में घूमने पर एक बार आपने अखबार में देखा कि सम्राट की घोषणा में आप पर से भी वारन्ट हटा लिया गया है। बस, आप तुरन्त वापिस घर आ गये और रेशम के सूत का कार-खाना खोलकर काम काज में लग गये।

किन्तु थोड़े दिनों के बाद ही आपने दल के संगठन का काम फिर आरम्भ कर दिया। एक बार आप किसी स्टेशन पर जा रहे थे, कुली सन्दूक लेकर पीछे चल रहा था कि ठोकर खाकर गिर पड़ा। साथ ही उस सन्दूक में से निकल कर बहुत

से कारतूसों के साथ कई एक रिवाल्वर प्लैटफार्म पर गिर पड़े। इस पर एक सूटबूटधारी साहब बहादुर कुली को बुरी तरह मारने लगे। आप शीघ्र ही दरोगा बने हुए वहां आये। आपने कुली पर दया का भाव दिखलाते हुए साहब बहादुर से कुली को क्षमा करने की प्रार्थना कर स्वयं ही सारे सामान को सन्दूक में भर लिया। उस दिन यदि आप तनिक भी डर जाते और इस बुद्धिमानी से काम न लेते तो निश्चय ही अपने साथी सहित गिरफ्तार हो जाते। आपको काकोरी केस में १६ दिसम्बर १९२७ को गोरखपुर में फांसी दी गई।

राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी—युक्तप्रांत के निवासी थे और बनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी के एम० ए० क्लास में पढ़ते हुए विप्लव का कार्य करते थे। आपको दक्षिणेश्वर बम केस में पहले दस वर्ष की सजा हुई थी, जो अपील में पांच की रह गई। आप बनारस आदि कई जिलों के इंचार्ज थे। आपको काकोरी के अन्य शहीदों से दो दिन पूर्व १७ दिसम्बर १९२७ को गोंडा में फांसी दी गई।

ठाकुर रोशनसिंह—शाहजहांपुर के नवादा ग्राम के निवासी थे। आपका जन्म अत्यन्त धनी ज़मींदार के घर में हुआ था। घर में दो पत्नियां थीं। किन्तु इतनी अधिक विलासिता भी आपको देश कार्य में अग्रसर होने से न रोक सकी। आपको १६ दिसम्बर १९२७ को इलाहाबाद जेल में फांसी दी गई।

अशफाकुल्ला खां—शाहजहांपुर के रहने वाले पठान थे। आपका जन्म भी अत्यन्त अमीर घराने में हुआ था। आप पंडित रामप्रसाद जी के भक्त और विप्लववाद में शिष्य थे। काकोरी की घटना के समय आप एक छात्र ही थे। कुछ दिनों

तो फरार रहे। पासपोर्ट लेकर हिन्दुस्तान से अफगानिस्तान जाने का प्रयत्न कर रहे थे कि एक व्यक्ति के विश्वासघात के कारण देहली के एक होटल में गिरफ्तार कर लिये गये। आप उर्दू के अच्छे कवि भी थे। फांसी के समय आपने यह कविता पढ़ी थी:—

“तंग आकर हम भी उनके जुल्म से बेदाद से।
चल दिये सृष्टि अदम ज़िदाने फैजाबाद से।”

आपको १७ दिसम्बर १९२७ को फैजाबाद जेल में फांसी दी गई।

चन्द्रशेखर आज़ाद—को पहले पहल बनारस के गवर्न-मेंट संस्कृत कालेज पर धरना देते हुए गिरफ्तार किया गया था। मजिस्ट्रेट के पूछने पर उसने अपना नाम “आज़ाद”, पिता का नाम “स्वतन्त्र” और निवास स्थान “जेलखाना” बतलाया था। उसको पन्द्रह बेंत की सजा दी गई। जिस समय चौदह वर्ष के इस बालक के कोमल शरीर पर सड़ासड़ बेंत पड़ रहे थे, तो उसने तनिक भी कायरता या अधीरता न दिखला कर प्रत्येक बेंत के साथ ‘महात्मा गांधी की जय’ ‘बन्दे मातरम्’ कहा। अंत में वह मूर्छित होकर गिर पड़ा।

आज़ाद की इस घटना का शोर काशी भर में मच गया और उसको शीघ्र ही वहां के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय काशी विद्यापीठ में बुला कर रख लिया गया। आज़ाद आया तो था वहां संस्कृत पढ़ने, किन्तु वह जेल के बेंतों से विद्रोही बनकर काशी विद्यापीठ में विद्रोह की उपासना करने लगा।

उन दिनों काशी विद्यापीठ में मन्मथनाथ गुप्त और प्रणवेश चटर्जी भी पढ़ते थे। मन्मथ और प्रणवेश स्कूल में ही आज़ाद की दीक्षा ले चुके थे। आज़ाद से भी अधिक दिन नहीं पढ़ाया।

असहयोग के ठप्प हो जाने पर उसे प्रणवेश ने विप्लवी दल में भर्ती कर लिया ।

काशी के दल में सम्मिलित होकर मन्मथ ने आज़ाद का परिचय राजेन्द्रनाथ, शचीन्द्र, तथा रवीन्द्रमोहन आदि से करवाया । अब आज़ाद ने भी नये सदस्य भर्ती करने आरम्भ किये । बिहार के योगेन्द्र शुक्ल और स्वामी गोविन्दप्रकाश को आज़ाद ने ही दल में भर्ती किया था । अब इन लोगों के चक्कर शाहजहांपुर, कानपुर और लखनऊ में विशेष रूप से लगने लगे ।

जब क्रान्तिकारी कामों के लिये धन की अधिक आवश्यकता पड़ी और किसी प्रकार धन एकत्रित न किया जा सका तो आज़ाद को इस आशा पर गाज़ीपुर में एक उदासी महन्त का चेला बना दिया गया कि वह महन्त के मरने पर उनकी सम्पत्ति का मालिक बन सके । किन्तु आज़ाद को वहां का मनहूस जीवन सहन न हो सका । वहां से भाग कर बनारस आकर क्रान्ति का काम करने लगे ।

सन् १९२४ में एक अंग्रेजी का पर्चा सारे भारत में रंगून से लेकर पेशावर तक बांटा गया । यह पर्चा बनारस से ही सब केन्द्रों में भेजा गया था । आज़ाद ने इस पर्चे के बांटने में बड़ा भारी परिश्रम किया था । वह ६ अगस्त १९२५ को काकोरी की घटना में भी सम्मिलित था, किन्तु बाल्यावस्था के कारण उसकी प्रतिभा का विकास अभी भी नहीं हुआ था । काकोरी की घटना ने उससे बनारस एक दम छुटवा दिया । काकोरी मुकद्दमे के सभी अभियुक्त पकड़े गये । केवल आज़ाद और कुन्दन फ़रार रहे । आज़ाद की प्रतिज्ञा थी कि मैं जिन्दा हाथ न आऊंगा ।

आज़ाद भाँसी में जाकर रहने लगे । यहां उन्होंने मोटर और गोली चलाना सीखा । काकोरी के बाद काम बहुत ठंडा

होने पर आज़ाद और भगत सिंह की भेंट हो गई। अब तो दल को नये सिरे से संगठित करके नये कार्यकर्त्ता बनाये गये। और नये सिरे से संगठन, शस्त्र एकत्रित करने और परचे छपवा कर बंटवाने का कार्य किया गया। इस समय धन के लिये कुछ ढाके भी ढाले गये।

आज़ाद के गले में लाहौर षड़यन्त्र का फांसी का फन्दा था। फिर भी उसने लाहौर षड़यन्त्र के अभियुक्तों को निकालने की तैय्यारी महीनों तक की, किन्तु अन्त में वह काम भी न हो सका। जब देहली में गांधी जी और लार्ड इरविन में समझौते की बातचीत हो रही थी, तब आज़ाद ने महात्मा गांधी के पास संदेश भेजा कि यदि वह भगतसिंह आदि की फांसी रुकवा सकें तो उत्तर भारत के क्रान्तिकारी क्रान्ति के मार्ग को त्याग कर उनका अनुसरण करेंगे। किन्तु यदि भगतसिंह आदि को फाँसी हो गई तो यह निश्चय है कि क्रान्ति की लहर देश में अधिक भयानक रूप धारण कर लेगी। आज़ाद इन दिनों इस व्यापक क्रान्ति की तैय्यारी में लगे हुए थे।

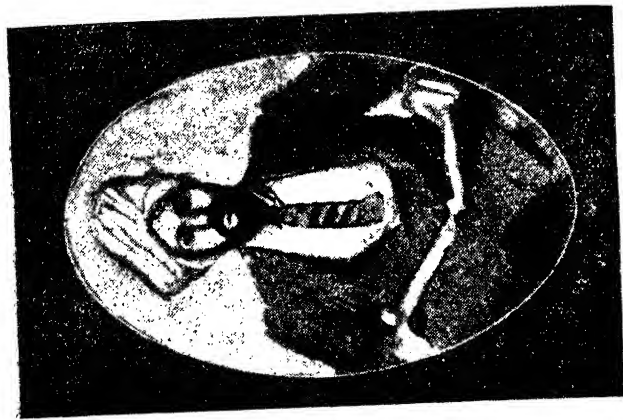
सन् १९३० के अन्त में आज़ाद ने वीरभद्र तिवारी के कारण कानपुर के हेडक्वार्टर को असुरक्षित समझ कर अपना निवास स्थान इलाहाबाद बनाया। इस समय आपकी गिरफ्तारी का ईनाम बढ़ते बढ़ते पांच हजार रुपया तक हो गया था।

आज़ाद २७ फरवरी १९३१ को १० बजे के लगभग इलाहाबाद के ऐल्फ्रेड पार्क में सुखदेवराज के साथ घूम रहे थे कि उन्होंने शहर से कटरे को जाने वाली सड़क पर वीरभद्र तिवारी को देखा। उन्होंने सुखदेवराज से, उसको इलाहाबाद में देख कर, आश्चर्य प्रकट किया। किन्तु वह यह समझे कि तिवारी ने उनको नहीं देखा। अतएव वह उसी पार्क में एक वृक्ष के नीचे बैठकर बातें करने लगे। थोड़ी देर बाद खुफिया के डिट्टी

सुपरिन्टेन्डेन्ट ठाकुर विश्वेश्वरसिंह और खुफिया पुलिस के कानूनी परामर्शदाता मिस्टर डालचन्द वहां कटड़े से आये। मिस्टर डालचन्द आज्ञाद को पहचानते थे। अतएव उन्होंने उसकी सूचना खुफिया पुलिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट मिस्टर नाट बाबर को दे दी और ठाकुर विश्वेश्वरसिंह उनकी निगरानी करते रहे। उसी समय मिस्टर नाट बाबर भी आ गये। उन्होंने उन दोनों से दस गज पर अपनी मोटर रोक कर उनका परिचय पूछा तो उन्होंने पिस्तौल निकाल ली और फायर शुरू कर दिया। यह देख कर मिस्टर नाट बाबर ने आज्ञाद पर एकदम गोली छोड़ी जो उसके पैरों में लगी। दूसरी गोली उसके शरीर में लगी। इस समय तक सुपरिन्टेन्डेन्ट और दो कांस्टेबल उन लोगों की ओर बराबर गोली छोड़ रहे थे। इस बीच में आज्ञाद को एक गोली मिस्टर नाट बाबर की बांह पर लगी जिससे उनके हाथ से पिस्तौल छूट पड़ा और वह एक वृत्त की ओट में जा छिपे। इस समय आज्ञाद भी रेंग कर एक वृत्त की ओट में चला गया। इसी समय ठाकुर विश्वेश्वरसिंह ५०-६० गज की दूरी पर एक भाड़ी की ओट में पहुंच गये और उन्होंने आज्ञाद की ओर फायर किये। आज्ञाद ने एक गोली मारी, जो विश्वेश्वर के मुख पर लगी और वह प्रायः बेकार हो गये।

सुपरिन्टेन्डेन्ट की भुजा पर चोट थी, इस कारण वह गोली नहीं छोड़ सकते थे। किंतु आज्ञाद की पिस्तौल बराबर आग उगल रही थी। वास्तव में वह उसी प्रकार गोली बरसा रहे थे, जैसे वह पेड़ ही मिस्टर नाट बाबर हो। बाद में पता लगा कि आज्ञाद की गोलियां मिस्टर नाट बाबर से कुछ इंच के फासले पर ही पेड़ में लगी थीं।

इस बीच में आज्ञाद का साथी सुखदेवराज वहां से निकल भागा। उसका कहना है कि ऐसा करने के लिये उसको आज्ञाद



भाई रामसिंह



बिस्मिल



रोशनसिंह



रामप्रसाद 'बिस्मिल'

ने ही विवश किया था। वास्तव में यदि उस समय आज़ाद की टांग में गोली न लगी होती तो संभवतः वह भी निकल भागते।

यद्यपि मिस्टर नाट बाबर और ठाकुर विश्वेश्वरसिंह गोली छोड़ने योग्य नहीं रहे थे, किन्तु उनके अन्य साथियों ने गोली वर्षा को जारी रखते हुए आज़ाद को भून ही डाला, जिससे वह शीघ्र ही निश्चेष्ट होकर पृथ्वी पर लेट गये। किन्तु उनके पास आने की अब भी किसी को हिम्मत न हुई। अन्त में उन्होंने बड़ी देर बाद जब उनकी टांग में गोली मार कर निश्चय कर लिया तो उनकी ओर को बढ़े। इस प्रकार क्रांतिकारी दल के इस वीर प्रधान सेनापति ने अपने पद के अनुरूप ही सम्मुख-युद्ध में वीर गति प्राप्त की।

भाई भागसिंह

भाई भागसिंह जी उंगली पर गिने जाने वाले रत्नों में से एक हैं। आपका जन्म लाहौर ज़िले के 'भिकखीविण्ड' नामक गांव में सरदार नारायणसिंह जी के घर, सन् १८७८ ई० में हुआ था। आपकी माता का नाम मानकुँवरि था। २० वर्ष की आयु तक आप घर ही रहकर खेती बाड़ी का काम देखते रहे। इसी बीच गुरुमुखी का भी थोड़ा बहुत ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बस, शिक्षा के नाते इतने ही को सब कुछ समझना चाहिये। आप बचपन से ही सैनिक स्वभाव के थे। अस्तु, बीस वर्ष की अवस्था होने पर फौज़ में नौकर हो गये। आज़ाद तबियत के तो मशहूर हो थे, फिर भला किसी की डाट डपट क्यों सहने लगे? सेना में आज किसी से झगड़ा हो रहा है तो कल किसी को डाट बताई जा रही है। सभी लोग, और विशेषकर अफसर लोग, आपसे बहुत तंग रहा करते थे। इन्हीं

सब बातों से पाँच साल तक नौकरी करने पर भी आप एक मामूली सिपाही से आगे न बढ़ सके।

बाद में सेना से नौकरी छोड़कर घर आए बिना ही आप चीन चले गये और हांगकांग पुलिस में भरती हो गये। ढाई साल काम करने के बाद वहां भी जमादार से अनबन हो गई और आप शंघाई आगये। यहां पर ढाई साल तक म्युनिसिपल पुलिस में काम करने के बाद आए दिन बहुत से भारतीयों को अमेरिका की ओर जाते देखकर आप भी कैंनेडा चले गये। बस, यहीं से आपका सार्वजनिक जीवन प्रारम्भ होता है।

विचार तथा स्वभाव मिल जाने पर हृदय मिलते देर नहीं लगती। अस्तु कैंनेडा पहुँचकर भाई बलवन्तसिंह और अर्जुन सिंह, से आपकी बहुत घनिष्टता हो गई। इस समय कैंनेडा स्थित भारतीयों पर वहां के रहने वाले बड़ा अत्याचार कर रहे थे। यहां तक कि बहुत प्रयत्न करने के बाद भी उन्हें कहीं कोई जगह न मिलती थी। उनमें आपस में भी फूट थी। सभी अपनी अपनी ही सोचा करते। ऐसे विकट समय में उपरोक्त मित्र मण्डली ने आगे पैर बढ़ाया। प्रारम्भ करने भर की देर थी, कार्य चल निकला। और जहां पहले एक भी गुरुद्वारा न था, वहां प्रायः सभी स्थानों पर गुरुद्वारे स्थापित हो गये। सभी बिखरी हुई शक्ति को केन्द्रस्थ कर संगठन कार्य प्रारम्भ कर दिया गया। कैंनेडा में भारतीयों को एक भारतीय की तरह जीवन व्यतीत की स्वतन्त्रता न थी। वे अपने सम्बन्धियों के मृतशरीर को जला नहीं सकते थे, उन्हें उसकी कब्र बनानी पड़ती थी। अस्तु, इन लोगों ने कुछ ज़मीन खरीदी और उसमें श्मशान स्थापित किया। इस श्मशान में पहला संस्कार भाई अर्जुनसिंह जी का ही हुआ।

भला इमिग्रेशन वाले भारतीयों की इस उन्नति को कब देख सकते थे। अस्तु, एक ओर तो कैंनेडा के भारतवासियों को हण्डुरास भेजने का प्रयत्न होने लगा और एक दूसरी ओर नया कानून गढ़ा गया। इस कानून के अनुसार कोई भी नया भारतीय कैंनेडा में नहीं उतर सकता था। आपने अन्य मित्रों की सहायता से इसके विरुद्ध आवाज उठाई। दो आदमी हण्डुरास की दशा देखने भेजे गये। इन लोगों ने आकर रिपोर्ट दी कि हण्डुरास नरक से भी गया बीता स्थान है। अपने प्रयास में विफलता देख कर इमिग्रेशन वालों को इन पर बड़ा क्रोध आया। उधर नये कानून के विरुद्ध निश्चय हुआ कि जो लोग कैंनेडा में पहले से रह रहे हैं, वे भारत जाकर अपना परिवार आदि लेकर फिर वापिस आ सकते हैं। किन्तु निश्चय को कार्यरूप में भी तो लाना था। अतः हमारे नायक अपने अन्य दो मित्रों के साथ भारत की ओर चल दिये।

भारत तो आ गये, किन्तु अब परिवार कहां से ले जायं। स्त्री का स्वर्गवास हो चुका था, और बालबच्चे थे नहीं। अतः आपने एक पेशावर की स्त्री से फिर से ब्याह किया और उसे लेकर वापस चल दिये। हांगकांग आकर मालूम हुआ कि कैंनेडा जाने के लिये टिकट न मिल सकेगा। बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी आपको वहां पर बहुत समय तक ठहरना पड़ा और यहीं पर आपके पुत्र श्री जोगेन्द्रसिंह जी का जन्म हुआ। आखिर बहुत प्रयत्न के बाद बैंकोवर पहुँचने पर अनेक अड़चनों के बाद आपको जहाज से उतरने दिया गया।

अभी तक आप अधिकांशतया धार्मिक कार्यों में ही भाग ले रहे थे, किन्तु इस यात्रा के अनुभव ने आपके विचारों में एक नया परिवर्तन पैदा कर दिया। आपको यह विश्वास हो गया

कि गुलामों के लिये संसार के किसी भी कोने में स्थान नहीं है । और जब तक भारत की पराधीनता दूर नहीं होती , हमें इसी प्रकार पग पग पर अड़चनों का सामना करना पड़ेगा । प्रसंगवश इसी बीच अमेरिका से 'शदर' अखबार निकलना प्रारम्भ हुआ । उस समय भागसिंह जी ने भी जी खोल कर रुपये-पैसे से इस पत्र की सहायता की थी । इतना ही नहीं, वरन संयुक्त प्रान्त से निकलने पर भी 'शदर' अखबार तथा उसकी नीति का प्रचार अधिकांशतया कैनेडा में ही हुआ था ।

अभी इमिग्रेशन वालों से झगड़ा चल हो रहा था कि कामागाटामारू जहाज़ कैनेडा आ पहुँचा । इस जहाज़ वालों पर क्या २ अत्याचार हुए ? किन २ मुसीबतों का सामना उन लोगों को करना पड़ा ? और उन वीरों को सताने के लिये किन किन घृणित उपायों का प्रयोग किया गया । यह सब तो यहां पर नहीं दिया जा सकता, किन्तु जहां तक हमारे नायक से इसका सम्बन्ध है, उसका उल्लेख यहां पर किये देते हैं । इमिग्रेशन विभाग वालों ने जब इस जहाज़ को कहीं पर ठहराने की आज्ञा न दी तो श्री भागसिंह जी के प्रबन्ध से एक नया घाट खरीदा गया और वहीं पर उक्त जहाज़ को ठहराया गया । इसी बीच एक दूसरी चाल चली गई । जहाज़ के मालिक को अपनी ओर मिला कर इस बात पर राजी किया गया कि वह जहाज़ का किराया किश्त पर न लेकर, एक साथ ही पेशगी ले लें । जहाज़ वाले बड़ी मुसीबत में फँस गये । पास में इतना रुपया तो था नहीं । अभी कुछ सामान भी न बिक पाया था, अतएव करें तो क्या करें ? किन्तु भागसिंह जी तथा उनके मित्रों ने मिल कर किश्त का रुपया अदा किया और जहाज़ का चार्टर अपने नाम पर लिखवा लिया ।

यह सब प्रबन्ध कर चुकने के बाद साऊथ ब्रिटिश कोलम्बिया में अपने किन्हीं साथियों से इसी बात पर सलाह करने गये थे कि वहीं पर हरनामसिंह और बलवन्तसिंह जी के साथ आप गिरफ्तार कर लिये गये। किन्तु बाद आपको तथा बलवन्तसिंह जी को छोड़ दिया गया। उस समय जहाज़ वापस जाने के लिये तैयार था। बहुत से लोगों के पास खाने तक की रुपया नहीं रह गया था, इसलिये आपने आते ही उन लोगों की सहायता आदि का पूरा प्रबन्ध कर दिया।

जहाज़ की सहायता करने तथा स्वाधीनता का प्रचार करने के कारण आप इमीग्रेशन वालों की आंखों में बुरी तरह खटकने लगे। जोश में आकर कई बार उन लोगों ने कह भी डाला था कि इसे गोली से मरवा कर ही छोड़ेंगे। उस समय आपने इस बात को हँसकर टाल दिया था। और लोगों ने भी इस पर कोई विशेष ध्यान न दिया। उन्होंने सोचा, यह सब कहने की बातें हैं, ऐसा करने के लिये कोई विशेष साहसी पुरुष चाहिये।

एक दिन की बात है कि आप किसी सिक्ख का अन्तिम संस्कार कराकर आए, गुरुद्वारे में दीवान शुरू हुआ और आप गुरुग्रन्थ साहब का पाठ करने बैठे। सब काम शान्तिपूर्वक समाप्त हो गया और जब आप 'अरदास' के बाद मत्था टेकने के लिये झुके तो पीछे बैठे। हुए बेलसिंह ने पिस्तौल चलाया। गोली पीठ को पार करती हुई फेंफड़ों में आ रुकी। घातक को पकड़ने के व्यर्थ प्रयास में भाई वतनसिंह भी मारे गये। भागसिंह जी अस्पताल में लाए गये। आपरेशन पर भी आप पूर्णतया होश में रहे और बराबर लोगों को उत्साह देते रहे। जिस समय आपका लड़का आपके सामने लाया गया तो आपने कहा—“यह लड़का मेरा नहीं, वरन क़ौम का है, इसे दरबार में ले जाओ। मेरे पास क्यों लाए हो ?” उस समय कितने ही

मनुष्य आपके दर्शनों के लिये अस्पताल में मौजूद थे। अन्त में यह कहते हुए कि 'मेरी तो इच्छा थी कि आत्मादी की लड़ाई में आमने सामने दो चार हाथ करके प्राण देता, किन्तु भाग्य में बिस्तर पर पड़े पड़े ही मरना लिखा था। ख़ैर, ईश्वर की यही इच्छा थी।' अपनी इष्टलीला समाप्त कर गये। मृत्यु के समय आपकी अवस्था ४४ वर्ष की थी।

अन्त में घातक को अदालत ने यह कहने पर छोड़ दिया था कि "मैंने तो सब कुछ इमीग्रेशन विभाग के अध्यक्षों के कहने पर ही किया था। मैं सरकार का एक बफ़ादार नौकर हूँ और यदि मुझे इस समय गिरफ्तार न किया जाता तो मैं लड़ाई पर जाकर अपनी बफ़ादारी दिखाता।"

श्री सतेन्द्र कुमार वसु

मुजफ्फरपुर हत्याकाण्ड ३० अप्रैल सन् १९०८ ई० को हुआ था। इसके होते ही सारे बंगाल में तलाशियों और गिरफ्तारियों की धूम मच गई। कलकत्ते के प्रायः सभी अड्डों की तलाशियाँ हुईं और २ री मई १९०८ को बहुत से कार्य-कर्त्ता गिरफ्तार कर लिये गये। इन लोगों को अलीपुर जेल में रखा गया और सब पर मुकद्दमा चलाया गया। गिरफ्तारी से इन लोगों में कोई उदास तक नहीं हुआ, क्योंकि इस दिन की प्रतीक्षा बहुत पहले से थी। खूब चहल पहल और धूम धाम से इन लोगों के दिन बीत रहे थे कि एकाएक एक दिन मालूम हुआ कि श्रीरामपुर का नरेन्द्र गोसाईं सरकारी गवाह बनने जा रहा है। वह समिति का सारा भेद खोल देगा और इससे आशातीत हानि होगी। अतएव विश्वासघातक को दण्ड देना और समिति की रक्षा करने का कठिन कर्त्तव्य सारे कार्य-

कर्त्ताओं के सामने उपस्थित हो गया। विश्वासघातक को दण्ड देकर समिति की रक्षा कौन करे, यही समस्या सब के सामने थी।

जिन दिनों की यह बात है, उन्हीं दिनों मेदिनीपुर से श्रीयुत् सत्येन्द्रकुमार बसु, जिन्हें बिना लाइसेन्स अपने बड़े भाई की बन्दूक इस्तेमाल करने के अपराध में दो वर्ष का कठिन कारावास हुआ था, अलीपुर जेल में लाए गये; क्योंकि कलकत्ते के गिरफ्तार हुए लोगों से इनका घनिष्ठ-सम्बन्ध पाया गया और इनके ऊपर भी एक और नया मुकद्दमा चलाया गया।

स्वदेशी युग में मेदिनीपुर की समिति की बहुत ख्याति हुई थी। इसने बड़े २ कार्य किये थे। सत्येन्द्र बाबू ही इसके प्रधान संयोजक सम्झे जाते थे। जब वे मेदिनीपुर से अलीपुर जेल लाए गये, तब इन्हें नरेन्द्र गोसाईं के विश्वासघात की बात बतलाई गई। समिति के नियमानुसार उन्होंने भी विश्वासघातक को प्राण दण्ड देने की राय दी।

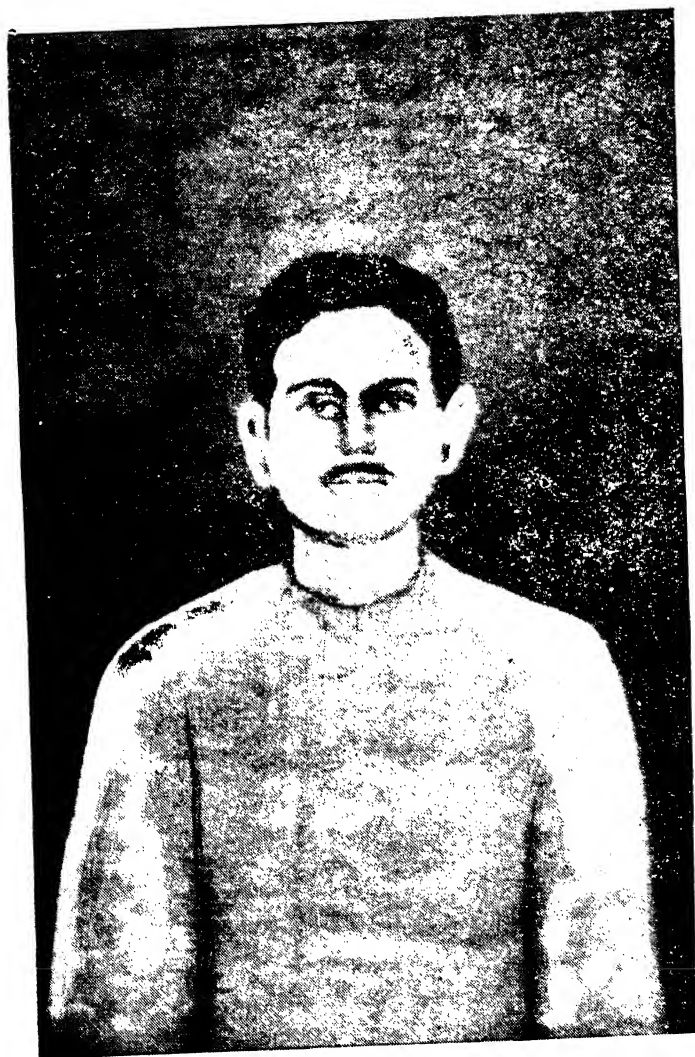
जब अरविन्द बाबू आदि कुछ नेताओं को छोड़ प्रायः सभी नरेन्द्र की हत्या के पक्ष में हो गये, तब निश्चय को कार्य-रूप में परिणत करने की सूझी। जेल के अन्दर नरेन्द्र की हत्या कैसे होगी, जबकि उसके साथ बराबर गार्ड रहते हैं। और वह अन्य कैदियों से बिल्कुल अलग रखा जाता है। हत्या का भार भी साधारण आदमी नहीं ले सकते थे, क्योंकि इस कार्य के लिये अत्यन्त विश्वस्त और कार्यकुशल व्यक्ति की आवश्यकता थी। अन्त में सबने मिलकर इस दुसह कार्य का भार इन्हीं सत्येन्द्र कुमार के ऊपर डाला।

कार्य भार लेकर आप बीमार पड़ गये और अस्पताल पहुँचाये गये। अस्पताल में नरेन्द्र से भेंट हुई। अपने ऊपर उसका विश्वास जमाने के लिये सत्येन्द्र ने उसके सामने अपने

को बहुत भयभीत प्रकट किया और कहा कि मैं भी तुम्हारा साथ दूंगा। धीरे-२ दोनों मिलकर गवाही की तैयारी करने लगे।

इधर जब तक सत्येन्द्र अस्पताल में थे, बाहरी लोगों के साथ भी पत्र व्यवहार प्रारम्भ हो गया और अन्त में रिवाल्वर भी मिल गया। सितम्बर में देवव्रत बाबू आदि के विरुद्ध नरेन्द्र की गवाही होने वाली थी। सत्येन्द्र जानते थे कि नरेन्द्र की गवाही से बहुत से दोषी और निर्दोषी फंस जायेंगे। अतः गवाही देने से पहले उसकी हत्या का विचार पक्का कर लिया गया। कुछ लोगों को इसकी सूचना भी दे दी। सूचना मिलने पर कन्हाईलाल दत्त पेट दर्द के बहाने अस्पताल पहुंचे और दोनों उत्सुकता से नरेन्द्र की बाट जोहने लगे।

पहली सितम्बर को नित्य के नियमानुसार अपने दो यूरोशियन अंगरक्षकों के साथ नरेन्द्र सत्येन्द्र के पास अस्पताल में आया और दुतल्ले की सीढ़ी के पास बैठ गया। सत्येन्द्र ने यह समझकर कि सामने का शिकार क्यों छोड़, अपने कुर्ते के नीचे हाथ कर नरेन्द्र के ऊपर गोली चलाई। पहली बार केवल आवाज़ होकर ही रह गई। आग नहीं जल सकी। इस पर कुर्ते से हाथ बाहर निकाल कर सत्येन्द्र ने दूसरा फायर किया। दूसरा बार करते देखकर हिगेन वाथम ने जो नरेन्द्र का अंगरक्षक था, सत्येन्द्र को पकड़ लिया। सत्येन्द्र ने उस पर भी गोली चलाई, जब उसके हाथ में चोट लगी तब वह इन्हें छोड़ कर अलग जा खड़ा हुआ। इधर यह हो रहा था, उधर नरेन्द्र दुतल्ले से नीचे उतरा। नीचे उतरता देखकर कन्हाईलाल दत्त ने उस पर वार किया। निशाना पैर में लगा, लेकिन फिर भी नरेन्द्र भागता ही गया। कन्हाईलाल ने नरेन्द्र का पीछा किया। सत्येन्द्र भी दौड़े और एक क़ैदी से पूछा—“नरेन्द्र



श्री० सत्येन्द्र कुमार बसु

किधर गया ?” कैदी ने धीरे से उंगली का इशारा किया और सत्येन्द्र दौड़ कर कन्हार्ले के साथ हो गया। दोनों गोली चलाने लगे और नरेन्द्र का काम तमाम हो गया।

दोनों पर मुकद्दमा चलाया गया और दोनों को प्राण दण्ड की सजा हुई। कन्हार्ले दत्त को २० वीं नवम्बर १९०८ को फांसी दी गई थी। आपकी मृत देह को पाकर बंगालियों ही ने नहीं, प्रत्युत समस्त भारतवासियों ने जो कलकत्ते में उपस्थित थे, महान उत्सव मनाया। यह देखकर सरकार ने सत्येन्द्र की लाश को जनता को नहीं दिया। फांसी के समय के दृश्य को तत्कालीन दर्शक श्री युत् कृष्ण कुमार मित्र ने इस प्रकार बताया है :—

“मैं उसकी फांसी के दिन स्वयं जेल में उपस्थित था। यद्यपि नितान्त हृदयहीन फांसी के दृश्य को मैं स्वयं न देख सका, किन्तु मेरे साथियों ने, जिन्होंने उस दृश्य को देखा था, तथा जेल के अधिकारियों ने, उसकी भूरि २ प्रशंसा की।” श्रीयुत् अविनाशचन्द्रराय जो सत्येन्द्र के पड़ोसी हैं और जिन्होंने उनके दाह-संस्कार का भार लिया था, अपने एक मित्र को पत्र लिखते हैं:—“मुझे सन् तारीख याद नहीं है। सत्येन्द्र की मां ने मेरे घर आकर कहा—सत्येन्द्र का बड़ा भाई ज्ञानू बीमार है, उसके अन्तिम संस्कार के लिये किसे भेजूं। अब आपही इस भार को स्वीकार करें। वृद्धा का आदेश मैं टाल नहीं सका। मैं प्रेमतोष बाबू से मिला। उनके प्रयत्न से दाह संस्कार के लिये बहुत आदमी तैयार हो गये। सत्येन्द्र का चचेरा भाई भी साहस करके हम लोगों के साथ हो लिया। मजिस्ट्रेट ने हमारे सामने यह शर्तें पेश कीं। १. जेल के बाहर दाह किया न हो। २. कोई आडम्बर और उत्सव न मनाया जाय। ३. कोई स्मृति चिह्न नहीं ले जा सकते। ४. जेल कर्मचारियों की उपस्थिति में

दाहकर्म होगा। ५. केवल १४-१५ आदमी इसमें भाग ले सकेंगे। इस प्रकार की शर्तें पेश करने का कारण कन्हारई की लाश का उत्सव था।

“फांसी के दिन प्रातःकाल ही हम लोग अलीपुर जेल के फाटक पर उपस्थित हुए। फांसी के निर्दय दृश्य को देखने की क्षमता हम लोगों में न थी। फांसी हो चुकने पर एक अंगरेज पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट आया और हम लोगों से कहा—You can go now. The thing is over. Satyendra died bravely. Kanai was brave, but it seems Satyendra was brave. अनुसन्धान करने पर एक सार्जेंट ने कहा—जब मैं सत्येन्द्र की कालकोठरी में फांसी पर चढ़ने के लिये उन्हें लेने गया तो मैंने देखा वह प्रसन्नचित्त है। मैंने कहा—सत्येन्द्र, तैय्यार हो जाओ। उसने उत्तर दिया—तैय्यार हूँ। और मुस्करा दिया। फांसी के तख्ते पर मस्ती के साथ भूमता हुआ गया और वीरतापूर्वक फांसी पर चढ़ गया। वह एक बहादुर युवक था।

“मृत्यु से पूर्व मैं अपनी पत्नी के साथ दो बार उनसे मिला था। दोनों बार वे प्रसन्नता से हम लोगों के साथ स्वदेशी आन्दोलन की चर्चा करते रहे। उनकी कुछ बातें आज भी याद हैं। उन्होंने कहा था—मेरे और कन्हारई के मरने से क्या हानि है? हमारे जैसे हज्जारों के मरने पर ही देश का उद्धार होगा। हमारी मृत्यु शोक मानने के लायक नहीं, बल्कि हर्ष मनाने लायक होगी?”

“एक बार मैंने कहा—तुम्हारी मां तुमसे मिलना चाहती है। उसने कहा—यदि वे यहां आकर रोवें नहीं, तभी मैं उनसे मिल सकता हूँ, अन्यथा नहीं।” वही हुआ। वीर माता ने पुत्र को बलिवेदी की ओर अग्रसर किया। रोते हुए नहीं,

बल्कि हंसते हुए। धन्य है ऐसी माता और ऐसे पुत्र को। नरेन्द्र की हत्या के बारे में पूछने पर उन्होंने हत्या करना स्वीकार किया था। मृत्यु के पश्चात् बंगाल के अनेक युवक और युवतियां इन दोनों की मूर्तियां बनाकर पूजते रहे।

जेल में उन्हें जिस अवस्था में रखा गया था, उसे देख कर मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा था। उन्हें कालकोठरी में रखा गया था। कोठरी पले हुए बाघ के पिंजड़े के सदृश्य थी। एक तरफ सीखचे थे, दूसरी तरफ दीवार, चार हाथ लम्बी और इतनी ही चौड़ी। सेल में सोना, बैठना, खाना पीना, पाखाना, पेशाब सब काम करना पड़ता था।

‘कड़े पहरे के बीच हम लोग उनसे मिलते थे। पुलिस के अतिरिक्त जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट मि० इमर्सन भी सामने रहते थे। दाह के समय आप प्रारम्भ से लेकर अन्त तक उपस्थित रहे और इस महान वीर की महान वीर गति को देखते रहे। हम लोग कोई स्मृति चिन्ह अपने साथ नहीं ला सके।’

चापेकर बन्धु

सन् १८६७ का साल था, अभी अन्य पाश्चात्य वस्तुओं की भांति भारत के गांव गांव में प्लेग का प्रचार न हुआ था। अस्तु, पूना में प्लेग फैलने पर सरकार की ओर से जब लोगों को घर छोड़कर बाहर चले जाने की आज्ञा हुई तो उनमें बड़ी अशान्ति हुई। उधर शिवाजी जयन्ती तथा गणेश पूजा आदि उत्सवों के कारण सरकार की वहां के हिन्दुओं पर अच्छी निगाह नहीं थी। वे दिन आजकल के समान नहीं थे। उस समय तो स्वराज्य तथा सुधार का नाम लेना भी अपराध समझा जाता था। लोगों के मकान खाली न करने पर सरकार को उन्हें दबाने का अच्छा अवसर हाथ आ गया। प्लेग कमिश्नर मिस्टर रेण्ड की ओट

लेकर कार्यकर्त्ताओं द्वारा खूब अत्याचार होने लगे। चारों ओर त्राहि त्राहि मच गई और सारे महाराष्ट्र में असन्तोष के बादल छा गये।

गवर्नमेंट हाउस पूना में विक्टोरिया का ६०वां राजदरबार बड़े समारोह के साथ मनाया गया। जिस समय मि० रेण्ड अपने एक मित्र के साथ उत्सव से वापस आ रहे थे, तो एका-एक पिस्तौल की आवाज़ हुई और देखते देखते रेण्ड महाशय ज़मीन पर आ गिरे। उनके मित्र अभी बच निकलने का मार्ग ही तलाश कर रहे थे कि एक और गोली ने उनका भी काम तमाम कर दिया। चारों ओर हल्ला मच गया और दामोदर चापेकर उसी स्थान पर गिरफ्तार कर लिये गये। यह घटना २२ जून १८६७ की है।

अदालत में आप पर, अपने छोटे भाई बालकृष्ण चापेकर तथा एक और साथी के साथ अभियोग चलाया गया। पकड़े जाने पर तीसरा साथी सरकारी गवाह बन गया और सारा भेद खुल गया।

किसी किसी उपवन में प्रायः सभी फूल एक दूसरे से बढ़कर ही निकलते हैं। दो फूल तो देवता के चरणों में तक पहुँच चुके थे, अब तीसरे की बारी आई। चापेकर भाइयों में सबसे छोटे ने आकर माँ के चरणों में प्रणाम किया और कहा—“माँ, दो फूल तो राम के काम आ गये, अब मैं भी उन्हीं के चरणों तक पहुँचने की आज्ञा लेने आया हूँ।” उस समय माता के मुख से एक शब्द भी न निकला। उसने बालक के मस्तक पर हाथ फेरते हुए उसका मुख चूम लिया।

एक दिन जब अदालत में चापेकर बन्धुओं की पेशी हो रही थी, तो उनके तीसरे भाई ने वहीं पर उस सरकारी गवाह को मार दिया। उस समय किसी को इस बात का ध्यान तक न

था कि वह छोटा सा लड़का प्रतिहिंसा की आग से इतना पागल हो उठेगा ।

अन्त में उन तीनों भाइयों को एक और साथी के साथ फांसी दे दी गई ।

श्री बसन्तोकुमार विश्वास

आप बंगाल के नदिया जिले के रहने वाले थे और जिस समय श्री रासबिहारी देहरादून में थे, आप उनके पास हरिदास के नाम से नौकर बनकर रहते रहे । बाद में १९१२ में आप लाहौर की एक डिस्पेन्सरी में कम्पाउन्डर हो गये थे ।

उस समय भाई बालमुकुन्द के साथ मिल कर आप पंजाब प्रान्त में विप्लवदल का संगठन करते थे । कहा जाता है कि जब १९१२ में दिल्ली में बम फटा था तो आप लाहौर से गायब थे ।

अवध बिहारी की सहायता से लाहौर लारेन्ल गार्डन का बम भी आपही का रखा हुआ बताया जाता है । बाद में आप दो और भी बम लाये थे जो दोनानाथ के कहे अनुसार भाई बाल मुकुन्द के पास रखे गए थे ।

दिसम्बर १९१३ में आप बंगाल चले गये और १९१४ में वहीं से गिरफ्तार कर लाहौर लाए गये । अदालत से पहले आपको आजन्म काले पानी की सजा मिली थी, किन्तु सर ओडायर को दिल्ली में बम फेंकने वाले का पता न लगने से बड़ा क्रोध आ रहा था और उसने आपको भी फांसी की सजा दी जाने की अपील की । इसे उसने स्वयं माना है । भला पुलिस की अपील और उस पर सिफारिश सर माईकेल ओडा-

यर की और फिर न मानी जाती। अस्तु आपको भी बाद में फांसी की सजा सुना दी गई।

आपके बारे में जज ने कहा था :—

“He looked to be a man of some force of character with none of the familiar marks of weakness in his face.”

फांसी के समय आपकी आयु केवल २३ वर्ष की थी।

श्री भाई वतनसिंह

वे वास्तव में क्या थे, इस बात को लोगों ने उनकी मृत्यु से पहले कभी भी न समझ पाया था। उनका साधारण सा जीवन था और उन्हें कभी नेता कहलाने का भी सौभाग्य नहीं मिला। फिन्तु फिर भी उनका हृदय देश-प्रेम से खाली न था। वे केवल मरना जानते थे और वह भी एक सच्चे वीर की भांति।

बाल्य-जीवन के सम्बन्ध में केवल इतना ही मालूम है कि पटियाला राज्य के ‘कुम्बड़वाल’ नामक गांव में पैदा हुए थे और पिता का नाम भाई भगेलसिंह जी था। आप में एक विशेष बात यह थी इन्हें भैंस पालने का बड़ा शौक था और इसी कारण कैनेडा में भी लोग इन्हें वतनसिंह मझियां वाला अर्थात् भैंस वाला कहा करते थे।

वाईस-तेइस वर्ष की आयु तक घर ही पर रहने के उपरान्त आप सेना में भरती हो गए। उस समय तक आपके जीवन का अधिकांश बर्मा में ही बीता था। फिर पांच साल के बाद

नौकरी छोड़कर घर वापस चले आए और दस साल तक मकान ही पर रहकर खेती आदि का काम करते रहे। किन्तु उन्हें तो भारतीयों के सामने एक उदाहरण उपस्थित करना था, अतएव इस प्रकार घर पर कब तक रह सकते थे। घर के कामों से जी उकताने लगा और अन्त में आप हांगकाँग की ओर चल दिए यहाँ पर पाँच साल तक जेल-पुलिस में गार्ड का काम करने के बाद आप कैनेडा पहुँचे।

वैङ्कोवर तो पहुँच गए, पर अब जायँ तो किसके पास। एक तो अपरिचित देश, फिर किसी से भी जान पहचान नहीं। बहुत खोज-खबर के बाद गुरुद्वारे का पता चला और आप वहीं जाकर ठहर गए। उस समय किसी को तो क्या, वतनसिंह जी स्वयं भी इस बात को न जानते थे कि एक दिन इसी गुरुद्वारे में मानव-समाज को वीरता का पाठ पढ़ाकर मुझे अपनी इह-लीला समाप्त करनी पड़ेगी। खैर, कुछ दिन वहाँ ठहरने के बाद आप मुड़ीपोर्ट के लकड़ी के कारखाने में भरती हो गए। इन दिनों भागसिंह जी इसी कारखाने में काम करते थे।

स्वाधीनता की लहर अभी जोरों पर न चली थी, इसलिए सिक्ख लोगों का ध्यान विशेषकर आपस में विद्या प्रचार ही की ओर अधिक था। हमारे नायक भी जब कभी अवकाश पाते तो इन्हीं बातों की चर्चा किया करते।

सन् १९११ ई० में वतनसिंहजी फिर वैङ्कोवर आगए। राइट-पोर्ट काम करने के साथ-सत्सङ्ग का अच्छा अवसर हाथ आया देख आपने नित्य ही गुरुद्वारा जाना आरम्भ कर दिया। एक साल तक आप गुरुद्वारा कमेटी के मेम्बर भी रहे थे। आपकी कार्य-तत्परता से लोग आपको बहुत मानने लगे थे।

इसके बाद वही पुरानी कथा है। वही इमिग्रेशन वालों से

भगड़ा, वही अत्याचार, वही आन्दोलन और वही भाई भागसिंह तथा बलवन्तसिंह के मरने का षड्यन्त्र। उस समय लोग सैकड़ों की संख्या में भारत की ओर वापस आ रहे थे। कहते हैं कि यह षड्यन्त्र इसलिए रचा गया था कि सिक्खों का कोई भी नेता भारत में वापस आकर यहाँ भी उसी प्रकार के विचारों का प्रचार न कर सके। खैर, जो हो, उस दिन जब दीवान में बेलासिंह ने भाई भागसिंह जी पर गोली चलाई तो वतनसिंह जी भी उनके पास में ही बैठे थे। भागसिंह को घायल होते देख आपने गरज कर घातक को ललकारा। बस अब क्या था, दूसरी गोली बलवन्तसिंह की ओर न जाकर, हमारे नायक के वक्षस्थल में समा गई। वीर का जोश चोट खाकर ही जागता है। आप सिंह की भाँति गरज कर उसी ओर दौड़े। लो, दूसरी गोली भी सीने के बीच में ही रह गई! किन्तु इससे क्या, वतनसिंह बढ़ते ही चले गए और अन्त को सात गोलियाँ लग चुकने के बाद आपने घातक की गर्दन पकड़ ही तो ली, परन्तु शक्ति अधिक क्षीण हो जाने के कारण बेलासिंह छुड़ाकर भाग गया और आप सदैव के लिय गहरी नींद में सो गए। जिस गुरुद्वारे में अभी थोड़ी देर पहले निस्तब्धता का राज्य था, वही अब रणभूमि बन गया। चारों ओर हाहाकार मच गया। अभी एक भाई के विछोह का दुख भूला भी न था कि दो रत्न और छिन गए।

भाई वतनसिंह जी अब नहीं हैं। पर पचास वर्ष की आयु में उन्होंने एक सच्चे वीर की भाँति प्राण देकर जो उदाहरण इतिहास के पृष्ठों में अङ्कित किया है, वह सदैव के लिए अमिट रहेगा।

श्री मेवासिंह

विपत्ति के आँगन में खेल कर भी जिन लोगों ने सदैव ही

पीछे रह कर कार्य करने की चेष्टा की है—इसलिए नहीं कि वे डरते थे, किन्तु इसलिए कि आगे बढ़ कर वाह-वाही लेने की इच्छा ही कभी उनमें उत्पन्न नहीं हुई—ऐसे लोगों के बाल्यकाल से ही यदि ज्योतिषी लोग यह जता दिया करें कि यह किसी दिन पगले विसवी बनकर अपना सर्वस्व लुटा देंगे, किसी दिन ये उन्मत्त होकर 'धरि मृत्यु साथे पञ्चा' नाचते-नाचते फाँसी के तख्ते पर जा खड़े होंगे, तो शायद उनका जीवन-वृत्तान्त पूरे तौर पर लिखा जा सके। किन्तु वे तो संसार के न जाने किस कोने से अचानक आकर मानव-समाज के चरणों पर एकाएक अपना सर्वस्व लुटाकर चले गए। उस दिन आश्चर्य से लोगों ने उनकी ओर देखा। भक्ति तथा श्रद्धा के फूल भी चढ़ाए। किन्तु फिर भी उनके विद्रोही जीवन की दो-चार घटनाओं को एकत्रित कर प्रकाशित करने की परवाह किसी ने भी न की। आज यदि ऐसे आदर्शवादी का जीवन-वृत्तान्त लिखने बैठें तो लिख ही क्या सकते हैं।

अज्ञात विसवी हमारे नायक श्री० मेवासिंह का जन्म अमृतसर जिले के एक साधारण से गाँव 'लोपोके' में हुआ था। बस, वंश तथा बाल्यजीवन का इतना ही ज्ञान पर्याप्त है। वे साधारण कृषक थे और खेती-बाड़ी करते थे। कनेडा आदि की ओर आए-दिन अनेकानेक लोगों को जाते देख आप भी वहीं चले गये थे। आपका ईश्वर-भक्ति की ओर विशेष झुकाव था।

कनेडा में भारतवासियों पर किए गए अत्याचार, अन्याय और घृणित व्यवहार से आपके हृदय को एक विशेष चोट लगी। कामागाटा मारु के सम्बन्ध में जब श्री भागसिंह जी और बलवन्तसिंह जी किन्हीं अन्य सहकारियों से कुछ मन्त्रणा करने दूर दक्षिण की ओर निकल गए थे और इमिग्रेशन

विभाग वालों ने उन्हें पकड़कर 'सुभास' जेल में बन्द कर दिया था तब आप भी उनके साथ थे। परन्तु आपको केवल इतना कहने पर ही कि इधर योंही चले आए थे, छोड़ दिया गया था। बाद में आप गुरु नानक माइनिङ्ग कम्पनी के हिस्सेदार भी बन गए थे।

दीवान हो रहा था। श्री० भागसिंह जी गुरु-ग्रन्थ साहब का पाठ कर रहे थे और श्री० वतनसिंह जी उन्हीं के पास बैठे थे। एकाएक सभा की निस्तब्धता भङ्ग करते हुए एक पिस्तौल की आवाज आई और देखते-देखते श्री० भागसिंह जी और श्री० वतनसिंह जी सदा के लिए धराशायी हो गए। देश-द्रोही बेलासिंह के इस घृणित कार्य को देखकर हृदय वेदना से कराह उठा। उन्हें गुरु-ग्रन्थ साहब का पाठ करते समय गोली से मार दिया जाना असह्य हो उठा। अभियोग चलने पर कातिल ने बयान किया कि इमिग्रेशन विभाग के अध्यक्षों ने ही मुझे ऐसा करने के लिए कहा था। गुलाम भारतवासियों की दुर्देशा का रक्त-रञ्जित चित्र देख कर उनकी आँखों में आँसू आ गए। क्योंकि वे पराधीन थे, इसलिए उनसे सब जगह घृणा की जाती थी। क्योंकि वे गुलाम थे, इसलिए उन पर सब तरह के अत्याचार ढाए जाते थे और क्योंकि वे पराए दास थे, इसीलिए उनके नेताओं को योंही मरवा दिया गया। इन सब बातों से उनके हृदय पर एक गहरी चोट लगी। उन्होंने अपनी आन्तरिक वेदना को छिपाने के लिए ईश्वर-भजनकी ओर विशेष ध्यान देना शुरू कर दिया। परन्तु इस पर भी आपने दो-एक बार बड़े वेदनाभरे स्वर से कहा था, "यह अपमानित और पराधीनता का पद-पद पर ठुकराया जाने वाला जीवन अब असह्य हो उठा है।" उस समय उनके इन वाक्यों पर किसी ने ध्यान भी न दिया था।

वे 'विसव-यज्ञ' की प्रगाढ़ रचना के दिन थे। लोगों ने

रायफल तथा रिवाल्वर चलाने का अभ्यास शुरू कर दिया था। कहते हैं, हमारे नायक ने भी एक सौ रुपए की गोलियाँ फूँक डाली थीं। उनकी इस बात पर भी किसी ने कुछ विशेष ध्यान न दिया। एक दिन जाकर अपना फोटो बनवा लाए। यही उनका अपने घर वालों के लिए अन्तिम अमूल्य उपहार था।

उस दिन मुकद्दमे की पेशी थी। इमिग्रेशन विभाग के मुख्याधिकारी मि० हॉपकिन्सन (Hopkinson) भी पेश होने आए थे। सब कार्य शान्तिपूर्वक हो रहा था कि एकाएक गोली चली और पूर्व इसके कि फायर करने वाले की ओर कोई ध्यान दे सकता, हॉपकिन्सन सदा के लिए धराशायी हो गए। निशाना अचूक बैठा। वह १००) सफल हो गया। जज लोग कुर्सियों के नीचे जा छिपे और वकील लोग गिरते पड़ते बाहर की ओर भाग चले। हॉपकिन्सन को गिरता देख आपने अपना रिवाल्वर जज की मेज पर रख कर उच्च स्वर से कहा—“मैं भागना नहीं चाहता। आप लोग शान्त हूँ। मैं पागल नहीं हूँ। और किसी पर गोली नहीं चलाऊंगा। मेरा कार्य सफल हो चुका।” इसके बाद पुलिस वालों को पुकार कर चुपचाप आत्म-समर्पण कर दिया। उथल-पुथल में चाहते तो भाग जाते, पर उस वीर विल्ली की इच्छा अब और जीने की न थी। पतित, पराधीन तथा पददलित भारत में अभी तक प्राणों का कोई अंश शेष है, यही वे आत्मबलिदान से सिद्ध करना चाहते थे। आज भी वे अपमान का प्रतिकार कर सकते हैं, आज भी वे राष्ट्रीय अपमान का बदला ले सकते हैं, यही जताने के लिए उन्होंने यह सब किया था।

गिरफ्तारी के बाद बयान लेते समय जब आपसे हॉपकिन्सन को मारने का कारण पूछा गया तो आपने प्रश्न किया—

“क्या हॉपकिन्सन सचमूच मर गया ?” उत्तर में “हाँ” सुनकर आप बड़े जोरों से हँस दिए। कहा—“आज मुझे वास्तविक आनन्द प्राप्त हुआ है।” पूछने पर आपने कहा—“हॉपकिन्सन को जान-बूझ कर कत्ल किया है। यह बदला है, देश तथा धर्म के अपमान का; यह बदला है, हमारे दो अमूल्य रत्नों की हत्या का। मैं तो मि० रीड (हॉपकिन्सन के दूसरे साथी) को भी मारने के विचार से आया था, परन्तु वहाँ न होने के कारण वह बच गया।”

हॉपकिन्सन की स्त्री ने अपने पति की हत्या का समाचार सुनकर कहा था कि मैं उस वीर के दर्शन करना चाहती हूँ, जिसने मेरे पति को भरी कचहरी में गोली से मारा है, और इस धैर्य के साथ आत्म-समर्पण किया है।

इस घटना के बाद कैनेडा में भारतीयों को किसी ने घृणित शब्दों से सम्बोधित नहीं किया।

अभियोग चलने पर आपने वीरतापूर्वक सारा अपराध स्वीकार कर लिया। मृत्यु-दण्ड सुनाए जाने के बाद से तो आप पर एक नशा-सा छा गया। आनन्द की सीमा न रही। फाँसी के दिन तक आपका वजन १३ पाउण्ड बढ़ गया था।

फाँसी के दिन जेल के बाहर तपस्वी के अन्तिम पुण्यदर्शन के लिए कैनेडा-स्थित प्रवासी भारतीयों का मानव-समुद्र उमड़ आया था। इस समुद्र में गोरे लोगों की संख्या भी कुछ कम न थी। नियमानुसार मरने से पहले पादरी अथवा पुरोहित का मिलना आवश्यक था। अस्तु, भाई मितसिंह जी अन्दर गए। ईश्वर-भजन के बाद आपने अपना अन्तिम सन्देश दिया। शब्द साधारण है, किन्तु भाव ऊँचे और देश-भक्ति पूर्ण हैं। आपने कहा:—

‘बाहर जाकर सभी भारतवासियों से और विशेषकर

राष्ट्रीय कार्यकर्त्तृओं से कह देना कि इस गुलामी, और पराधीनता के अभिशाप से बच निकलने के लिए जोरों से प्रयत्न करें। परन्तु कार्य तभी हो सकेगा, जब उनमें इलाकेवन्दी और मजहबी असहनशीलता बिलकुल न रहे। न माफ़े, मालवे और दोआबे ॐ के प्रश्न उठें और न हिन्दू, मुस्लिम और सिक्ख विभिन्न मजहबों के प्रश्न उठें। और जा मुझे प्यार करने वाले सम्बन्धी अथवा मित्र हैं, उनसे तो मेरा विशेष आग्रह है।

बात करते-करते मितसिंह जी की आँखों में आँसू आ गए। इस पर आप बहुत नाराज हुए। आपने कहा—अच्छा मेरा साहस बढ़ाने आए थे, आप ही रोने लगे। जरा सोचिए तो सही, फिर हमारी क्या दशा होनी चाहिए। और ऐसी मृत्यु तो कहीं सौभाग्य से प्राप्त होती है, उस पर हर्ष और चाव न दिखाकर, इस तरह शोक करना तो एकदम अनुचित है।

अन्त को वही घड़ी आ गई। ओह ! देखो तो वह पगला किस चाव से फाँसी के तख्ते की ओर बढ़ रहा है। भय और चिन्ता तो उसके पास तक नहीं है। आखिर यह शब्द गाते हुए “हरि-यश, रे मन ! गाय ले जो सङ्गी है तेरा” आप फाँसी के तख्ते पर जा खड़े हुए। इसके बाद क्या हुआ, सो पाठक स्वयं ही समझ लें। गुरु गोबिन्दसिंह का अनुयायी ‘सर धर तली’ प्रेम की गली में प्रेम खेलने आया था, सर दे गया।

शव के स्वागत के लिए मानव-समुद्र पहले ही से बाहर हिलोरें ले रहा था, अतः बड़ी शान से जुलूस निकाला गया।

ॐ दो-आब सतलज और व्यास के बीच का इलाका है। मालवा सतलज के पूर्व का (फीरोज़पुर वगैरा) प्रदेश है। माफ़ा, रावी और व्यास के बीच का (लाहौर और अमृतसर) भाग है। सिक्खोंमें इन इलाकों का कुछ झगड़ा बहुत दिनों से चला आता है।

आज इन्द्र देवता भी अपने पर काबू न रख सके, खूब वर्षा होने लगी। किन्तु जुलूस कम न हुआ। यहाँ तक कि अङ्गरेज-स्त्रियाँ भी उसका साथ न छोड़ सकीं। अन्तिम संस्कार के बाद एक सप्ताह तक गुरुद्वारे में उत्सव मनाया गया था।

श्री काशीराम

आप उन्हीं अज्ञात सप्तऋषियों में से एक हैं, जिन्हें न्याय-प्रिय सरकार ने फ़ीरोज़पुर ज़िले में एक गांव के पास मारे जाने वाले थानेदार की हत्या के अपराध में सदा के लिए भारत की गोद से उठा लिया था और अन्त में वास्तविक अपराधी के मिल जाने पर केवल इतना कह कर कि “जो सात मनुष्य पहले फांसी पर लटकाए गए थे, वे वास्तविक अपराधी न थे और असल अपराधी तो यह है, जिसे हम आज फांसी दे रहे हैं।” अपने दायित्व से अलग हो गई थी। अस्तु !

पण्डित काशीराम जी का जन्म अम्बाला ज़िले के ‘बड़ी मड़ौली’ नामक गांव में भादों सुदी द्वादशी, सम्बत् १९३८ में श्री० पण्डित गङ्गाराम जी के घर हुआ था। घर वालों ने दश वर्ष की ही अवस्था में आपकी शादी कर दी थी, किन्तु आज्ञादी की शराब पीने वालों को स्त्री-बच्चों का मोह रोक कर घर पर नहीं रख सकता। अस्तु, पटियाला से इन्ट्रेंस पास करने के बाद आप घर से इस प्रकार बाहर हुए कि फिर १९१४ में कुछ घण्टों के लिए ही अपने गांव में वापस आए। इसी विछोह में आपकी स्त्री का शरीरान्त भी हो गया था।

पढ़ाई समाप्त कर, कुछ दिन तार का काम सीखने के बाद आप अम्बाला ज़िला-दफ़्तर में ३०) मासिक पर नौकर हो गए। बाद में कुछ दिन दिल्ली में ६०) मासिक पर नौकरी कर, आप हाँगाँग चले गए और अन्त में अमेरिका जाकर एक बारूद

के कारखाने में २००) मासिक पर नौकर हो गए। किन्तु बाद में गुलामी कह कर छोड़ दिया और एक टापू की सोने की कान का ठेका ले लिया।

इसी बीच अमेरिका से भारत आने की लहर चली और आप भी एक जत्थे के साथ २५ या २६ नवंबर, सन् १९१४ में भारत आ गए। देश आने पर एक बार फिर उसी स्थान के देखने की इच्छा से, जहां की धूल में खेलकर आपका बाल्यकाल बीता था, वे अपने गाँव पहुँचे। यह समाचार बिजली की भाँति सारे गाँव में फैल गया और आपसे मिलने के लिए एक अच्छी भीड़ जमा हो गई। आपने अवसर हाथ आया देख, वहीं पर ग़दर के सम्बन्ध में एक व्याख्यान दे डाला।

कुछ घण्टे मकान पर ठहरने के बाद, यह कह कर कि लाहौर नेशनल बैङ्क में मेरे तीस हज़ार रुपए जमा हैं, उन्हें लेने जाता हूँ, आप फिर घर से बाहर हुए। गाँव वालों के लिए आपका यह अन्तिम पुण्य-दर्शन था। वे फिर लौट कर वहाँ न आए।

लाहौर आने पर कुछ साथियों समेत फ़ीरोज़पुर भेजे गए। वहाँ पुलिस से मुठभेड़ हो गई। गोली चली और थानेदार मारा गया, बाद को जङ्गल में १३ साथियों में से ७ गिरफ़्तार हो गए। कुछ मारे गए। इन सात में से एक हमारे नायक भी थे।

पाँच महीने तक फ़ीरोज़पुर में न्याय-नाटक के बाद आप सातों तितर-वितर कर दिए गए। किन्तु बाद में यह कह कर कि मिश्री गाँव के पाम होने वाले डाके, कत्ल आदि सभी बातों का उत्तरदायित्व इन्हीं लोगों पर है, सब को फाँसी दे दी गई !

जिनके लिए उन्होंने अपना सर्वस्व कौड़ी के समान लुटा दिया, और जिसके दुखों से कातर हो, रोती हुई वृद्धा माता की इकलौती गोद को सूनी कर उन्होंने संन्यासी का वेष धारण

किया था, उन्हीं गाँव वालों ने उनके फाँसी हो जाने पर यह कह कर खुशी मनाई कि सरकार बहादुर ने डाकूओं को फाँसी पर चढ़ाकर हम पर बड़ा एहसान किया। किन्तु विस्रवियों के जीवन में यह तो एक मामूली सी बात है। उनका तो उद्देश्य ही—Unwept, unhonoured and unsung जाना है। संसार उन्हें किस नाम से पुकारता है, इस पर विचार करने का अवकाश भी उन्हें नहीं मिलता और न वे कभी इसकी परवा करते हैं। वे संसार के विचार से तो कभी इन मार्ग पर नहीं आते। वे तो केवल अपने आपको ही संतुष्ट देखना चाहते हैं।

पण्डित जी लाहौर-सेंट्रल जेल में बंद थे। पिता ने आकर रोना-पीटना शुरू कर दिया “बेटा, क्या तुम्हें मेरी इस वृद्धावस्था पर तनिक भी तरस नहीं आता। तुम्हारी माँ तुम्हारे विछो में अभी से पागल हो गई है। मैंने तो सोचा था कि बड़े होकर तुम कुछ सुख पहुँचाओगे, किन्तु नहीं जानता था कि तुम इतने निर्मोही हो। तुमने हमारी तनिक भी सुध न ली। अब हम शेष जीवन किसके सहारे पर व्यतीत करेंगे।”

तपस्वी ने एक लम्बी साँस ली और कहा—“पूज्यवर, इस व्यर्थ के माया-जाल से क्या होगा? इस संसार में न कोई किसी का पुत्र है और न कोई किसी का पिता। यह सब मन की भावना-मात्र है, अतः इसके लिए व्यर्थ में अपने को दुखी न बताएँ। रही बात खाने-पीने की, सो जिस सर्व-नियन्ता ने हमें पैदा किया है, उसे हर समय, हर स्थान पर अपने सभी पुत्रों का ध्यान है। मेरे समवयस्क सभी भारतीयों को अपना ही पुत्र समझ कर, एक उसी पर विश्वास कीजिए।”

भाई को आता देखकर आपने कहा—“खबरदार, आँखों में आँसू न लाना। मैंने कोई पाप नहीं किया है, और इस प्रकार



रहमत अलीशाह



सोहन लाल पाठक



श्री० केहरसिंह



श्री० विष्णु गणेश पिंगले

मरने पर मुझे देश-भक्तों के चरणों में स्थान मिलेगा । मैं इसी को अपना अहोभाग्य समझता हूँ ।”

अन्त में घर वालों ने फिर भी न माना और आपकी अपील की, किन्तु उसके निर्णय के पल्ले ही आप फाँसी पर लटका दिए गए थे ।

श्री० गन्धासिंह

लाहौर जिले के 'कच्छरमन' नामक गाँव में आपका जन्म हुआ था । उस समय लोग इन्हें भाई भगतसिंह के नाम से पुकारा करते थे । बाद में सिक्खधर्म की दीक्षा लेने पर आपका नाम भाई रामसिंह रक्खा गया, किन्तु प्रसिद्ध नाम भाई गन्धासिंह पड़ा । आप छोटी अवस्था में ही अमेरिका चले गए थे । १९१४ और १५ में अमेरिका की गद्दर-पार्टी के आप एक प्रमुख नेता थे । और अन्त में जब पार्टी की ओर से भारत में आकर प्रचार करने की बात निश्चय हुई, तो सबसे पहले आप अपने एक मित्र को साथ लेकर भारत की ओर चल दिए । आपके भारत आने के कुछ ही दिनों बाद बजबज घाट पर गोली चल गई और बाहर से कलकत्ते का टिकट लेकर आने वाले यात्रियों पर कड़ा पहरा लगा दिया गया । अमेरिका से भारत आने वाले यात्रियों को अपने हो देश में उतरना कठिन ही नहीं, वरन् असम्भव-सा हो उठा । अतः परिस्थिति को बहुत भयानक रूप धारण करते देख, आप अपने मित्र के साथ भट हाँगकाँग आ गए और वहाँ से जो भारतीय कलकत्ते के टिकट पर भारत आने की तैयारी कर रहे थे, उनके टिकट बदलवा कर बम्बई और मद्रास के टिकट लेकर जाने को बाध्य किया । १९१४ और १५ पञ्जाब के अन्तर्गत जो भी थोड़ी-बहुत विसव की योजना हो सकी थी, वह इन्हीं हमारे नायक द्वारा बचाए गए सिक्खों को लेकर ही हुई थी ।

हाँगकाँग से वापस आकर गन्धासिंह पूरी ताकत से इधर-उधर घूम कर विप्लव का प्रचार करने लगे। गर्मी के दिनों में सारे दिन पैदल चलने के बाद भी वे थकते न थे। निराशा तो कभी उनके पास तक नहीं आई। शायद इन सब का कारण यही था कि उन्होंने कार्य क्षेत्र में आने के पूर्व ही मरने का पाठ भली प्रकार सीख लिया था। वे प्रायः कहा करते थे कि अमेरिका से चलते समय कई रातें मन को यही समझाने में बिताई थीं कि वहाँ जाकर फाँसी निश्चय है और जब बार-बार मना करने और समझने पर भी मन ने अपना निश्चय नहीं छोड़ा तभी यहाँ का टिकट खरीदा था। खैर, साराँश यह कि वे उत्साह की एक जीती-जागती प्रतिमूर्ति थे और उनमें असीम साहस था।

एक दिन की बात है कि आप अपने दस-पन्द्रह साथियों समेत फ़ीरोज़पुर के 'घलखुर्द' नामक गाँव के पास मार्ग में जा रहे थे कि पुलिस ने आ घेरा। सरकार बहादुर ने उन्हें स्वयं अपने हाथों से पाला था और शायद इसी बेहोशी में थानेदार साहब ने आपके एक साथी को गालियाँ देते हुए एक तमाचा लगा दिया। घर पर मां बाप ने कभी एक बात भी न कही थी। अस्तु, युवक इस चोट को सह न सका और उसकी आंखों में आंसू आ गए। एक स्वाधीन देश के जलवायु में पला हुआ और स्वाधीनता के लिए घर-बार पर लात मार कर गली-गली पागलों की भाँति घूमने वाला आत्माभिमानि भला इस अपमान को कब सहन कर सकता था ? देखते-देखते गन्धासिंह की गोली का निशाना बन कर थानेदार साहब ज़मीन पर आ गिरे। साथ ही एक ज़ियातदार (तहसील वसूल करने वाला) भी मारा गया। इस घटना के बाद आपके साथियों के तितर-बितर हो जाने के कारण कुछ आदमियों का जङ्गल में फिर पुलिस के साथ सामना हो गया। ये लोग तो मरने की दीक्षा लेकर ही

घरों से बाहर हुए थे, इसलिए दोनों ओर से गोली चलने लगी। अन्त में गोली-बारूद के समाप्त हो जाने पर कुछ लोग तो वहीं पर मर गए और बाकी सात मनुष्य पुलिस के हाथ आ गए। न्याय नाटक में इन सातों को ही फांसी का पुरस्कार मिला और १६१४ के शीत काल के दिनों में वे सातों साथी दूर—बहुत दूर—अपने पिता के पास इस नाटक का हवाला कहने चले गए।

जिस देश पर दीवाने होकर उन्होंने गली-गली को धूल छानी और अन्त में जिसकी वेदी पर अपना सर्वस्व लुटा कर प्राणों तक की आहुति चढ़ा गए, उसी देश के रहने वालों ने उनके नाम तो क्या, यह तक न जाना कि वे कब, कहाँ, क्यों और किस देश में विलीन हो गए।

दिन योंही गुलामी में बसर होते हैं सारे।

एक आह तुम जैसों के लिए भी नहीं भरते ॥

हमारे नायक श्री० गंधासिंह को अभी कुछ और दुनिया देखनी थी, अतः इस बार वे पुलिस के हाथ न आए। उन्होंने स्थान-स्थान पर जाकर फिर वही प्रचार कार्य आरम्भ कर दिया। इस समय पुलिस पर आप का इतना रोब जम गया था कि गिरफ्तारी का अवसर मिलने पर भी वे लोग आप पर हाथ नहीं डालते थे।

खन्ना के पास एक गाँव में दीवान हो रहा। था वहीं पर ज्ञानी नत्थासिंह नामक एक मास्टर से अपकी मुलाकात हुई। यह व्यक्ति लुधियाना खालसा-हाई स्कूल में नौकर था। यह गन्धासिंह को अपने साथ लिवा ले गया। मार्ग में एक स्थान पर बहुत से आदमी खड़े थे। उनके बीच में पहुँचने पर देशद्रोही नत्थासिंह ने आप को पीछे से पकड़ लिया। इतने में ही और लोग भी आप पर आ दूटे। अनायास कितने ही लोगों के बीच में

पड़ जाने के कारण आप कुछ भी न कर सके। उस समय मास्टर :
कहा—“कि अब तुम गिरफ्तार हो गए ?” आप को गाँव लाया गया
और हाथ पीछे बाँध कर एक कोठरी में बन्द कर दिया गया।

जिन वीर का नाम सुनकर पंजाब की पुलिस काँप उठती
थी जिनकी ओर आँख उठा कर देखने का साहस भी कभी
किसी को न हुआ और जिनके आतङ्क से कितनी ही बार स्वयं
पुलिस वालों ने उसे हाथ में आता जान कर भी उस पर हाथ
नहीं डाला, वही वीर एक अपने ही भाई के विश्वासघात
के कारण एक छोटी-सी कोठरी में हाथ बंधे हुए मुँह के अल
धूल में लोट रहा है। आज वह पराया बन्दी है, आजाद
खिलाड़ी नहीं।

रात भर इसी प्रकार पड़े रहने के बाद दूसरे दिन प्रातःकाल
पुलिस कप्तान ने आकर कोठरी का दरवाजा खुलवाया। इस
रात के पहरे में जेल के अन्दर अपने और साथियों से गिरफ्तारी
का वयान करते समय आपने कहा था—“उस रात मेरे हाथ
फूल कर जङ्घा के समान हो गए थे और उस कष्ट के सामने
फाँसी मुझे बिल्कुल आसान जान पड़ती थी।”

आप पर वही—थानेदार के मारने के—अपराध में अभि-
योग चलाया गया और फाँसी की सजा मिली। उस समय जज
ने अपने फ़ैसले में लिखा था कि “जो सात आदमी पहले
फाँसी पर चढ़ाए गए थे, वे वास्तविक अपराधी न थे। असल
अपराधी तो यह है, जिसे हम आज फाँसी दे रहे हैं।” बलि-
हारी है ऐसे न्याय की !

फाँसी सुनाई जाने के बाद तो आपकी खुशी का ठिकाना
न रहा। उस समय एक अंगरेज़ सार्जेंट ने अपने साथी से
कहा—“आज हमने गन्धासिंह के दर्शन किए हैं। वह बड़ा

(१४१)

खुश है और इस प्रकार सर हिलहिला कर बातें करता है, मानो उस पर एक प्रकार का नशा-सा छाया हुआ है ।”

८ मार्च, १९१६ का दिन था । प्रातः काल के पांच बजे थे । नहाने के लिये पानी लाने वाले ने कहा—“क्या आपको पता है कि आज फाँसी दी जाएगी ?” आपने बिल्कुल साधारण तौर पर उत्तर दिया—“फाँसी मेरे लिए कोई नई बात नहीं है । मैं जिस दिन अमेरिका से चला था, उसी दिन फाँसी लग चुकी थी ।”

फाँसी हो चुकने के बाद एक वार्डर ने कहा था—“मैंने अपनी तीस साल की नौकरी में कुल १२५ आर्दामियों को अपने ही हाथों फाँसी पर चढ़ाया । उसमें प्रायः सभी तरह के मनुष्य शामिल हैं किंतु जो साहस, जो हौसला और जो उत्साह मैंने गंधारिंह में देखा, वह और किसी में भी न देखा था ।” उस समय उनकी बहादुरी से प्रभावित होकर जेल-कर्मचारी भी रो पड़े थे ।

श्री० बी० जी० पिङ्गले

फटे हुए माता के अंचल को बढ़ कर सीने वाले ।

तुम्हें बधाई है ओ पागल मरकर भी जीने वाले ॥

पूना के पहाड़ी प्रदेश में श्री० गणेश पिङ्गले के यहां जन्म पाकर, अर्थात् उनका दचपन बीतने भी न पाया था कि गुलामी के थपेड़े से वह भावुक हृदय कराह उठा । घर वालों ने इस्त्रीनियरिङ्ग की शिक्षा पाने के लिये उन्हें अमेरिका भेज दिया । बस, वहीं पर उन्होंने विप्लवदल की दीक्षा ली और फिर भारत को वापस आ गये । उस बेचैन हृदय ने अब एक क्षण भी बेकार खोना गवारा न किया । भारत में आने पर घर न जाकर, पिङ्गले सीधे बंगाल पहुँचे और वहां के क्रांतिकारियों को पखाव के

बलवे की सूचना देकर उनसे सम्बन्ध स्थापित किया। पञ्जाब तथा बङ्गाल के दलों के मिल जाने पर कार्य जोरों से होने लगा। अधिक से अधिक तादाद में बम बनाने की व्यवस्था की गई और सङ्गठन को काफ़ी विस्तार दिया गया।

रास बिहारी के दल से मिलकर पिङ्गले काशी पहुँचे। दो-तीन दिन वहाँ रहने के बाद कुछ लोगों ने उनसे पञ्जाब जाने का अनुरोध किया। अस्तु, अधिक से अधिक संख्या में बम भेजने को कह कर पिङ्गले पञ्जाब पहुँचे और एक ही सप्ताह में वहाँ की सारी व्यवस्था जान कर फिर काशी वापस आ गये। इस बार वे रासबिहारी को पञ्जाब ले जाने के लिये ही आए थे, किन्तु कारणवश उनके स्थान पर सचोन्द्रनाथ सान्याल को ही जाना पड़ा। एक साधारण से हिन्दुस्तानी के वेष में सचीन्द्र को साथ लेकर पिङ्गले अमृतसर के एक गुरुद्वारे में पहुँचे। इन्हें पञ्जाबी बोलने का अच्छा अभ्यास था। अस्तु, कुछ दिन वहाँ ठहर कर सङ्गठन को और भी दृढ़ बनाया गया। उस समय पिङ्गले तथा करतारसिंह ही पञ्जाब के आन्दोलन की जान थे। सब ठीक हो जाने पर रासबिहारी भी पञ्जाब आ गये। विप्लव का आयोजन जोरों के साथ होने लगा। सचीन्द्र बाबू को बनारस का भार सौंपा गया। २१ फ़रवरी विप्लव का दिन था। किन्तु अभी तो भारत को और कुछ ठोकरें खानी थीं। अस्तु, लीला-मय की इच्छा के विरुद्ध यह काम न हो सका, अर्थात् पुलिस के एक भेदिये ने सारे परिश्रम पर पानी फेर दिया। अर्थात् गिरफ़्तारियां शुरू हो जाने पर सारा दल छिन्न-भिन्न हो गया ! आज जो जीवन-मरण के साथी थे, कल वे ही जेल में तिल-तिल कर प्राण देने लगे।

रासबिहारी के साथ बनारस वापस जाते समय पिङ्गले विप्लव का प्रचार करने के लिए फिर मेरठ-झावनी में घुस

पड़े। एक मुसलमान हवलदार ने उन्हें बहुत कुछ आशा दिलाई और उन्हीं के साथ बनारस आया। रासबिहारी ने पिङ्गले को ऐसे समय में सिपाहियों के बीच जाने से बहुतेरा मना किया किन्तु वे फिर भी निराश न हुए और अंत में उन्हें भी अनुमति देनी पड़ी पिङ्गले को दस बड़े-बड़े बम देकर रवाना किया गया।

रासबिहारी का अनुमान सत्य निकला, हवलदार ने उन्हें मेरठ-छावनी में ही गिरफ्तार करवा दिया,। रौलट रिपोर्ट में पिङ्गले के पास वाले बॉम्ब के बारे में लिखा है:—

One bomb was sufficient to annihilate half a regiment

रासबिहारी ने बाद में अपनी डायरी के कुछ पृष्ठ देते हुए लिखा था—“यदि मैं जान पाता कि पिङ्गले अब मुझे फिर न मिल सकेगा, तो उसके लाख आग्रह करने पर भी उसे अपने पास से जाने न देता। उस सुदृढ़ गोरे शरीर वाले वीर के अभिमान भरे ये शब्द कि ‘मैं एक वीर सैनिक की हैसियत से केवल कार्य करना जानता हूँ’ अब भी कानों में गूँजते रहते हैं और उसकी तीव्र बुद्धि का परिचय देने वाली वे बड़ी-बड़ी आँखें भुलाने पर भी नहीं भूलतीं।”

अदालत से उन्हें फाँसी की सजा मिली। १६ नवम्बर का दिन था। प्रातःकाल और साथियों के साथ लाकर उन्हें फाँसी के तख्ते के पास खड़ा किया गया ! पूछा—“कुछ कहना चाहते हो ?” पिङ्गले ने कहा—“दो मिनट की छुट्टी भगवान् से प्रार्थना करने के लिए मिलनी चाहिए।” हथकड़ी खोल दी गई और उन्होंने हाथ जोड़कर कहा:—

“भगवन् ! तुम हमारे हृदयों को जानते हो। जिस पवित्र कार्य के लिये आज हम जीवन की बलि चढ़ा रहे हैं, उसकी

रक्षा का भार तुम पर है। भारत स्वाधीन हो, यही एक कामना है।”

इसके बाद स्वयं ही फाँसी की रस्सी गले में डाल ली और तख्ता खींचते ही पहले ही फटके में उनके प्राणपखेरू उड़ गये।

श्री० जगतसिंह

आप के जन्म, निवास-स्थान आदि का पता तो लग न सका। हाँ, इतना अवश्य मालूम है कि आए दिन बहुत से सिक्खों को अमेरिका जाते देख आप भी वहीं चले गये थे और गदर की बात छिड़ने पर देश में स्वाधीनता-समर में दो-दो हाथ करने की लालसा से फिर वापस आ गये थे। इनका शरीर बड़ा सुदृढ़ तथा बलिष्ठ था, और सिक्खों में भी इनके समान दैत्याकार शरीर वाला कोई न था।

उस दिन कृपाल की कृपा से विश्व का सारा प्रयास विफल हो जाने पर एक बार भाग्य परीक्षा के तौर पर फिर से कार्य आरम्भ किया गया। रासबिहारी के सब साथी तो पकड़े जा चुके थे। पुलिस का आतङ्क अभी उसी भाँति जारी था। प्रत्येक पल पर विपत्ति की सम्भावना थी। अस्तु, किसी काम से जगतसिंह को दो और साथियों के साथ कहीं बाहर रवाना किया गया।

तीन सिक्खों को ताँगे पर जाते देख पुलिस ने आ घेरा और थाने में चलने को मजबूर करने लगे। वे वीर जानते थे कि थाने में जाना मौत के मुँह में जाना है, और वहाँ जाकर नाम-धाम का ठीक-ठीक पता वे न दे सकेंगे। अतः अन्तिम बार भाग्य-परीक्षा करने का निश्चय कर इन तीनों ने ही गोली चलाना शुरू कर दिया।

कुछ देर तक गोली चलने के बाद इनमें से एक तो निकल गया और एक पुलिस के हाथ आ गया। तीसरे व्यक्ति जगत-सिंह जिस समय पुलिस के हाथ से बचकर एक पाइप पर पानी पीने के बाद हाथ पोंछ रहे थे तो पीछे से एक इनसे भी अधिक शक्तिशाली मुसलमान ने आकर इनके दोनों पैर इस मजबूती से पकड़ लिए कि ये फिर वहाँ से हिल न सके।

जमीन पर गिरते ही इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। और लोगों के साथ अभियोग चलने पर इन्हें भी वहीं फाँसी की आज्ञा हुई और इस प्रकार ये भी अपना पार्ट पूरा कर विल्व-नाटक के एक और दृश्य को समाप्त कर गये।

श्री० बलवन्तसिंह

वे बड़े ईश्वर-भक्त थे। धर्मनिष्ठा के कारण उन्हें सिक्खों में पुरोहित बना दिया गया था। शान्ति के परम उपासक बलवन्त का स्वभाव बड़ा मृदुल था। वे सुमधुर भाषी थे। पहले-पहल वे ईश्वरोपासना की ओर लगे। फिर लोगों को उस ओर लाने की चेष्टा प्रारम्भ की। बाद में लोगों के कष्ट दूर करने के प्रयास में धीरे-धीरे गौराङ्ग महाप्रभुओं से मुठभेड़ होती गई। और अन्त में फाँसी पर मुस्कराते हुए आपने प्राण-त्याग किया।

श्री० बलवन्तसिंह का जन्म गाँव खर्दपुर जिला जालन्धर में पश्चिमी आश्विन, संवत् १६३६ विक्रम शुक्रवार को हुआ था। आप के पिता का नाम सरदार बुद्धसिंह था।

परिवार बड़ा धनाढ्य था। पिता को धन के अतिरिक्त स्वभाव तथा अन्य गुणों के कारण सभी मान तथा आदर की दृष्टि से देखते थे। आप को होश सँभालते ही आदमपुर के मिडिल स्कूल में शिक्षा के लिए दाखिल करवा दिया। विद्यार्थी-जीवन में ही आप का विवाह हो गया। परन्तु विवाह के बाद शीघ्र ही धर्मपत्नी

की मृत्यु हो गई। मिडिल पास किए बिना ही स्कूल छोड़कर वे फौज में जा भरती हुए। पल्टन में आपका सन्त कर्मसिंह जी से संसर्ग हुआ। उनकी सङ्गति से आपका ईश्वर-भजन की ओर झुकाव हो गया। दस साल ज्यों त्यों नौकरी की, फिर एकाएक नौकरी छोड़ अपने गाँव में रहकर ईश्वरोपासना शुरू कर दी। पल्टन की नौकरी में ही आपका दूसरा विवाह भी हुआ था। गाँव के पास एक गुफा थी। उसी में बन्द रहकर भगवद्भजन में तल्लीन रहने लगे। ग्यारह महीने वहीं रहने के बाद बाहर आते ही सन् १९०५ में कैनेडा जाने का निश्चय कर, उधर ही प्रस्थान कर दिया।

कैनेडा में जाकर आपने अपने दूसरे साथी श्री० भगतसिंह जी से, जिन्हें एक देश-द्रोही ने बाद में गोली मार दी थी, मिलकर गुरुद्वारा बनाने का कार्य आरम्भ किया। वैङ्गोवर में ही उनके प्रयत्न से अमेरिका का सबसे पहला गुरुद्वारा स्थापित हुआ। उस समय वहाँ गए हुए भारतवासियों में कोई सङ्गठन न था। उन्हें गोरे लोग तङ्ग किया करते थे, परन्तु हमारे नायक वहाँ गए तो उन्होंने इन सब त्रुटियों को पूरा करने का भरसक प्रयत्न किया।

उस समय वहाँ के प्रवासी हिन्दुओं तथा सिक्खों को मृतक संस्कार करने में बड़ी विपत्ति होती। मुर्दे जलाने की उन्हें आज्ञा न थी। ऐसी अवस्था में बेचारे उन लोगों को अनेकानेक कष्ट सहन करने पड़ते। कई बार उन्हें वर्षा में, बर्फ में, शव को जङ्गल में ले जाकर, कुछ लकड़ियाँ इकट्ठी कर, तेल डाल आग लगाकर भागना पड़ता। ऐसी अवस्था में भी कैनेडियन लोगों की गोली का निशाना बनने का डर रहता। श्री० बलवन्तसिंह जी ने यह असुविधा दूर करने का प्रबन्ध लिया। कछ जमीन खरीद ली। दाह-संस्कार करने की आज्ञा भी प्राप्त कर ली।

गुरुद्वारे में भारतीय मजदूरों का संगठन भी करने लगे । उनमें सञ्चरित्रता तथा ईश्वरोपासना का प्रचार किया करते । गुरुद्वारा बड़े प्रयत्न से बन पाया था, उन सब में आपका परिश्रम ही सबसे अधिक था, अतः सबने मिलकर आपको ही ग्रन्थी बनाने का निश्चय किया । पहले तो आप ने कुछ इन्कार किया, परन्तु बाद में स्वीकार कर लिया ।

सिक्ख लोग बड़े हृष्ट-पुष्ट तथा परिश्रमी होते हैं । उनके कैनेडा में जाने से गोरे मजदूरों की कद्र कम हो गई । उधर अंगरेज मजदूरों से उनका वेतन भी कहीं कम होता । उनके पहले दलके पहुँचते ही गोरे मजदूरों ने दङ्गा-किसाद शुरू कर दिया था । परन्तु योद्धावीर सिक्ख इन बातों से डरने वाले नहीं थे । इससे गोरे और भी चिढ़ उठे । और उधर गुरुद्वारा बनने से इनका संगठन बढ़ने लगा । नवीन आगन्तुकों को हर प्रकार की सुविधा होने लगी । यह सब देखकर वहाँ की गोरी सरकार ने उनको निकालने के लिए यत्किञ्चित् उपाय ढूँढ़ने शुरू किए । इमिग्रेशन विभाग वालों ने भारतीय मजदूरों को बहुत-कुछ फुसला कर हण्डूराँस नामक द्वीप में चले जाने पर राजी करने का प्रयत्न किया । उस द्वीप को बहुत तारीफ़ की गई । परन्तु भाई बलवन्तसिंह जी खूब समझते थे कि यह सब धोखे की टट्टी है । आपने अपने किसी विश्वस्त सज्जन को वह स्थान देख आने के लिए भेजा । उस सज्जन का नाम था श्री० नागरसिंह । उन्हें वहाँ इमिग्रेशन विभाग वालों ने भारत में पाँच मुरब्बे जमीन और पाँच हजार डॉलर देने का लोभ देकर इस बात पर राजी करना चाहा कि वह भारतवासियों को हण्डूराँस में आने पर राजी कर दें । उन्होंने आते ही सब भेद खोल दिया इमिग्रेशन विभाग वाले भी गुल खेले । अब खुल्लमखुल्ला युद्ध छिड़ गया । इमिग्रेशन विभाग ने औचित्यानौचित्य का विचार

छोड़ दिया। ज्यों-ज्यों मामला बढ़ा त्यों-त्यों श्री० बलवन्तसिंह जी भी आगे बढ़ते गए।

प्रवासी भारतवासियों की इच्छा थी कि वे लोग भारत लौटकर अपने परिवारों को साथ ले जा सकें। बहुत दिनों तक खींचातानी हुई। आखिर एक सलाह सोची गई। श्री० बलवन्त सिंह, श्री० भागसिंह तथा बाई सुन्दर सिंहजी को भारत लौटकर अपने परिवार लाने के लिए भेजने का प्रस्ताव हुआ। वह तीनों सज्जन भारत को लौट आए।

१९११ में वे फिर सपरिवार रवाना हुए। हाँगकाँग पहुँचकर टिकट न मिलने के कारण रुक जाना पड़ा। वहीं पड़े रहकर वे वैङ्कोवर-गुरूद्वारा वालों से पत्र व्यवहार द्वारा सलाह करते रहे। आखिर तीनों सज्जन चल दिए। श्री० सुन्दरसिंह जी तो गए वैङ्कोवर को तथा शेष दोनों सज्जन तीनों परिवार सहित सान्फ्रान्सिस्को रवाना हुए। भाई सुन्दरसिंह तो वैङ्कोवर पहुँच गए, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका भी तो अखिर गोरों का देश था और इधर तो वे ही गुलाम भारतवासी थे, परिवारों सहित उन दोनों सज्जनों को वहाँ उतरने की आज्ञा न मिली। वे फिर हाँगकाँग लौट आए। फिर बहुत दिन बाद बड़े यत्न से परिवारों के लिए वैङ्कोवर के टिकट मिले। वैङ्कोवर में उन दोनों सज्जनों को तो उतरने की आज्ञा मिल गई, परिवारों को उतरने की आज्ञा न मिली। बड़ा झञ्झट बढ़ा आखिर परिवारों को उतने दिनों तक उतरने की आज्ञा मिली, जितने दिनों में कि आज्ञा की जा सकती थी कि इमिग्रेशन विभाग के केन्द्रीय ओटावा (Ottawa) से अन्तिम आज्ञा आ जायगी। परिवार उतरे तो सही, पर जमानत पर। जमानत की अवधि पूरी हो जाने के दो दिन बाद इमिग्रेशन विभाग वाले परिवारों को लेने के लिए आए परन्तु सिक्ख लोग मगड़े के लिए तैयार हो गए। अफसर लोग

चारा गरम हुए, परन्तु वीर योद्धाओं की लाल आँखें देख, अपना सा मुँह लेकर लौट गए। लाल आँखों के पीछे कौन-सा बल था, कौन सी दृढ़ता थी, और कौन सा निश्चय था जिससे कैनेडा की राजशक्ति और उनका इमिग्रेशन विभाग थर-थर काँप उठे, और उन परिवारों को वहीं रहने दिया गया—यह बातें तब गुलाम भारतवासी नहीं समझ सकते थे। उनकी कूप-मण्डकता, उनका सङ्कीर्ण दृष्टि-कोण नहीं समझ सकता था कि राष्ट्रों को बनाने में कैसे समय, कैसे घड़ियाँ उपस्थित हुआ करती हैं। स्वतन्त्र भारत अपने स्वातन्त्र्यसंग्राम की इन अद्वितीय घटनाओं को याद किया करेगा। उसके इतिहास-लेखक ही इन सब बातों को खूब वास्तविक रूप में लिख सकने का सुअवसर पा सकेंगे। दफा १२४ अ आदि विकराल दानव गला दबाए, आँखें निकाले उनकी साँस बन्द नहीं किए रहा करेंगे। वे परिवार तो वहीं रह गए, परन्तु शेष भारतीयों के परिवार लाने की समस्या वैसे की वैसे खड़ी रही। दो साल तक निरन्तर झगड़ा किया, परन्तु परिणाम कुछ न निकला। आखिर तय पाया कि इङ्गलैण्ड की सरकार तथा जनता और भारत सरकार तथा जनता के सामने अपनी माँगें रखी जावें और उनकी सहायता से इस उलझन को सुलझा जाय।

एक डेपूटेशन बनाया गया जो इङ्गलैण्ड भी गया और भारतवर्ष भी। उसके तीन सदस्यों में एक हमारे नायक श्री० बलवन्तसिंह भी थे। इङ्गलैण्ड गए। सभी उच्च अधिकारियों से मिले। कहा गया—“मामला भारतसरकार द्वारा यहाँ पहुँचना चाहिए।” निराश हो भारत में आए। आन्दोलन शुरु किया। उस समय प्रमुख नेता लाला लाजपतराय जी ने भी सड़ा-सा उत्तर देकर उनसे पीछा छुड़ा लिया था। फिर क्या था ? कुछेक सज्जनों की सहायता मिली। सार्वजनिक सभाएँ की गईं। क्रोध था, घायल

राष्ट्रीय भाव था, विवशता थी और थी घोर निराशा । जले दिलों से जो कुछ निकला कहा और फिर ? सर माईकेल ओडायर अपने 'India As I Knew it' नामक ग्रन्थ में लिखते हैं:—"At this Stage I sent a warning to the delegates that if this continued, I would be compelled to take serious action.....The delegates on this asked for an interview with me. I had a long talk with them and repeated my warning. Two of them were... and spacious; the manner of third seemed to be that of a dangerous revolutionary. They wished to see The Viceroy. and in sending them on to him, I particularly warned him about this man."

यह तीसरे सज्जन, जिन पर हमारे लाट ने इतना कुछ कह डाला है, यह वही नायक बलवन्त थे । उस भावुक हृदय ने तो गहरे घाव खाए थे । आत्म-सम्मान का भाव बार-बार ठुकराया जा चुका था । उन्होंने धीरे-धीरे निश्चय कर लिया था कि भारत को हर सम्भव उपाय से स्वतन्त्र करवाना ही प्रत्येक भारतवासी का सर्व-प्रथम कर्तव्य है । खैर—

डेपूटेशन हताश-निराश हो १६१४ के आरम्भ में वापस लौट गया । इन्हीं दिनों भारतीय विद्रोही श्री० भगवानसिंह तथा श्री० बरकतुल्ला भी अमेरिका पहुँच गए । संयुक्त राज्य अमेरिका में इन दिनों हिन्दुस्थान-एसोसिएशन (Hindusthan Association) का कार्य जोरों पर होने लगा । ग़दर-दल, ग़दर प्रेस, ग़दर-अख़बार जारी हो गए । परन्तु उपरोक्त डेपूटेशन वाले सज्जनों का उस समय तक उनसे कोई सम्बन्ध न था ।

किन्तु उनको सर माईकेल ओडायर ने गद्दर-दल के ही प्रतिनिधि लिखा है। अस्तु—

उस समय तक भारतवर्ष के अभियोग अन्य जातियों के सामने नहीं रक्खे गए थे। परन्तु यह डेपूटेशन जापान और चीन के राजनीतिज्ञों से मिलता हुआ ही गया था और इन्होंने भारत की ओर उन लोगों की सहानुभूति आकृष्ट करने का भर सक प्रयत्न किया था। वैङ्कोवर लौटकर अपने निष्फल प्रयत्न का इतिहास सुनाते हुए श्री० बलवन्तसिंह जी ने एक बड़ी प्रभावशाली वक्तृता दी थी। ऐसी वक्तृताएं राष्ट्रों के इतिहास में विशेष मान पाती हैं। गहरे मनन के बाद आपको चारों ओर से यही सुनाई देने लगा था, “उनके अन्तस्तल से यही एक ध्वनि उठने लगी थी कि “सब रोगों की एकमात्र औषधि भारत को स्वतन्त्रता है। आपने भाषण में अपना अनुभव तथा गहरे मनन से जो परिणाम निकाला था, सब कह सुनाया।

वह उनकी सफाई, शांति, वीरता, गम्भीरता और निर्भीकता को देखकर कहा करते थे कि “बलवन्तसिंह सिक्खों के पादरी हैं अथवा सेनापति (General), यह निश्चय करना बड़ा कठिन है ” अस्तु—

शीघ्र भविष्य में क्या किया जावे, यह तो कुछ निश्चय करने का अवसर नहीं मिला, कि एक और समस्या सामने आ खड़ी हुई—कामागाटा मारु जहाज आ पहुँचा। किनारे पर लगने की आज्ञा ही नहीं मिली, उलटे उन पर अनेक अत्याचार ढाए जाने लगे। जितने दिनों जहाज वहाँ रहा, उतने दिन सभी भारतीय दत्त-चित्त हो उसी की सहायता में लगे रहे। नेतृत्व फिर हमारे नायक के हाथ में था। आपने दिन-रात एक कर दिया। इतना परिश्रम और कोई कर पाता अथवा नहीं, सो नहीं कह

सकते। किराए के किश्त की अदायगी में देर लगवा कर जो अड़चन गोरेशाही डालना चाहती थी, उसका भार भी आप पर पड़ा। ११ हजार डॉलर की आवश्यकता थी। सभा में ११ हजार डॉलर के लिए जो अपील आपने की थी, उनमें इतना दर्द और इतना प्रभाव था कि वर्णन नहीं किया जा सकता। ११ हजार डॉलर इकट्ठे हो गए। उनकी आर्थिक आवश्यकताएँ पूरी करने के बाद आप और सलाह-मशिवरा करने के लिए दक्षिण की ओर बहुत दूर चले गए। अचानक वे अमेरिका की सीमा पर पहुँच गए। गोरी सरकार ने पकड़ लिया। कहा—“अमेरिका से आए हो और चोरी से कैंनेडा में प्रविष्ट हुए हो।” यह निराधार दोष भी एक लम्बे झगड़े का कारण हुआ, आखिर कुछ झगड़े के बाद मामला तय हुआ और वैङ्गोवर पहुँचे। कुछ दिन बाद निराश होकर कामागाटा मारु जहाज भी लौटने पर विवश हो गया।

कामागाटा मारु के साथ भारत की जितनी आशाएँ सम्बद्ध थीं, सभी एकाएक मटियामेट कर दी गईं। भारत का व्यवसाय की ओर यही तो पहला प्रयत्न था। उसी में भारत-हितकारी शासकों ने पूरी तरह से ऐसा पीसने की कोशिश की कि फिर कोई ऐसी चेष्टा करने का दुःसाहस न कर सके। कैंनेडा में जितने दिन जहाज ठहरा था, उतने दिन उनके साथ जो अमानुषिक व्यवहार हुए थे उनका रोमाञ्चकारी वर्णन लिखने का यह स्थान नहीं। पर उनकी याद दिल को आग लगा देती है, पागल कर देती है, रुला-रुला जाती है। उन सबका उत्तरदायित्व इमिग्रेशन विभाग के वैङ्गोवर वाले मुख्य अध्यक्ष मि० हॉपकिन्सन पर ही था। ये लोग उनसे बहुत नाराज थे परन्तु ज़रा और सुनिए। श्री० बलवन्तसिंह श्री भार्गवसिंह येदोही सज्जन तो थे, जो पहले दिन से इमिग्रेशन विभाग वालों से वीरतापूर्वक लड़ते चले

आए थे। कामागाटा मारु जहाज़ के मामले में भी सभी कार्य इन्हीं दो सज्जनों ने तो किये थे। वे इमिग्रेशन विभाग की आँखों के काँटे हो रहे थे। एक देश-द्रोही भाड़े का टट्टू मिल गया। गुरुद्वारे में दीवान हो रहा था। उस विभीषण ने ईश्वर-भजन में तल्लीन श्री० भागसिंह और श्री० बलवन्तसिंह पर पिस्तौल से फायर कर दिए। श्री० भागसिंह जी तो वहीं स्वर्गलोक सिधार गए, परन्तु श्री० बलवन्तसिंह बच गए। गोली उनके न लगकर एक और देशभक्त श्री० वतनसिंह के जा लगी। वे भी वहीं शहीद हो गए। यह हत्यारा उपस्थित लोगों के पञ्जे से बच गया कैंनेडा-सरकार का क़ानून भी उसे कुछ दण्ड न दे सका। वह आज भी जीता है। वह पञ्जाब-सरकार का लाड़ला बना रहा है। उसने यह सब काण्ड क्यों किया और इनमें उसे क्या भलाई दीख पड़ी, यह सब वही जाने !

इसी प्रकार की सरगर्मी से कितने ही महीने गुज़र गए। सन् १९१४ का अन्तिम पक्ष आ गया। महायुद्ध छिड़ चुका था। अमेरिका-स्थित सब भारतीय देश में वापस आने की तैयारी करने लगे। फिर हमारे नायक वहाँ कैसे ठहर सकते थे। सपरिवार प्रस्थान कर दिया। आप शङ्काई पहुँचे, वहीं आपके घर एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ। वहाँ कार्य के सम्बन्ध में आपको अपना घर लौटने का इरादा बदलना पड़ा। परिवार तो श्री० करतारसिंह के साथ भारत को भेज दिया और आप वहीं ठहर गए। वहाँ जो सब कार्य करने को था, करते हुए आप १९१५ में बेङ्कोक (Bangkok) पहुँचे।

उन दिनों दूर पूर्व में जो विद्रोह के प्रयत्न हो रहे थे; उन्हीं के संगठन तथा नियन्त्रण में आपको कार्य करने के लिए ठहरना पड़ा था। उन सब विफल-आयोजनों का रोमाञ्चकारी इतिहास लिखने का यह स्थान नहीं। सप्ताह भर सिङ्गापुर में जो रण-

चण्डी का ताण्डव-नृत्य हुआ था, उसमें साम्राज्यवादी जापान तथा फ्रान्स को सर्व शस्त्रसुसज्जित सेनाओं की सहायता से अङ्गरेज विजयी हुए। भारत का स्वतन्त्रता-प्रयत्न निष्फल हो गया। Eastern Plot खत्म होगया। ऐसी ही अवस्था में श्री० बलवन्तसिंह जी बेङ्गोक पहुँचे थे। दुर्भाग्यवश आप बीमार हो गए। दशा नाजुक हो गई, अस्पताल जाना पड़ा। ना समझ डॉक्टर ने ऑपरेशन कर डाला और वह भी बिना क्लोरीफार्म सुँघाए ही। आपको कष्ट और निर्बलता बढ़ गई। अभी चलने-फिरने योग्य भी न हुए थे कि अस्पताल वालों ने उन्हें चले जाने को कहा। चलने-फिरने की अयोग्यता की बात पर भी ध्यान नहीं दिया गया। अस्पताल से बाहर निकाल दिया गया। इतना उतावलापन क्यों किया गया, सो भी सुन लीजिए। बाहर पुलिस गिरफ्तार करने के लिए खड़ी थी। द्वार से निकलते न निकलते आपको गिरफ्तार कर लिया गया। वहाँ रहने वाले भारतवासियों के जमानत-अमानत के सब प्रयत्न विफल हो गए। स्थान की स्वतन्त्र सरकार ने श्री० बलवन्तसिंह जी तथा उनके अन्य साथियों को चुपचाप भारत की अँगरेज-सरकार के सुपुर्द कर दिया। सो क्यों ? इसका भी एकमात्र कारण यही है कि भारत गुलाम था। गुलाम-जाति के लिए कौन खाहमखाह की बला सिर पर लेता है खैर !

श्री० बलवन्तसिंह जी को सिङ्गापुर लाया गया। संसार भर की धमकियाँ तथा लोभ देकर आपको सब भेद कह देने के लिए राजी करने के प्रयत्न किए गए, परन्तु उनके पास मौन के सिवा क्या धरा था ? आखिर १९१६ में आपको लाहौर-षड्यन्त्र के दूसरे अभियोग में शामिल किया गया। अपराध वही था, जिस में निष्फलता होने पर मृत्यु-दण्ड ही मिला करता है। आप पर बिद्रोह का दोष लगाया गया। २४ दिन नाटक हुआ। बेलसिंह

जैएड आदि कई एक गवाह आपके विरुद्ध पेश हुए। नाटक-दुःखान्त था। अभियुक्त को साम्राज्य की बलि-वेदी पर कुर्बान करने का निश्चय हुआ। मृत्यु-दण्ड सुनते ही देवता सहम गए। इस देवता को मृत्यु-दण्ड ! राक्षसों-दानवों में भीषण अट्टहास मच गया होगा।

काल कोठरी में बन्द हैं, सिक्ख होने पर टोपी नहीं पहन सकते। कम्बल ही सर पर लपेट लिया है। बदनाम करने के लिए किसी ने शरारत की—कम्बल के किसी एक कोने में अफ्रीम बाँध दी और कहा गया कि आप आत्महत्या करना चाहते हैं। आपने अत्यन्त शान्ति से उत्तर दिया—“मृत्यु सामने खड़ी है। उसके आलिङ्गन के लिए तैयार हो चुका हूँ। आत्मा-हत्या कर मैं मृत्यु-सुन्दरी को कुरूप नहीं बनाऊँगा। विद्रोह के अपराध में मृत्यु-दण्ड पाने में गर्व अनुभव करता हूँ। फाँसी के तख्ते पर ही वीरतापूर्वक प्राण दूँगा।” पूछताछ करने पर भेद खुल गया। कुछ नम्बरदार क्रैदियों तथा वार्डर को कुछ सजाएँ हुईं। सभी ने आपकी देशभक्ति तथा निर्भीकता की दाद दी।

सन् १९१६ के दिन थे। भारतवर्ष में कालेपानी और फाँसियों का जोर था। समस्त उत्तर भारत में एकाएक खलबली मच गई थी। अन्दर ही अन्दर एक विराट् गुप्तविलस का आयोजन हो गया था, यह भारत की जनता न जानती थी। नेतागण उन लोगों की ओर ताकने तक का साहस न करते थे। बहुत से लोग समझते थे कि सरकार ने योंही देश को भयभीत करने के लिए ऐसे-ऐसे भीषण अभियोग चला दिए हैं। जो भी हो, उस विराट् आयोजन के निष्फल हो जाने पर भी उसकी सुन्दर-स्मृति बाक़ी है। वह सुन्दर है, इसलिए कि आदर्शवादी युवकों के पवित्र रक्त से लिखी गई है। बाक़ी है इसलिए कि कर्बानियाँ कभी व्यर्थ

नहीं जाया करतीं । इसी वर्ष में (मार्च) चैत्र की १८ तारीख को श्री० बलवन्तसिंह जी की धर्मपत्नी भेंट के लिए गईं । पुस्तक तथा वस्त्र देकर बताया गया—“कल १७ चैत्र को उन्हें फाँसी दे दी गई ।” उनकी धर्मपत्नी कलेजा थाम कर रह गईं ।

श्री० बलवन्त की फाँसी के दिन के समाचार बाद में मिले । आपने प्रातःकाल स्नान किया तथा अपने छः और साथियों सहित (जिन्हें उसी दिन फाँसी मिली थी) भारत-माता को अन्तिम नमस्कार किया । भारत स्वतन्त्रता का गान गाया । हँसते हँसते फाँसी के तख्ते पर जा खड़े हुए । फिर क्या हुआ ? क्या पूछते हो ? वही जल्लाद, वही रस्सी । ओह ! वही फाँसी और वही प्राणत्याग ।

आज बलवन्त इस संसार में नहीं, उनका नाम है । उनका देश है, उनका विस्मव है । आज उनकी हार्दिक इच्छा पूरी हुई—भारत स्वतन्त्र हो गया ।

डाक्टर मथुरासिंह

बावजूद सब से अधिक विपत्तियाँ सहन करने के, सबसे अधिक गणना में अपने नर-रत्नों के स्वतन्त्रता बलि-वेदी पर बलिदान देने के, आज पंजाब राजनैतिक क्षेत्र में फिसड़ी (Politically backward) प्रान्त कहलाता है । बङ्गाल में श्री० सुदी-राम वसु फाँसी पर लटके । उन्हें इतना उठाया गया कि आज उनका नाम उस प्रान्त के कोने-कोने में सुनाई देता है । भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त में उनका नाम सुविख्यात है । परन्तु पंजाब में कितने रत्न देश के लिये जीवन-दान दे गए, कितने ही हँसते-हँसते फाँसी पर चढ़ गए, कितने ही लड़ते-लड़ते छाती में गोली खाकर शहीद हो गए, परन्तु उन्हें कौन जानता है ? और कहीं की तो बात ही क्या कहें, पञ्जाब प्रान्त में ही उन्हें कितने लोग

जानते हैं ? कोई साधारण वैप्लविक योंही फाँसी पर लटक गया हो और उसे लोग योंही भूल गए हों, सो भी तो नहीं। जिन लोगों ने अधिक परिश्रम से, अदम्य उत्साह से तथा अतुल साहस से भारतोत्थान के लिए ऐसे २ यत्न कर दिए थे कि आज उन्हें सुन-सुनकर अवाक् रह जाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं ! यदि ऐसे रत्न किसी और देश में जन्म धारण किये होते तो आज उनकी वाशिङ्गटन, गेरिबाल्डी, तथा विलियम वालीस की भाँति पूजा होती। परन्तु उन्होंने एक अक्षम्य अपराध यह किया था कि वे भारत में पैदा हुए थे। इसी का दण्ड यह है कि आज उनको विस्मृति के अन्धकार में फेंक दिया गया है। न उनके कार्य की चर्चा है, न उनके त्याग की, न उनके बलिदान की ख्याति है, न उनके साहस की। परन्तु ऐसी कृतघ्नता दिखाने वाले देश की उन्नति कैसे होगी ?

कट्टर आदर्शवादी डॉक्टर मथुरासिंह जी का स्थान वास्तव में बहुत ऊँचा है। आपका जन्म सन् १८८३ ईसवी में दुडिचाल नामक गाँव, जिला भेलम (पञ्जाब) में हुआ था। आपके पिता का नाम सरदार हरिसिंह था। आपने पहले अपने गाँव में ही शिक्षा पाई तत्पश्चात् आप चकवाल के हाई स्कूल में पढ़ने लगे। आपकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। आप सदैव अपने सहपाठियों में सबसे अच्छे रहते थे। वहाँ पर मैट्रिक पास करने के बाद आप प्राइवेट तौर पर डॉक्टरी का कार्य सीखने लगे। मेसर्स जगतसिंह एण्ड ब्रदर्स की दुकान रावलपिण्डी में थी। वहीं पर आपने यह कार्य सीखना शुरू किया। बड़ी चेष्टा से आप सब कार्य करते। तीन-चार वर्ष में ही आप इस कार्य में प्रवीण हो गए। फिर आपने अपनी दुकान अलग खोल दी। वह दुकान नौशेरा छावनी में थी, आप सभी देशों से चिकित्सा सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाएँ मँगवाया-

करते थे। विशेष शिक्षा ग्रहण करने के लिए आपने अमेरिका जाने का विचार किया। दुकान का मज्जमट अभी तय भी न हो पाया था कि आपकी सुपत्नी तथा सुपुत्री का देहान्त हो गया। परन्तु इससे क्या होता था ? आपने उधर प्रस्थान कर दिया। १९१३ में आप चले थे। कुछ अधिक धन पास न होने के कारण आपको शङ्काई में ही रुक जाना पड़ा। वहीं पर आपने चिकित्सा-कार्य शुरू कर दिया, जिसमें आपको बहुत सफलता हुई। परन्तु आपका इरादा कैनेडा जाने का था ; आप कुछ और भारतीयों के साथ उधर गए। परन्तु वहाँ पर बहुत दिक्कतें पेश आईं। पहले केवल आपको तथा एक और सज्जन को वहाँ उतरने की आज्ञा मिली, दूसरे लोगों को नहीं। इस पर आपने वहाँ उतरना उचित न समझा। परन्तु साथियों के आग्रह करने पर आप उतरे तो सही, परन्तु वहाँ पर इमिग्रेशन विभाग से अन्य साथियों के लिए भगड़ा शुरू कर दिया। अभियोग तक चला। परन्तु कानून और कोर्ट शक्तिशाली लोगों के लिए होते हैं न कि पराधीन देश वालों के लिए। वहाँ से आपको तथा अन्य भारतीय यात्रियों को वापस लौटा दिया गया। बहाना वही कि कैनेडा में किसी जहाज द्वारा सीधे नहीं आए। आप शङ्काई लौट आए। आकर भारतीय लोगों में अपनी दीन हीन दशा की मामिक कथा सुनाई और श्री० बाबा गुरुदत्तसिंह जी को एक अपना जहाज बनाने की सलाह दी, जो सीधा कैनेडा जावे। इसी सलाह पर बाबा जी ने कामागाटा मारु जहाज किराए पर ले लिया और उसका नाम गुरु नानक जहाज रक्खा। आपको इधर पञ्जाब आना पड़ा। जहाज जल्दी से तैयार हो गया, अतः आप निश्चित दिन पर वहाँ न पहुँच सके। सिङ्गापुर से ३५ के लगभग अन्य साथियों सहित दूसरे जहाज से चले, ताकि शङ्काई तक कामागाटा मारु से मिल कर उस पर सवार हों। हाँगाँग पहुँचने पर

पता चला कि जहाज वहाँ से भी चल चुका है। इसलिए आप वहीं पर ठहर गए। अब तक आप भारत-स्वतन्त्रता के लिए जीवन अर्पण करने का निश्चय कर चुके थे।

हाँगाँग में आपने प्रचार-कार्य शुरू कर दिया। अमेरिका से गदर-पार्टी का “गदर” अखबार आता था। आप भी वहीं पर वैसा ही गुप्त अखबार छपवा कर लोगों में बाँटने लगे। उधर कामागाटा मारु जहाज पर जो-जो अत्याचार होने लगे उन सबके समाचार आपको मिल रहे थे। जब मालम हुआ कि कामागाटा मारु जहाज को वापिस आना ही पड़ेगा तब आपने बड़े जोरों से प्रचार शुरू किया। उस समय कैण्टन में एक सिक्ख पुलिसइन्स्पेक्टर महाशय इन सभी आन्दोलनों को दवाने की बहुत चेष्टा कर रहे थे। आपने उनसे मिल कर जो बातचीत की तो वे महाशय भी इनकी सहायता करने लगे। आप किसी कार्यवश शङ्घाई गए। जाते समय सब से कह गए कि अब कामागाटा मारु जहाज में सवार होकर भारत को लौट चलना चाहिए। परन्तु उनका यह निश्चय जान सरकार ने जहाज को शङ्घाई में न ठहरने दिया। उसके दो-एक रोज बाद वे सभी लोग दूसरे जहाजों द्वारा भारत लौट आए; कामागाटा मारु जहाज अभी हुगली में ही खड़ा था कि आप लोग कलकत्ते पहुँच गए। वहाँ पर सरकार ने आपको पञ्जाब के टिकट देकर गाड़ी पर चढ़ा दिया। अमृतसर पहुँचते न पहुँचे बजबज की घटना हो गई। सब समाचार मिला। क्रोध से विह्वल-से हो उठे। प्रति-हिंसा की ज्वाला धधक उठी। परन्तु डाक्टर जी ने अपने अन्य साथियों को समझा-बुझाकर कुछ शांत किया, और उन्हें प्रचार-कार्य के लिए उद्यत किया तथा स्वयं संगठन कार्य शुरू कर दिया। उधर इस विराट् चेष्टा में आपको बम् बनाने का कार्य सौंपा गया था। आप उसमें थे भी बड़े निपुण। अमेरिका

से सैकड़ों मतवाले योद्धा विप्लव-अग्नि भड़काने के लिए आने लगे। भट्ट से सारा प्रबन्ध हो गया। विप्लव-दल का इतना बृहत् संगठन खड़ा हो गया कि समस्त भारत में एक साथ विद्रोह खड़ा कर देने का विचार उठा और तिथि तक निश्चित हो गई। देखते-देखते सब प्रयत्न, सब आयोजन विफल हो गए। कृपाल की नीचता से सब किया-धरा बीच में ही रह गया। इधर-उधर पकड़-धकड़ शुरू हो गई। परन्तु आप पकड़े न गए। एक बार एक सरकारी जासूस द्वारा आप को कहा गया कि यदि वे सरकारी गवाह बन जायें तो उन्हें क्षमा के साथ ही साथ बहुत भारी पुरस्कार भी दिया जायगा। तब आपने उस प्रस्ताव को बिलकुल उपेक्षा से ठुकरा दिया। फिर एक बार एक खुफिया ऑफिसर आपके पास तक आ पहुँचा। परन्तु वह खूब जानता था कि डॉक्टर साहब बड़े निर्भीक क्रान्तिकारी हैं अतः उसे अकेले उनको गिरफ्तार करने का साहस न हुआ। उलटा वह उनसे कहने लगा कि सरकार ने आपके लिए क्षमा प्रदान की है तथा पुरस्कार देने का वचन दिया है, यही कहने के लिए आया हूँ। आप भी खूब समझते थे कि वह उस समय उन्हें पकड़ने का साहस न कर सकने के कारण ही ऐसी बातें करता था। इसलिए आपने कुछ रजामन्दी दिखाई और उससे पीछा छुड़ाकर बच निकले। इस तरह आपने समझा कि अब देश में बचकर रहना एकदम असम्भव है। इसलिए आपने काबुल की ओर प्रस्थान कर दिया। वजीराबाद स्टेशन पर पुलिस ने पकड़ लिया, परन्तु वहाँ पर आपने कुछ घूस दे दी और बच निकले। आप कोहाट की ओर रवाना हो गए। पुलिस को भी समाचार मिल गया। कोहाट स्टेशन पर पुलिस का बड़ा भारी दस्ता पहरे पर लगा दिया गया। उसी ट्रेन में बहुत सी पुलिस भी चढ़ा दी गई। मार्ग में एकाएक सब डिब्बों की तलाशी भी ले डाली गई। परन्तु



डाक्टर मथुरासिंह

आप न पकड़े जा सके। कुछ दिन वहीं पर ठहरने के पश्चात् आप काबुल जा पहुँचे। वहाँ शीघ्र ही आप बहुत प्रसिद्ध हो गए। आपकी योग्यता देखकर आपको काबुल का चीफ मेडीकल ऑफिसर नियुक्त कर दिया गया।

भारत के भीतर राज्यक्रान्ति की सब चेष्टा विफल हो चुकी थी तो क्या, बाहर तो अभी बड़े जोरों से प्रयत्न हो ही रहा था। काबुल में उस समय “भारत की अस्थायी सरकार” (Provisional Government of India) बनी हुई थी, जो जर्मनी कमिटी से सहयोग करती हुई भारत-स्वतन्त्रता के प्रयत्न में लगी हुई थी। उस समय अरब, मिश्र, मैसेपोटेमिया और ईरान आदि सभी प्रदेशों में भारतीय वैसविक—जिनमें हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख भी सम्मिलित थे—भारत में क्रान्ति करने की चेष्टा कर रहे थे। उस सब प्रयास में डॉक्टर जी फिर से जुट गए। उसी के सम्बन्ध में आपको जर्मनी जाना पड़ा। कुछ दिनों बाद आप फिर लौट आए। ईरान तक तो आपको बहुत बार जाना पड़ा। फिर निश्चय हुआ कि अस्थायी सरकार की ओर से एक स्वर्ण-पत्र जार रूस के पास इस आशय का भेजा जाय कि वह भारत-क्रान्ति की सहायता करे। अब की बड़ी शान से प्रस्थान किया गया। कई सेवक तथा सामान के लदे हुए कई ऊंट आपके साथ थे। परन्तु उस समय कोई नीच पुरुष आपकी यात्रा की सब खबर अङ्गरेज-सरकार को दे रहा था, यह वह नहीं जानते थे। ताशकन्द नगर में आपको गिरफ्तार कर लिया गया। ईरान में लाकर शिनाख्त की गई। अभियोग चला। बहुत लोगों ने यत्न किया कि आपको भारत-सरकार के सुपुर्द न किया जाय, परन्तु अब तक अन्य सभी प्रयत्नों में जो निष्फलता हुई थी, अब ही क्यों सफलता होती ?

लाहौर में लाए गए। इधर उन दिनों ओढायरशाही का

जोर था। कुछ दिन न्याय-नाटक हुआ। मृत्यु-दण्ड सुनाया गया। आपने अत्यन्त आनन्द प्रदर्शित करते हुए सुना। आपके छोटे भैया मुलाकात के लिए गए। आपने पूछा—“क्यों भाई, मेरे मरने की तुम्हें चिन्ता तो नहीं?” बालक ने रो दिया। आपने क्रोध-मिश्रित उत्साह-वर्द्धक स्वर से कहा—“वाह जी ! यह समय आनन्द मनाने का है। क्या सिक्ख लोग भी देश के लिए मरते समय रोया करते हैं ? मुझे तो अत्यन्त आनन्द है कि मैं भारतीय विस्मय को सफल बनाने के लिए, जो मुझ से हो सका, कर चुका हूँ, मैं बड़ी शान्ति से फाँसी के तख्ते पर प्राण-त्याग करूँगा।” इस तरह आपने उसका उत्साह बढ़ाया।

फिर ? फिर २७ मार्च, १९१७ का दिन आ पहुँचा। उस दिन फिर वही नाटक प्रारम्भ हुआ। उस दिन के नाटक में एक ही दृश्य हुआ करता है; और वह भी कुछेक मिनट का। ये पगले लोग न जानें कहाँ से आगए, जिन्हें न मृत्यु का भय था, न जीने की चाह; कार्य-क्षेत्र में हंसे, युद्ध-क्षेत्र में हंसे, फाँसी के तख्ते पर भी मुस्करा दिए। उनकी महिमा अपरम्पार है।

हों फरिश्ते भी फिदा जिन पर यह वह इन्सान हैं !

श्री बन्तासिंह

इस गए-गुजरे जमाने में भी, जबकि भारतवासियों का अधःपतन चरम-सीमा को पहुँचा जा रहा है, कुछेक दुःसाहसी वीर ऐसे पैदा हुए, जिन्होंने उस सुन्दर अतीत की मधुर स्मृति को पुनर्जीवित कर दिया। वे लोग कुछ ऐसे निर्मम और निर्भय हो कर जीवन बिता गए कि फिर से आशा होने लगी कि इस कायरता के युग में भी ऐसे व्यक्ति जन्म धारण कर सकते हैं, जो देश के लिए अपना अस्तित्व तक मिटा सकते हैं। इसी से तो

इस पतित देश के पुनरुत्थान की आशा बँधती है ! ऐसे वीर अधिक वैश्वविक समाज या क्रान्तिकारी दलों में ही दीख पड़े ।

वज्जाल के श्री० यतीन्द्रनाथ मुकर्जी और श्री० नलिनी बागची, संयुक्त-प्रान्त के श्री० गेंदालाल दीक्षित, पञ्जाब के करतारसिंह तथा बबर अकाली-शहीद उन्हीं लोगों में गिने जाने लायक हैं । श्री० बन्तासिंह जो सगवाल भी ऐसे ही क्रान्तिकारी थे । पञ्जाब पुलिस आपका नाम सुनते ही भय से काँप उठती थी । जिस तरह श्री० यतीन्द्रनाथ मुकर्जी को Terror of Bengal Police कहा जाता था, ठीक वैसे ही आपको Terror of Punjab Police समझा जाता था ।

आपका जन्म १८६० ईसवी में सगवाल नामक गाँव, जिला जालन्धर में हुआ था । आपके पिता का नाम श्री० बूढासिंह था । पाँच वर्ष की आयु में आप स्कूल में, दाखिल किए गए । पढ़ने में बहुत चतुर थे । सातवीं-आठवीं दोनों श्रेणियाँ एक ही वर्ष में पास करली थीं । जब आप जालन्धर के डी० ए० बी० हाई स्कूल में पढ़ते थे, तब यानी १९०४-५ में काँगड़ा में भारी भूकम्प हुआ था, जिससे बहुत हानि हुई थी । आप भी अपने सह-पाठियों का एक गुट लेकर धर्मशाला में पीड़ितों की सहायता के लिए गए थे । आपकी कार्य कुशलता और तत्परता देखकर सभी आप पर मुग्ध हो गए थे ।

उन दिनों में ही आपने अपना एक जत्था सङ्गठित कर लिया था, जिसका नेतृत्व आपके ही हाथ में था । उसका उद्देश्य था, दीन दुखियों की सहायता करना । इस दल की सहायता से आप लोक-सेवा का बहुत कार्य किया करते थे । स्कूल की शिक्षा समाप्त कर चुकने के बाद आपने विदेश के लिए प्रस्थान किया । पहले पहल आप चीन गए और फिर वहाँ से अमेरिका चले गए ।

अमेरिका-वास का आप पर बहुत प्रभाव हुआ। पद-पद पर अपनी गुलामी का अनुभव होता गया। अस्तु, आपने देश लौटकर देश को स्वतन्त्र करने का इरादा किया।

आपने स्वदेश लौटकर अपने गाँव में एक स्कूल खोला और एक पञ्चायत बनाई। सभी लोग आपका बहुत मान करते थे। इससे आपको ही पञ्चायत का सञ्चालक भी बना दिया गया। गाँव के सब लोग उस पञ्चायत द्वारा किए गए निर्णयों को सहर्ष शिरोधार्य करते थे। एक बार तो यहाँ तक नौबत आ गई कि आपने चीफ-कोर्ट के कैसले तक को बदल डाला और दोनों पक्ष के लोगों ने आपके निर्णय के आगे सहर्ष सर झुका दिया। बात साधारण न थी, अफसरों के कानों तक पहुँची। बहुत पेच-ताव खाए, बहुत दाँत कटकटाए। उधर आपका घर अमेरिका से लौटे हुए हिन्दुस्तानियों का केन्द्र भी बना हुआ था। यह रिपोर्ट भी पहुँची। अच्छा अवसर मिला। एक दिन अचानक आपके घर पर पुलिस ने छापा मारा। परन्तु आप घर में नहीं थे। आपके बहुत से कागजात पुलिस उठा कर ले गई। उनमें आपके लिखे हुए कई-एक ट्रैक्ट भी थे। उन्हें देखकर आप पर वारंट निकाला गया। परन्तु आप पकड़े न जा सके। बाद में आपको गिरफ्तार करवाने के लिए पुरस्कार भी घोषित किया गया था।

एक दिन आप अपने साथी श्री० सज्जनसिंह फीरोजपुरी के साथ लाहौर के अनारकली बाजार में होने वाली एक गुप्त भीड़ में सम्मिलित होने के लिए जा रहे थे। अनारकली में जाते-जाते एक सब इन्स्पेक्टर से मुठभेड़ हो गई वह आपकी तलाशी लेने का आग्रह करने लगा। आपने बड़े सहज भाव से उसे समझाने की चेष्टा की कि शरीफ आदमी इस तरह व्यवहार नहीं किया करते। आप जाइए। हमारी तलाशी लेने का कोई

कारण नहीं है। परन्तु वे सब-इन्सपेक्टर साहब भला कब पीछा छोड़ने वाले थे। जब उसने एक न सुनी, तो आपने कहा— “अच्छा तो ले, तलाशी ही ले ले” वह तलाशी लेने के लिए जो आगे बढ़ा, तो आपने धीरे से अपना पिस्तौल निकाला, यह कहते हुए, “कि तलाशी न लेते तो अच्छा था, हमारे पास तो यही है, सो ले” उस पर फायर कर दिया। सब-इन्सपेक्टर तो अपनी धुन में मस्त धराशायी हो गया, परन्तु आप भाग निकले। अभी अभी ही थे कि आपके साथी के पाँव में ठोकर लग गई और वह गिर गया। आपने पिस्तौल के जोर से पुलिस और जन-समूह को पीछे रोक रक्खा और उसे उठाकर खड़ा कर दिया। परन्तु चोट अधिक लगने के कारण वह भाग न सका, इसलिए श्री बन्वासिंह जी भाग निकले। यह दिन-दोपहर की घटना है।

आप बचकर निकल गये और मियाँमीर स्टेशन पर पहुँचे। वहाँ पर पहले ही से पुलिस प्रतीक्षा में थी। परन्तु आप किसी प्रकार ट्रेन पर सवार हो ही गये। उसी गाड़ी में, उसी डिब्बे में, बहुत से पुलिस के सिपाही सवार हो गए। आप ने भी ताड़ लिया। परन्तु अब क्या हो सकता था। अटारी स्टेशन पर जब ट्रेन ठहरने ही वाली थी कि आप ट्रेन से कूद गये। पुलिस वाले हाथ मलते ही रह गये। वहाँ से आप (दो आबे) जालन्धर पहुँचे।

उस समय गदर-पार्टी के तत्कालीन प्रमुख कार्यकर्ता भाई प्यारासिंह को नङ्गल-कल्लाँ, जिला होशियारपुर के जेलदार चन्दासिंह ने पकड़वा दिया था। आपने मिलकर फ़ैसला किया कि अब इन देश-द्रोहियों को दण्ड देना चाहिए। आप ने भाई बूटासिंह और भाई जिवन्दसिंह को साथ लिया और चन्दासिंह को उसके घर में जाकर मार डाला। तत्पश्चात् आप अपने कार्य

में जुटे रहे। उसी सिलसिले में आपने अमृतसर जिले में एक पुल भी डार्इनामेट से उड़ा दिया था।

उसके बाद भी पुलिस संकई बार मुठभेड़ हुई, परन्तु आपका कुछ ऐसा रोब छा गया था कि आपको देखते ही पुलिस वाले अपना-अपना सिर छुपाने की चिन्ता में नौ-दो ग्यारह हो जाते। एक बार पुलिस के घुड़सवारों ने आपका पीछा किया। आप साठ मील तक उनके आगे-आगे भागते चले गये। पाठकों को यह बात कुछ अस्वाभाविक मालूम होगी, परन्तु उन्हें यह ध्यान रखना चाहिए कि ये अमेरिका की ग़दर-पार्टी के कार्यकर्त्ता बड़े विचित्र थे। पञ्जाबी जाटों के शरीर बहुत सुन्दर तथा सुदृढ़ होते हैं, और फिर ये लोग तो अमेरिका से खास तौर पर दौड़ने का अभ्यास करके आये थे। उनमें भी श्री० बनता-सिंह बड़े सुदृढ़ तथा शक्तिशाली थे। बङ्गाल के प्रसिद्ध वैप्लविक श्री० नलिनी बागची भी गोहाटी पुलिस से दो-दो हाथ करके बच गये थे, तो वे भी एक बार ही ८० मील तक चले थे। दुस्साहसी लोगों के लिए कुछ असम्भव नहीं। उस दिन आपके पाँव छलनी हो गये, तबीयत खराब हो गई, अतः आप अपने घर चले गये और बहुत दिनों तक वहीं विश्राम किया।

आपको कुछ ऐसा विश्वास-सा हो गया था कि वे किसी अपने सम्बन्धी के विश्वासघात से ही पकड़े जायेंगे। परन्तु स्वास्थ्य के अधिक बिगड़ जाने के कारण आप कुछ कर न सके! लाहौर-पड्यन्त्र का मुख्य केस उन दिनों चल रहा था। दूसरे बड़े भारी केस के लिए चारों ओर धड़-पकड़ हो रही थी। दल का सब प्रबन्ध तहस-नहस हो चुका था। ऐसी अवस्था में आत्म-निर्भरता के अतिरिक्त और कोई सहारा शेष न था। इसीलिए आप को रुग्णावस्था में अपने ही घर जाना पड़ा। बहुत दिनों तक वहीं सुरक्षित रहे। परन्तु बाद में एक

सम्बन्धी उन्हें आग्रह करके अपने घर ले गया, ताकि उनकी चिकित्सा कुछ और तनदेही से की जा सके। वे उसका आग्रह टाल न सके। वहाँ पर जाकर टिकने के बाद शीघ्र ही उसी रिश्तेदार ने पुलिस को बुला लिया। होशियारपुर के सुपरिन्टेण्डेंट बड़ी भारी संख्या में सशस्त्र सैनिकों को लेकर वहाँ पहुँचे।

पुलिस ने चारों ओर से घेर लिया। उस छोटी कोठरी का द्वार खोलते ही सामने पुलिस खड़ी देखकर आप खिलखिला कर हँस पड़े और अपने सम्बन्धी से कहने लगे—“भाई ! पुलिस बुलाना था, तो मुझे एकदम निशस्त्र क्यों कर दिया था ? पिस्तौल-रिवाल्वर नहीं तो एक लाठी या डण्डा ही रहने देते। एक वीर सैनिक की भाँति लड़ता-लड़ता प्राण तो दे सकता।”

इस पर पुलिस-अध्यक्ष ने कहा—“वाह जनाब ! बड़े वीर बने फिरते हो। हम लोग क्या सभी काशर और बुज़ादिल ही हैं ?”

आपने मुस्करा कर कहा—“बहुत खूब, इस समय मुझे निशस्त्र एक कोठरी में बन्द देखकर आप लोग गिरफ्तार करने के लिए आगे बढ़ने का साहस कर रहे हैं। ज़रा बाहर निकल जाने दो तो फिर देखूँ, कौन पकड़ सकता है ?”

उस वीर सैनिक को यह इच्छा कि सैनिक की भाँति लड़ता हुआ प्राण दे, पूर्ण न हुई। आप गिरफ्तार करके होशियारपुर लाए गए। वहाँ डिप्टी-कमिश्नर की अदालत में पेश किए गए। कोई एक घंटा तक डिप्टी-कमिश्नर से बातचीत होती रही। वह आपकी योग्यता और वीरता तथा धीरता देखकर मुग्ध-सा हो गया। इधर आपकी गिरफ्तारी की खबर दोआबे भर में आग की तरह फैल गई। लोग सैकड़ों की संख्या में आपके दर्शनों के लिए जमा होने लगे। कचहरी का हाता खचाखच

भर गया था। आप जब बाहर निकले तो लोग दर्शनों के लिए दूट पड़े। ऐसी दशा में अपने उन भाइयों से कुछ कहे बिना आपको न जा सके। आपने डिप्टी-कमिश्नर से कुछ कहने की आज्ञा माँगी। वे इन्कार न कर सके। आपने उस उमड़ते हुए जन-समुद्र को शान्त होने के लिए कह कर एक छोटा सा भाषण दिया और कहा :—

“प्यारे भाइयो ! आज हमें इस तरह बेड़ियों और ज़ञ्जीरों से कसा हुआ देख कर आप लोग निराश न हों। हमारी निश्चित मृत्यु सामने देखकर आप लोग घबराएँ नहीं ! हमें पूर्ण विश्वास है कि हमारे बलिदान व्यर्थ न जावेंगे। वह दिन शीघ्र आ रहा है, जबकि भारत पूर्णतया स्वतन्त्र हो जाएगा और अकड़वाज गोरे लोग आपके पाँव पर गिरेंगे × × × आप सब लोगों को स्वतन्त्रता की बलि-वेदी पर प्राण देने के लिए तैयार हो जाना चाहिए।”

आपको वहाँ से लाहौर ले आए। श्री० बलवन्त सिंह जी के साथ ही आप पर भी अभियोग चला। यों तो सदैव गुलाम देशों में न्याय-नाटक हुआ करता है, पर उन दिनों पञ्जाब में ओडायरशाही की तूती बोलती थी। ग़ज़ब का न्याय था, कोई अपील भी न हो सकती थी। कुछ ही दिनों में सब कुछ हो चुका। आपको मृत्यु-दण्ड सुनाया गया। आपने प्रसन्नतापूर्वक कहा—“हे परमात्मा ! तुझे कोटिशः धन्यवाद है, जो तूने मुझे देश-सेवा में जीवन बलिदान करने का सुअवसर प्रदान किया है।” फाँसी का हुक्म सुनकर आपको असीम आनन्द हुआ और उस दिन से फाँसी लगने के दिन तक आपका ११ पाउण्ड वजन बढ़ गया था।

आखिर एक दिन आपको प्रातःकाल उसी फाँसी के तख्ते पर ला खड़ा किया गया। आप उस समय सदा की तरह प्रसन्न-



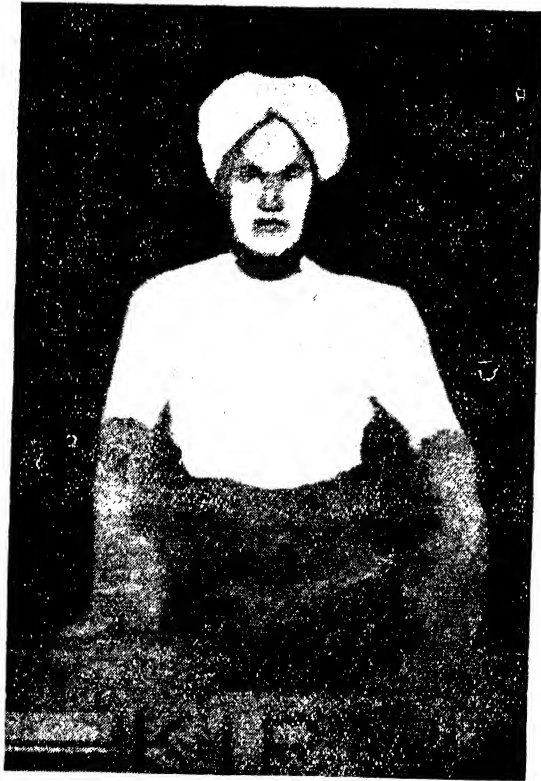
श्री वन्तासिंह



श्री० जीवनसिंह



श्री० किशनसिंह गर्गज



श्री बन्तासिंह धामियाँ

बित्त थे। तख्ता खिंचा। रस्ली में गला फँसाया ही जा चुका था। एकाच भटके से प्राण निकल गए और इस तरह पञ्जाब का एक और नर-रत्न भारत-स्वतन्त्रता की बलि-वेदी पर प्राणोत्सर्ग कर गया !!

श्री रङ्गासिंह

सन् १९१४-१५ में भारत की स्वाधीनता के व्यर्थ-प्रयास में लाहौर-सेन्ट्रल जेल की बलि-वेदी पर अपने नश्वर शरीर की आहुति देने वाले नर-रत्नों में से आप भी एक थे। जालन्धर जिले के 'खुर्दपुर' नामक गाँव में श्री० गुरुदत्तसिंह जी के घर सन् १८८५ के लगभग आपका जन्म हुआ था। कुछ दिन स्कूल में विद्याध्ययन करने के बाद आपने सैनिक शिक्षा पाने की इच्छा से फौज में नौकरी कर ली। ३० नवम्बर के रिसाले में २३ वर्ष की आयु तक नौकरी करने के बाद, सन् १९०८ में आप अमेरिका चले गये।

इसके बाद वही पुरानी कथा है। गदर-पार्टी बनी, अखबार निकला, प्रचार हुआ और आपके विचारों ने पलटा खाया। सन् १९१४ में, जबकि बहुत से सिक्ख अमेरिका से भारत को वापस आ रहे थे, तो आप भी युद्ध में अंगरेजों से दो-दो हाथ करने की लालसा से देश को वापस चले आए।

६ वर्ष तक बाहर रहने के बाद, २१ दिसम्बर, सन् १९१४ को आपने फिर भारत की भूमि पर पैर रक्खा और लगभग एक मास तक मकान पर ठहरकर घर का सारा प्रबन्ध आदि ठीक किया और फिर गाँव-गाँव जा कर गदर का प्रचार-कार्य करने लगे।

कहते हैं कि जब १९ फरवरी के विल्पव की बात खुल गई और बहुत से नेता गिरफ्तार कर लाहौर-सेन्ट्रल जेल में बन्द कर दिए गए थे तो जेल पर हमला कर उन्हें छुड़ाने के लिए कपूर-

थला-राज्य की मैगजीन लूट कर अस्त्र-शस्त्र लेने की बात निश्चय की गई थी। उस समय अगुआ लोगों में रङ्गासिंह भी थे। बाद को पर्याप्त शक्ति के होने के कारण निश्चय किया गया कि पहले बाला के पुल पर तैनात किए गए पुलिस के आदमियों को मार कर उनकी बन्दूकें आदि छीन ली जायँ और फिर उनको लेकर मैगजीन पर हमला किया जाय। अस्तु,

एकत्रित मनुष्यों में से कुछ को इस काम के लिए चुना गया, जिन में हमारे नायक भी थे। जब सिपाहियों को चौकन्ना देखकर उस समय उन पर हमला स्थगित कर दिया गया तो आप बहुत नाराज हुए। आपने कहा—“यदि इसी प्रकार अपनी शक्ति को कम समझकर हम हर एक काम को छोड़ते रहेंगे, तो कुछ भी न हो सकेगा। हमें तो इन्हीं थोड़े-बहुत आदमियों को लेकर सामना करना है।” बाद में इसी पुल पर हमला कर ये लोग चार आदमियों को मारकर उनकी बन्दूकें आदि छीन ले गये थे।

अन्त में जब २६ जून, सन् १९१४ की रात को आप एक शरबत वाले की दुकान पर सो रहे थे, तो पुलिस ने भेद मिल जाने पर अचानक हमला कर दिया। गिरफ्तार हो जाने पर आप पर सरकार के विरुद्ध षड्यन्त्र करने के अपराध में अभियोग चला और अदालत से फांसी की सजा मिली। इस प्रकार लाहौर-सेन्ट्रल जेल के वियोगान्त नाटक के एक और दृश्य के बाद उस पर सदा के लिए पर्दा पड़ गया।

श्री० वीरसिंह

आपका जन्म बहोवाल, जिला होशियारपुर में हुआ था। आपके पिता का नाम सरदार बूढासिंह था। आप सन् १९०६ में कैनेडा चले गए थे। अस्तु—

एक तो स्वाधीन देश, फिर आंदोलन की तेजी। अस्तु, आप भी इस लहर से खाली न रहे। विचारप्रवाह तो चल ही चुका

था। इन्हीं दिनों कामागाटा मारू की घटना, डेपूटेशन की असफलता तथा युद्ध के छिड़ जाने के कारण चारों ओर से ग़दर की ही आवाज़ सुनाई देने लगी। गाढ़ी कमाई के रूपए को ग़दर के काम में देकर लोगों ने भारत की ओर आना प्रारम्भ कर दिया। उस समय शायद ही कोई ऐसा बचा हो, जिसने इस कार्य में भाग न लिया हो। प्रायः सभी जगह यही सुनने में आता था कि चलो, देश चलकर आज़ादी के लिए युद्ध करें। अस्तु, इन्हीं सब बातों से प्रभावित होकर आप भी भारत वापस आए। और इधर-उधर घूमकर ग़दर का प्रचार शुरू कर दिया।

६ जून, सन् १९१५ का दिन था। आप चिट्ठी गाँव में एक कुएँ पर स्नान कर रहे थे कि पुलिस ने आ घेरा। गिरफ्तार कर आप लाहौर लाए गए और दूसरे केस में १०० आदमियों के साथ आप पर अभियोग चलाया गया। आप पर मैगज़ीन पर हमला करने तथा डाके डालने का अपराध लगाकर मौत की सज़ा दी गई।

उक्त १०० अभियुक्तों में से आपके अतिरिक्त पाँच को फांसी और ४२ को आज़न्म कालेपानी का दण्ड दिया गया था; साथ ही उनकी सारी सम्पत्ति भी जब्त कर ली गई। भारत के स्वतन्त्रता-इतिहास में लाहौर-सेंट्रल जेल का भी एक विशेष स्थान रहेगा।

श्री० उत्तमसिंह

अपने ही हाथों विप्लव-यज्ञ रचकर अन्त में उस पर अपनी ही आहुति देने वाले अनेक मस्त पागलों में से उत्तमसिंह भी एक थे। लुधियाना ज़िले के हंस नामक गाँव में आपका जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम श्री० जीतसिंह था। आपका दूसरा नाम श्री० राघोसिंह भी था।

कहां और कितनी शिक्षा पाने के बाद, किस आय तक देश में रहकर, आप कब अमेरिका चले गए थे, इन सभी बातों का अनुसन्धान अभी तक किया ही न गया। हाँ, इतना अवश्य पता चला है कि अमेरिका में गदर-पार्टी के आप एक अच्छे कार्यकर्ता थे, और उसी पार्टी के निश्चयानुसार सन् १९१४ के दिसम्बर मास में अपने कुछ और साथियों के साथ आप भारत में गदर का प्रचार करने के उद्देश्य से वापस आ गए थे। आते समय भी मार्ग में सेनाओं के अन्दर तथा अन्य भारतीयों में गदर का प्रचार करते आए थे।

स्मरणीय करतारसिंह से आपको पहले ही से जान-पहचान थी। भारत में आकर गन्धासिंह, बूढासिंह, अर्जुनसिंह, पिङ्गले आदि से भी आप मिले और बहुत ज़ोरों से कार्य आरम्भ कर दिया।

इन पागलों के पागलपन में भी एक स्फूर्ति है। उसमें भी एक नवीनता की झलक है। अस्तु, इसी नवीन उत्साह से प्रेरित होकर उस दिन जब १९ फरवरी, सन् १९१५ को केवल ५० आदमियों को साथ लेकर तरुण करतार ने ब्रिटिश-भारत की सबसे मजबूत छावनी फीरोज़पुर पर हमला करने का साहस किया था, तो आप भी उनके साथ थे। परिस्थिति प्रतिकूल हो जाने से उन्हें उस दिन सफलता भले ही न मिली हो, किंतु उनका साहस, उनका उत्साह, उनकी लगन और आत्म-विश्वास आदि का अनुमान इस बात से पूरी तौर पर किया जा सकता है।

१९ फरवरी के विराट् आयोजन के विफल हो जाने पर चारों ओर धर-पकड़ शुरू हो गई। उत्तमसिंह के नाम भी वारंट जारी किया गया, किन्तु उस समय आप पुलिस के हाथ न आ सके। अपने प्रगाढ़ परिश्रम से बनाए हुए भवन को इस

प्रकार नष्ट होते देख, वे हताश न हुए। उस समय कुछ-एक को छोड़कर, प्रायः सभी नेता गिरफ्तार हो चुके थे, अतः आपने उन्हें जेल से निकालने की इच्छा से नए सिरे से अस्त्र-शस्त्र संग्रह करना आरम्भ कर दिया। पहले कपूरथला-राज्य के मैगजीन को लूटने का विचार था, किन्तु बाद में बाला के पुल पर तैनात ७५० कारतूस समेत १५ सिपाहियों की पन्द्रहों रायफ़्लें, केवल ८-७ पिस्तौलधारी विप्लवियों ने छीन ली थीं। इस कार्य के सङ्गठन में भी उत्तमसिंह का ही अधिक हाथ था। आप बम बनाना भी जानते थे और एक बार और कुछ न मिलने पर आपने पीतल के लोठों से ही बम बनाने का काम लिया था।

अभी जेल पर हमला करने की आयोजना हो ही रही थी कि १६ सितम्बर, सन् १९१५ को, जब आप एक और साथी के साथ फरीदपुर-राज्य के माना-बघवाना नामक गाँव के पास एक साधू की कुटिया में ठहरे थे, गिरफ्तार कर लिए गए। उस समय आपने कहा:—“मुझे दुख है तो केवल इस बात का कि मेरे हाथ में कोई रिवॉल्वर या पिस्तौल आदि न थी।” पकड़े जाने पर दोनों ने एक साथ ही राष्ट्रीय गीत गाने शुरू कर दिए। लाहौर के तीसरे षड्यन्त्र में अदालत से आपको फांसी की सजा मिली और कुछ दिनों के बाद उस विराट् यज्ञ की एक और आहुति समाप्त हो गई।

डाँक्टर अरुड़सिंह

देश-प्रेम में मतवाले होकर जलती हुई शमा को पहली ही लपट पर एक मस्त परवाने की भांति वे अपना सब कुछ स्वाहा कर गए। उनके लिए तो—

झिन्दगी नाक़िस थी आखिर,

कर लिया मदफ़न पसन्द ।

सुना था यह, राहते-कामिल,

इसी मञ्जिल में है ॥

डॉक्टर साहब का जन्म जालन्धर जिले के सगवाल नामक गांव में हुआ था। शहीद भाई बन्तासिंह भी इसी गांव के थे और ये दोनों एक ही साथ काम किया करते थे। इन में खोज खबर करने का एक विशेष गुण था। प्रायः थाने में जाकर वहां के भी भेद ले आया करते थे। चालीस कोस चलने पर भी आप थकते न थे। इनकी काली, भरी हुई, दाढ़ी तथा मोटी आँखें देखकर प्रायः सभी लोग डर जाया करते थे। किन्तु आप स्वभाव के बड़े सरल तथा भावुक थे। आपका रहन-सहन बिल्कुल सादा था। आप पंजाब से बाहर रहकर काम करना पसन्द नहीं करते थे। यहाँ तक कि जिन दिनों पुलिस बुरी तरह आपकी तलाश कर रही थी तब भी आप पंजाब में ही गाँव-गाँव घूमकर प्रचार करते रहे और कई बार पुलिस के हाथ आकर भी निकल गए। आप नित्य ही प्रातः काल प्रार्थना किया करते थे कि हे प्रभु ! मेरी मृत्यु गोली लगकर या फाँसी पर लटक कर एक वीर की भाँति हो।

एक अमेरिकन से आपका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था। उन्हें आप अपना गुरु कहा करते थे। एक बार पता लगा कि वे लाहौर की सेंट्रल जेल में गिरफ्तार कर रक्खे गए हैं। बस पुलिस की निगाह होते हुए भी आप वहाँ जा पहुँचे और जेल के अन्दर जाकर उनसे मिले और सारा भेद लेकर वापस चले आए। एक ओर तो स्थान-स्थान पर आपके फोटो लगे हैं और गिरफ्तारी पर इनाम बढ़ा जा रहा है, उधर दूसरी ओर आप सरकार से जेल-जैसी जगह पर जाकर वहीं का सारा भेद ले रहे हैं !

जब लाहौर-जेल में आपका आना-जाना काफी बढ़ चुका था, तो किसी एक भेदिए ने पुलिस को इस बात का पता दे दिया। एक दिन जेल के दरवाजे पर खड़े थे कि एक पुलिस-अफसर ने सवाल किया—

“तुम कौन हो ?”

“मैं अरुड़सिंह हूँ ”

“कौन अरुड़सिंह ?”

“जिसको दूँदते-दूँदते तुम थक गए हो !”

अफसर को विश्वास न हुआ और वह घुमकर चल दिया। उस समय आपके दिल में न जाने क्या आई कि फिर उसे बुला कर स्वयं अपने को गिरफ्तार करवा दिया।

अभियोग चलने पर आपने सब बातें स्वीकार कर लीं। पुलिस-अफसर सुख्वासिंह ने जब आप से कोई चुभने वाली बात कही तब आपने डपटकर कहा—“कायर! तेरे जैसों को मैं बटेर समझता रहा हूँ। यदि चाहता तो एक पल में गर्दन मरोड़कर छुटकारा पा जाता, किन्तु कायरों के खून से हाथ रँगना मैं पाप समझता हूँ।” एक और अवसर पर थानेदार के यह पूछने पर कि क्या तुम मुझे और भी कभी मिले थे ? आपने उत्तर दिया—“मिलना तो क्या तुम्हारे सारे कामों कि रिपोर्ट मेरी डायरी में दर्ज है।” अन्त में अदालत से आप को फाँसी की सज़ा मिली। जेल में आप और साथियों को कहानियाँ सुनाया करते थे और फाँसी के दिन तक काफी मोटे हो गए थे।

बेफ़िक्री तथा मस्तानेपन के तो आप साक्षात् अवतार थे। जिस मौत का नाम सुनकर लोग काँप उठाते हैं, उसी को सामने देखकर भी आपके मस्तानेपन में अन्तर न आया। जिस दिन प्रातःकाल आपको फाँसी लगनी थी, उस दिन आप एक गहरी नींद में सो रहे थे। अफसर ने आकर जगाया। कहा-चलो, तुम्हें

फाँसी दी जायगी। आपने खड़े होकर ऊँचे स्वर से, “वन्दे-मातरम्” की ध्वनि की और हँसते हुए फाँसी के तख्ते की ओर चल दिए।

इसके बाद वही फाँसी का तख्ता, वही जल्लाद, वही रस्सी और वही अन्तिम झटका, और बस × × ×

बाबू हरिनामसिंह

रवि बाबू ने गुरु गोविन्दसिंह के समय के सिक्खों पर एक कविता लिखी थी। उसमें आपने कहा था—“जिन लोगों ने किसी का कर्ज नहीं उठा रक्खा और मृत्यु उनके चरण की दासी है, ऐसे निर्भय और निर्मम सिक्ख उठे हैं।”

इन्हीं निर्भय और निर्मम नर-रत्नों में से हमारे नायक हरिनामसिंह भी हैं। आपका जन्म जिला होशियारपुर के साहरी नामक गाँव में हुआ था। पिता का नाम श्री० लाभसिंह था। पढ़ने-लिखने में आप बड़े चतुर थे, किन्तु हाई क्लास में पहुँचते ही एकदम स्कूल छोड़कर सेना में जा भरती हुए। वहाँ पर आपका अलग जत्था था, जिसमें शब्द-कीर्तन हुआ करता था। साधारणतया आप कहा करते थे—“हमारा भी क्या जीवन है? हम इतने पतित हो गए हैं कि दस या ग्यारह रुपए के लिए मारे-मारे फिरते हैं और अपनी तथा दूसरी गुलाम जातियों की जख्मीरों जकड़ने में सहायता करते हैं। इस नौकरी से तो भूखों मरना अच्छा है और इस जीवन से तो मृत्यु अच्छी है। इत्यादि।” आपके एक-दो मित्र हँसकर पूछते—“क्यों जी, अगर आपका ऐसा मनोभाव है तो नौकरी छोड़ क्यों नहीं देते?” तो आप मुस्कराकर उत्तर देते—“जानते तो हो कि रुपए के लिए नौकरी नहीं करता हूँ। घर में सम्पत्ति है, वहीं रहकर आराम से गुज़र सकती है। परन्तु × × ×”



डाक्टर अरुणसिंह



बाबू हरनामसिंह

मला ऐसे विचारों का युवक कब तक नौकरी कर सकता था। डेढ़ वर्ष के बाद नौकरी छोड़कर घर चले आए। सेना में श्री० बलवन्तसिंह जी से आपका बहुत स्नेह था। विचार भी एक ही जैसे थे और नौकरी भी एक ही साथ छोड़ी।

कुछ दिन घर रहने के बाद आप बर्मा पहुँचे और फिर वहाँ से हाँगकाँग जाकर ट्राम-कम्पनी में नौकर हो गए। वहाँ पर से भारतीय, जो कैनेडा और अमेरिका जाने के लिए घर से आते थे, उन्हें इमिग्रेशन विभाग वाले निराश कर लौटा देते। उन बेचारों के पास खाने तक को कुछ न बचता था। उस समय हरिनामसिंह जी अपने पास से सहायता देकर उनका ढाढ़स बँधाते थे।

धीरे-धीरे उन्हें पता चला कि अमेरिका में लोग बड़े मज्जे में रहते हैं और वहाँ के वायुमण्डल में रहकर साधारण से साधारण भारतीय भी भारत को स्वतन्त्र करवाने की चिन्ता करने लगता है। अस्तु, स्वतंत्रता पाठ सीखने का उपयुक्त स्थान समझकर आपने हाँगकाँग स्थित भारतीयों को अमेरिका जाने के लिए प्रोत्साहित करना शुरू कर दिया। आवश्यकता पड़ने पर आप उनकी सहायता भी कर देते थे।

अन्त में १ली दिसम्बर, सन् १९०७ को, जबकि आपकी आयु बीस वर्ष से कम ही थी, आपने भी अमेरिका के लिए प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचकर एक वर्ष तक विक्टोरिया नगर में रहने के बाद, भारतवर्ष में स्कूल आदि शिक्षा-कार्य में व्यय करने के लिए, धन एकत्रित कर भेजने लगे।

१ली जनवरी, सन् १९०८ को आप कैनेडा से संयुक्तप्रदेश चले गए और वहाँ सीएटल नगर के स्कूल में पढ़ने लगे। तीन वर्ष बड़े यत्न से विद्योपार्जन होता रहा। इन्हीं दिनों कैनेडा-स्थित भारतीयों ने डेढ़ लाख रुपए की पूँजी से एक इण्डियन ट्रेडिङ्ग

कम्पनी खोली और सुविधा के लिए अङ्गरेज मैनेजर भी रख लिया। कम्पनी के हिस्सेदारों में हमारे नायक भी थे। कार्य खूब चल निकला। कम्पनी की एकदम ऐसी उन्नति गोरे पूँजीदारों से देखी न गई। उन्होंने उस अङ्गरेज को अपनी तरफ़ मिला लिया और उसने बेईमानी प्रारम्भ कर दी। हरिनामसिंह उनकी चालाकी ताड़ गए और उस पर देख-रेख रखने लगे। मगड़ा बढ़ने पर वे गोरे लोगों की आँखों में बेतरह खटकने लगे। आप को फँसाने की चेष्टा होने लगी। परन्तु आपके एक अङ्गरेज-मित्र रैमिस्बर्ग (Ramisburg), जोकि वहाँ मैजिस्ट्रेट थे, यह हालत देख उन्हें अपने साथ ले गए। ये महाशय संयुक्त-प्रदेश के रहने वाले थे और इन्हीं के यहाँ रहकर आपने तीन वर्ष तक शिक्षा पाई थी।

कुछ दिन बाद आप फिर कैनेडा चले गए और वहाँ से एक “दी हिन्दुस्तान” (The Hindustan) नामक अङ्गरेजी पत्र निकालना शुरू कर दिया। आप बड़े ओजस्वी लेखक थे। कैनेडावासी भारतीयों पर आपका विशेष प्रभाव था। सरकार को यह अच्छा न लगा और उन पर बम बनाने और सिखाने, विद्रोह-प्रचार आदि दोष लगाकर ४८ घण्टे के अन्दर कैनेडा से निकल जाने की आज्ञा दी गई। बड़ी विकट परिस्थिति थी। तुरन्त रैमिस्बर्ग को तार दिया गया। उन्होंने कैनेडा-सरकार को तार दिया कि उन्हें निर्वासित न किया जाये, मैं साथ ले आने के लिए आ रहा हूँ। और अपना प्राइवेट वोट लेकर उन्हें साथ ही ले आए। कुछ दिन के बाद आपको फिर कैनेडा जाने की आज्ञा मिल गई। २० मार्च, १९११ से आप संयुक्त-प्रदेश में वर्कले यूनिवर्सिटी में पढ़ने लगे। रादर अखबार में भी आप हर तरह से सहायता करते थे।

इधर दो सज्जन भाई गुरुदत्तसिंह और भाई दलीपसिंह

एक बम-केस में पकड़े गए, उधर कामागाटा मारु जहाज बन्दर-गाह पर आ पहुँचा। हरिनामसिंह अपने अन्य साथियों सहित बाबा गुरुदत्तसिंह तथा अन्य यात्रियों से सलाह करने गए और वहीं पकड़े गए शेष साथी तो छोड़ दिए गए, पर आपको न छोड़ा गया। इन्हें फिर देश-निकाले की आज्ञा हुई। कुछ दिन के मगड़े के बाद यह जानकर कि इस बार कोई सफलता न होगी, आप भारत की ओर आने वाले एक जहाज पर सवार हो गए और चीन, जापान तथा स्याम आदि में ग़दर-पार्टी का कार्य करते हुए आप बर्मा पहुँचे। यह १९१५ के दिन थे। सिङ्गापुर के विद्रोह-दमन के बाद बहुत से ग़दर-नेता बर्मा पहुँच गए थे। इरादा था कि अक्टूबर, १९१५ में बकरीद के दिन विद्रोह खड़ा किया जाय और बकरो की जगह गोरे शासकों की कुरबानी दी जाय, परन्तु बाद में २५ दिसम्बर का दिन निश्चित किया गया। इन्हीं सब चेष्टाओं में दिन-रात जुटे रहकर वे घोर परिश्रम कर रहे थे कि एक दिन आप एकाएक माण्डले में गिरफ्तार कर लिए गए। अभियोग चला और आप को मृत्यु-दण्ड दिया गया। अभी जेल ही में बंद थे और फांसी नहीं दी गई थी कि आप जेल से भाग गए। किन्तु शीघ्र ही पकड़कर फांसी पर लटका दिए गए।

आपके आग्रह से आपकी धर्म-पत्नी ने आप ही के छोटे भाई से विवाह कर लिया था। बाबू हरिनामसिंह बड़े स्वतन्त्र-प्रकृति और दृढ़-चित्त के आदमी थे। आप साधारणतया “हिन्दी है, हम वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा” और “मरना भला है उसका जो अपने लिए जिये।” आदि पद्य गाते रहते थे।

श्री० भागसिंह, श्री० हरिनामसिंह और श्री० बलबन्तसिंह इन तीनों सज्जनों में अगाध प्रेम था।

तीनों का रहन सहन, खान-पान और काम-काज एक साथ

ही होता था। उस समय गदर-आन्दोलन के ये तीनों ही प्राण थे। एक-एक कर उन तीनों ने ही भारत को स्वतन्त्र करवाने के लिए बारी-बारी से आत्म-दान दे दिया। देश के लिए वे जिए और देश ही के लिए वे मर भी गए। प्रेम का कितना सुन्दर दृष्टान्त है ?

श्री० सोहनलाल पाठक

सन् १९१४ की बात है। अमेरिका की गदर-पार्टी की ओर से प्रायः सभी देशों में गदर-प्रचार के लिए आदमी भेजे जा रहे थे। अस्तु, पाठक जी भी इसी पार्टी की ओर से बर्मा में प्रचार-कार्य करने के लिए भेजे गए। सन् १९१५ के आरम्भ में ही आप बैङ्काँक आए और कुछ दिन वहाँ पर गदर का कार्य करने के बाद रंगून आ पहुँचे। यहाँ पर असङ्गठित रूप से अपना केन्द्र बनाकर सोहनलाल ने उस दिन की व्यर्थ आशा से, जबकि सारे भारत में एक साथ ही एक बार फिर रणचण्डी का ताण्डव नृत्य प्रारम्भ हो जायगा, सेनाओं में विद्रोह का प्रचार-कार्य जोरों के साथ आरम्भ कर दिया।

२१ फरवरी आई और निकल गई। भेद खुल जाने से उस दिन बलवा न हो सका और चारों ओर धर-पकड़ होने लगी। किन्तु विद्रोहियों के जीवन में यह कोई नई बात न थी। उनका तो जीवन ही असफलताओं का जीवन है। वे तो “कर्मण्येवाधि-कारस्ते” का ही पाठ लेकर इस क्षेत्र में आए थे। अस्तु, सोहनलाल इतने पर भी हताश न हुए। उन्होंने नए उत्साह से फिर विद्रोह की आयोजना आरम्भ कर दी।

एक दिन अगस्त, १९१४ में, जबकि वे मेमिबो के तोपखाने

में गदर का प्रचार कर रहे थे, एक जमादार ने उन्हें गिरफ्तार करवा दिया। तीन पिस्तौले तथा २७० कारतूसे पास होते हुए भी न जाने सोहनलाल ने उस समय उनका प्रयोग क्यों नहीं किया।

पाठक जी जेल में बन्द थे। अधिकारियों के आने पर और कैदियों ने तो झुक-झुक कर सलाम करना प्रारम्भ कर दिया किन्तु आप की मस्ती कुछ और ही ढंग की थी। बोले—“जब मैं अंगरेजों के, राज्य को अन्यायी और अत्याचारी मानता हूँ, तो उनकी जेल के नियम ही क्यों मानूँ।”

अधिकारियों के आने पर खड़ा होना भी शायद उनके प्रोग्राम के बाहर था, हाँ, एक बात आवश्यक थी, वे कभी किसी के साथ असभ्यता का व्यवहार न करते थे। यदि कोई उनसे खड़े होकर बात करता तो आप भी उससे खड़े होकर ही बात करते थे। एक बार बर्मा के लार्ड महोदय जेल देखने आए। जेलर ने सोहनलाल से प्रार्थना की कि उनके आने पर खड़े होकर स्वागत कर लेना। जब आप राजी न हुये तो जेलर ने एक और चाल चली। जिस समय लार्ड महोदय जेल में आए तो जेलर पहले ही से पाठक जी के पास जाकर खड़े-खड़े उनसे बातें करने लगे और लार्ड के आने पर उन्हें फिर से खड़ा होना न पड़ा। अपनी दो घण्टे की बातचीत में लार्ड ने आपसे बहुतेरा अनुरोध किया कि तुम माफी मांगकर प्राण-दण्ड से बरी हो जाओ किन्तु आपने एक न मानी।

अन्त में फांसी के दिन एक अंग्रेज-मैजिस्ट्रेट ने आकर फिर आपसे माफी मांग लेने का अनुरोध किया। मृत्यु मुँह फैलाये सामने खड़ी है। फांसी का तख्ता तथा रस्सी का फंदा ठीक हो चुका है। ऐसे समय में जेल के सभी कर्मचारी सोहनलाल के मुँह की ओर देखकर उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी देर

की निस्तब्धता के बाद उस पागल पुजारी ने मुस्कराते हुए कहा :—

“क्षमा माँगनी हो तो अंगरेज मुझसे क्षमा मांगें। मैंने कोई अपराध नहीं किया। असली अपराधी तो वे ही हैं। हाँ, यदि मुझे बिलकुल ही छोड़ने का वचन दो, तो तुम्हारी बात पर विचार कर सकता हूँ।”

उत्तर मिला—यह तो अधिकार से बाहर की बात है।

“तो फिर अब देर क्यों करते हो ? तुम अपना कर्तव्य पूरा करो और मुझे अपना कर्तव्य करने दो।”

देखते-देखते तख्ता खिंचा और रस्सी के झटके के साथ ही यह दृश्य भी समाप्त हो गया।

भाई रामसिंह

पिण्ड तुलेताँ, जिला जालन्धर में आपका जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम श्री० जीवनसिंह था। छोटी उमर में ही १६०७ या आठ में आप कैनेडा चले गए थे। यहाँ पर इन्हें व्योपार आदि में अच्छी सफलता हुई और ये वहाँ के भारत-वासियों में सबसे अधिक धनवान गिने जाने लगे। किन्तु इतने पर भी आपका स्वभाव बड़ा सरल था और ये अपने धन को देश तथा जाति का धन कहा करते थे। दान देने में आप बड़े सिद्ध-हस्त थे। दीवान के लङ्गर आदि का खर्च इन्हीं के रुपए से चला करता था।

सन् १६१४ में कैनेडा-स्थित भारतीयों को बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कामागाटा मारु की घटना, व्यापार का मन्द पड़ जाना, गुरुद्वारे में दो नेताओं का मारा जाना आदि बातों ने परिस्थिति को एकदम बदल दिया। गुलामी की अधिक ठोकड़ें न सह सकने के कारण लोग देश

की ओर वापस आने लगे। रामसिंह जी भी इसी विचार से कैनेडा से यूनाइटेड स्टेट्स आए। यहाँ आने पर लोगों ने भारत न आकर आप से वहीं ठहर कर कार्य करने का आग्रह किया।

उन दिनों ग़दर-पार्टी का कार्य-भार पं० रामचन्द्र नामक व्यक्ति के हाथ में था। इन्होंने नियमों आदि को एक ओर रख, पार्टी पर अपना ही व्यक्तित्व जमा रक्खा था। सारा काम इन्हीं की इच्छा-मात्र पर निर्भर था। इनको सदा यही चिन्ता रहती कि कोई अच्छा काम करने वाला अमेरिका में न ठहरने पाए। अस्तु, इसी विचार से रामसिंह को भी वहाँ से निकालने की आपने एक चाल चली। एक जूते में एक कागज़ सीकर रामसिंह को देते हुए कहा—“इसे भारत में अमुक व्यक्ति के पास ले जाना है। यह इतना जरूरी है कि आपके सिवा और किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता।” अस्तु, आप भारत चल दिए। आते समय मनील्ला में कुछ और पुराने कार्यकर्त्ताओं से भेंट हुई। उन्होंने रामचन्द्र का असली स्वरूप बताकर यह भी कहा कि इस समय भारत जाना मृत्यु के मुँह में जाना है। बूट खोलने पर उसमें साधारण छपे कागज़ के सिवा और कुछ न निकला। अस्तु आप चीन-जापान होते हुए फिर अमेरिका वापस चले गए।

इस समय रामचन्द्र तथा अन्य लोगों में काफी झगड़ा बढ़ गया। बहुत कुछ प्रयत्न करने के बाद भी झगड़ा मिटने की कोई आशा न देख, आपने सन् १९१६ में कैलिफोर्निया के सैक्रोमेण्ट नामक शहर में एक मीटिंग की और नए अधिकारी चुनकर पार्टी का काम आरम्भ कर दिया। रामचन्द्र ने इसे अनियमित कहकर एक और सभा बुलाई, किन्तु इसने भी उसी रामसिंह वाली कमेटी को ही सर्वोपरि मानकर उसमें तीन आदमी और बढ़ा दिए। और यह भी निश्चय किया कि ७ दिन

के अन्दर ही पुराने लोग इस नई कमेटी को सारे काम का चार्ज दे दें। और यदि ऐसा न हो तो कमेटी बलपूर्वक सब चीजों पर अधिकार कर ले। किन्तु इतने पर भी चार्ज न मिला। प्रेस पर अधिकार करते समय वे लोग पुलिस को बुला लाये। पुलिस के आने पर रामसिंह ने सब हाल बयान किया, आखिर वह एक स्वाधीन देश की पुलिस थी। अस्तु, उन लोगों ने स्वयं ताला तोड़कर प्रेस पर नई कमेटी का अधिकार करा दिया।

इसके बाद चारों ओर घूम-घूम कर आपने सङ्गठन का कार्य भी समाप्त किया। उस समय लोगों ने आप को सेन्ट्रल-कमेटी का प्रधान बनाना चाहा, किन्तु यह कहकर कि मैंने ही इसे बनाया है, और मैं ही इसका मुखिया बन बैटूँ, यह ठीक नहीं; आपने उक्त पद को स्वीकार न किया। किन्तु फिर भी आपका सारा समय इसी कार्य में व्यतीत होता रहा।

इसी बीच अमेरिका ने भी महायुद्ध में भाग लेने का एलान कर दिया और साथ ही ग़दर-पार्टी के खास-खास कार्यकर्त्ताओं को भी गिरफ्तार कर लिया गया। कहा गया था कि इन लोगों के कारण ही ब्रिटिश के प्रति अमेरिका की निष्पक्षता में अन्तर आ गया था। खैर, जो भी हो, रामसिंह जी इसी अपराध में गिरफ्तार हुए। कुछ ही दिनों बाद पं० रामचन्द्र भी पकड़े गए। उस समय आपने पण्डित जी से कहा कि बाहर हमारा जो भी मतभेद रहा हो, यहाँ पर हमें एक साथ मिलकर ही चलना ठीक होगा। किन्तु वे इस पर राजी न हुए और अन्त में यही बात अधिक जोर पकड़ गई। अभियोग चलने पर समाचार-पत्रों ने इस बात को लेकर कि रामचन्द्र की पार्टी ने ऐसा कहा और दूसरी पार्टी ने ऐसा कहा, खूब लेख आदि लिखना आरम्भ कर दिया। पार्टी की बदनामी होते देख, रामसिंह ने एक बार फिर प्रयत्न किया कि पार्टीबन्दी दूर हो जाय

और सब लोगों का अभियोग एक ही साथ चले, किन्तु इस बार भी सफलता न हुई ।

केस जूरी को सौंपा गया और जिस समय जज लोग दोपहर को खाना खाने गए तो रामसिंह ने अदालत में ही रिवाल्वर निकालकर रामचन्द्र पर फायर कर दिया । जिस समय रामचन्द्र को गिरता देख आपने हाथ नीचा कर लिया था, सामने बैठे हुए कोतवाल ने रामसिंह पर गोली चला दी । इस प्रकार अमेरिका की बीच अदालत में होने वाले एक और शहीदी अभिनय का दृश्य समाप्त हुआ ।

इस बात की तह में कुछ भी रहा हो, किन्तु यह तो मानना ही पड़ेगा कि रामसिंह ने यह काम ग़दर-पार्टी की बदनामी न सह सकने के कारण ही किया था ।

श्री० भानसिंह

फाँसी पर चढ़कर प्राण देने वाले विप्लवी यदि देश के लिए गौरव की वस्तु हैं, तो उन लोगों का महत्व भी किसी तरह कम नहीं, जो आततायियों द्वारा निरन्तर अकथनीय यातनाएँ सहन करते हुए, तिल-तिल कर प्राण देते हैं । उनका नाम जन-साधारण नहीं जान पाते, उनका गुप्त-कार्य ही महत्वपूर्ण होता है और उन्हीं का बलिदान अधिक महिमामय हुआ करता है ।

ऐसे ही हमारे नायक श्री० भानसिंह भी थे । आपका जन्म 'सुनेत' नामक गाँव, जिला लुधियाना में हुआ था । पहले आप एक रिसाले में भरती हुए थे, किन्तु बाद में नौकरी छोड़कर अमेरिका चले गये थे, कैलीफोर्निया में रह कर, सन् १९११ के सभी राजनैतिक कार्यों में आप बढ़ चढ़ कर भाग लेने लगे थे ।

शेष वही पुरानी कथा है । ग़दर दल बना, ग़दर अख़बार निकला, सज़ा ठन हुआ और अन्त में महायुद्ध के छिड़ते ही

लोग देश को लौटने लगे। सब से प्रथम कोरिया तथा तोशामाक जहाज आ गए थे। उन्हीं में आप भी चल दिए। आते ही इमिग्रैन्ट्स ऑर्डिनेन्स (Immigrants Ordinance) के शिकार बन गए। मार्ग में आप गदर का प्रचार करते आए थे।

अस्तु—

२६ अक्टूबर, १९१४ को आप कलकत्ते पहुँचते ही पकड़ लिए गए। नवम्बर के अन्त तक मॉण्टगुमरी जेल में बन्द रखे जाने के बाद एक दिन आप छोड़ दिए गए। इस पर कुछ साथी आप पर सन्देह करने लगे, किन्तु आपने अपनी तत्परता से फिर सब पर अपना विश्वास जमा लिया। कार्य जारी रहा और अन्त में बना-बनाया खेल बिगड़ गया। विसव-आयोजन के विफल होते ही चारों ओर गिरफ्तारियों का बाजार गर्म हो उठा। हमारे नायक पर डकैती अथवा हत्या का कोई दोष सिद्ध न होने पर भी, उन्हें आजन्म कालेपानी का दण्ड मिला।

आप अन्दमान लाए गए। यहाँ के जेलर तथा अन्य अधिकारियों को अपनी हृदय-हीनता पर विशेष गर्व था और परिणाम-स्वरूप कैंदियों और अधिकारियों में सदैव ही झगड़ा चला करता था। एक बार कोई उत्सव था। उस दिन मिठाई बँटी। राजनैतिक कैंदियों को भी पेश की गई। कुछेक सज्जन मिठाई खा आए। श्री० भानसिंह जी ने उन्हें आड़े हाथों लिया, बहुत नाराज़ हुए। विसव-पन्थियों के गम्भीर प्रेम के कारण ही वे इस प्रकार अपने सहकारियों पर क्रुद्ध हुए थे और उन्होंने चुपचाप सब सहार लिया था। सभी ने क्षमा चाही। इस बात का पता अधिकारियों को लगा। आपको किसी अधिकारी ने कोई गाली दे दी। आप यह सहार न सके। उस दिन कोठरी में बन्द होने के कारण सब कुछ चुपचाप सहना पड़ा।

अगले दिन से आपने काम करने से इन्कार कर दिया। इस पर जेलर ने ६ महीने के लिए डण्डा बेड़ी पहनकर काल-कोठरी में बन्द कर दिया। साथ ही आधी खुराक की सजा भी दे दी। आधी खुराक वाले को पानी भी पर्याप्त नहीं दिया जाता था। उस ग्रीष्म जलवायु वाले द्वीप में यह दण्ड कितना असह्य होता है, यह हम लोग क्या अनुभव करेंगे ?

न जाने किस नशे में मस्त होकर ये विलसी इन सब अकथनीय कष्टों को हँसी-खुशी सहार लेते हैं। किस उच्च भावना से इस योग्य हो पाते हैं कि अपने जीवन का कोई आराम भी उन्हें प्रलोभित कर पथ-भ्रष्ट नहीं कर पाता। ४० वर्ष से अधिक आयु वाले भानसिंह उस ग्रीष्म-ऋतु में अल्प आहार और अल्प जल के दण्ड को भी हँसी-खुशी से सहार गए। उस वीर को प्रेम का नशा पागल बनाए रहता था। एक दिन आपने गाना शुरू कर दिया—“मित्र प्यारे नूँ हाल मुरीदाँ दाँ कहना !” जेलर ने चुप रहने की आज्ञा दी। परन्तु ईश्वर-भजन से भी वञ्चित करने का अधिकार उसे किसने दिया ? भानसिंह अब उसकी आज्ञाएँ क्यों मानने लगे ! उन्होंने अपना अलाप जारी रक्खा। आप दूसरी मंजिल की कोठरी में बन्द थे। अब उन्हें तीसरी मंजिल की कोठरी में बन्द किया गया कोठरी क्या थी, एक खासा तङ्ग सन्दूक था। ढाई वर्ग फीट की कोठरी ही क्या हो सकती है ? किन्तु अलाप फिर भी बन्द न हुआ। निर्दय अधिकारियों ने इस बार आपको बुरी तरह पीटा। हड्डियाँ तोड़ डालीं। परन्तु इससे क्या होता था ? राजनैतिक क्रांति के साथ किए जाने वाले ये अमानुषिक अत्याचार उनके लिए असह्य थे और उन्हीं के हाथों प्राण

त्याग कर वे एक प्रभावशाली आन्दोलन खड़ा करना चाहते थे ।

गाने का शब्द बन्द न होता देख, अधिकारी फिर मारने गए । इस बार शेष दल को भी पता चल गया । रोटी खाने का समय था । सभी उस कोठरी की ओर भागे । परन्तु बारकों के द्वार बन्द कर दिए गए और भीतर उस नर-रत्न को बुरी तरह पीटा गया । आज वह शेर पिछ्छरे में बन्द था, जंजीरों से जकड़ा हुआ था । सब सहन करना पड़ा । जो वीर बड़े उत्साह से देश के स्वातन्त्र-संग्राम में भाग लेने के विचार से आया था, वही आज निष्फल हो, बन्दी बनाकर, इस तरह पिट रहा था । उस समय उनके हृदय पर क्या गुञ्जरती होगी, यह हम लोग क्या समझेंगे ? अन्त में उन्हें वही आधी खुशक काल कोठरी और डण्डा-बेड़ी की सजा मिली । अन्य कैदियों ने भी कार्य छोड़ दिया और उन्हें भी वही सजा दी गई ।

भानसिंह जी को बुरी तरह पीटा गया था । दशा नाजुक हो गई थी । मुँह में पानी न जाता था, बचने की कुछ भी आशा न थी । जेल के अन्दर उनकी मृत्यु न हो, इसलिए उन्हें बाहर के अस्पताल में भेज दिया गया, वहाँ कुछेक दिन के बाद श्री० भानसिंह जी अपनी जीवन-यात्रा समाप्त कर दूर अपने 'मित्र प्यारे' के पास 'सुरीदाँ दा हाल' कहने चले गए ।

श्री यतीन्द्रनाथ मुकर्जी

बङ्गाल के पवना नामक स्थान में एक बङ्गाली ब्राह्मण-परिवार में उनका जन्म हुआ था । बाल्यकाल से ही शारीरिक व्यायाम, दौड़-धूप तथा कुश्ती आदि की ओर उनकी विशेष रुचि थी । घोड़े की सवारी भी वे अच्छी तरह जानते थे । उनका एक अपना घोड़ा था जिसे वे बहुत प्यार करते थे । उनके जीवन की अनेक घटनाओं के साथ इस घोड़े का भी बहुत सम्बन्ध है ।

पढ़ने लिखने की ओर आपकी कुछ अधिक रुचि न थी । अस्तु, मैट्रिक पास करने के बाद कुछ दिन कॉलेज में पढ़कर उन्होंने ३०) मासिक पर एक ऑफिस में नौकरी कर ली । सेनानायक के प्रायः सभी गुण उनमें विद्यमान थे । उनको देख कर ऐसा जान पड़ता था, मानों भगवान् ने उन्हें मनुष्यों का नेता बनाकर ही यहां भेजा था । उनका शरीर बहुत सुन्दर तथा सुडौल था और वे स्वभाव से ही बड़े निर्भीक थे ।

जिस समय पूर्व बङ्गाल की अनुशीलन समिति और चन्द्रनगर का रासबिहारी का दल मिलकर भारत में विस्रव की आयोजना कर रहा था, ठीक उसी समय बङ्गाल के एक दूसरे कोने में यतीन्द्रनाथ की अध्यक्षता में एक और दल भी काम कर रहा था । उस समय इस दल का उपरोक्त दोनों दलों से कोई सम्बन्ध न था ।

पंजाब में २१ फरवरी, १९१५ को विस्रव होने की बात सुनकर आप बनारस आए और रासबिहारी से मिले । उस समय रासबिहारी के पास धन की कमी थी । आपने इस कमी को पूरा करने का भार अपने सिर लिया । कहते हैं कि एक ही महीने में उन्होंने इतना रुपया एकत्रित कर लिया था, जिससे कई वर्ष तक रासबिहारी का कार्य निर्विघ्न रूप से चल सकता था ।

एक दिन आप कलकत्ते के एक मकान में अपने कुछ और साथियों के साथ ठहरे हुए थे कि एक व्यक्ति ने, जिस पर ये लोग सन्देह करते थे, उन्हें पहचान लिया । अस्तु, एक युवक ने उसके गोली मार दी । इस घटना के कारण सब को मकान छोड़कर भागना पड़ा । जिस व्यक्ति के गोली लगी थी उसने अपने मरते समय के इच्छाहार (Dying Declaration) में यतीन्द्र को ही अपनी हत्या का अपराधी बतलाया । एक तो यों ही पुलिस बुरी तौर से आपकी तलाश में थी, जिस पर

इस घटना ने रही-सही कमी को भी पूरी कर दी। यतीन्द्र के सिर फाँसी का परवाना लटकने लगा।

परिस्थिति भयानक होते देख उनके साथियों ने उनसे विदेश चले जाने का आग्रह किया। उस समय उस भावुक बीर ने करुणा-भरे स्वर में कहा—“भाई ! हम लोग जीवन मरण में एक दूसरे का साथ देने की शपथ लेकर ही घरों से बाहर हुए थे। अस्तु, बाकी साथियों को विपत्ति के मुख में छोड़कर मैं अकेला विदेश जा सकूँगा। वहाँ जाकर सुखपूर्वक दिन व्यतीत करने की अपेक्षा मुझे तुम लोगों के साथ भूख प्यास से तड़प-तड़प कर मरने में ही विशेष आनन्द है। कलकत्ते में अब और अधिक ठहरना निरापद न जानकर, बालेश्वर के निकट एक स्थान पर नया केन्द्र स्थापित किया गया और यतीन्द्र चार आदमियों के साथ वहीं पर रहकर विसर्ग का कार्य करने लगे।

इसी बीच कलकत्ते में कुछ और धर-पकड़ हुई और यतीन्द्र के इस नए स्थान का पता भी पुलिस को लग गया। जिस समय यतीन्द्र को इस बात का पता लगा तो उनके दो साथी बारह मील दूर एक जङ्गल में थे। यदि वे चाहते तो उस समय अपने प्राणों की रक्षा कर सकते थे, किन्तु असाध्य साधन ही उनके जीवन का व्रत था। अस्तु, दो और साथियों सहित उन दोनों को लेने के लिए चल दिए। अँधेरी रात में पहाड़ों के ऊँचे-नीचे रास्ते से हो कर बारह मील जङ्गल में जाकर फिर वापस आना उन्हीं के साहस की बात थी।

पुलिस वालों ने गाँवों में चारों ओर कह रक्खा था कि जङ्गल में कुछ भयानक डाकुओं का एक दल छिपा है और उसके पकड़वाने में उन्हें सहायता करनी पड़ेगी। मार्ग में भी स्थान स्थान पर पुलिस की चौकियाँ बिठाला दी गई थीं।

यतीन्द्र को अपने साथियों तक पहुँचते न पहुँचते दिन निकल आया और वे बस्ती के बीच से हो कर बालेश्वर की ओर चल दिए। दिन-रात चलते रहने के कारण दो दिन से कुछ भी खाने को न मिला था, तिस पर ग्रीष्म की दोपहरी और भी परेशान कर रही थी। मार्ग में एक नदी के किनारे पहुँचकर मल्लाह से कुछ चावल पका देने को कहा। किन्तु हिन्दू-धर्म का पोषक, ब्राह्मण-भक्त माँझी ब्राह्मण को अपने हाथ का भात खिलाकर अपने लिए नरक का द्वार खोलने पर किसी भाँति भी राजी न हुआ। उसके निकट ब्राह्मण की प्राण-रक्षा का कोई भी मूल्य न था।

यतीन्द्र के इस ओर आने का समाचार भी पुलिस से छिपा न रहा। जिस समय वे एक गाँव से दूसरे गाँव में भागते फिर रहे थे, तो एक दिन सन्ध्या समय बालेश्वर के पास जङ्गल में अपने चारों साथियों सहित घिर गए। युद्ध का सारा समान साथ लेकर जिला-मैजिस्ट्रेट तथा पुलिस-सुपरिन्टेण्डेण्ट जङ्गल के दोनों ओर से सर्चलाईट छोड़ते हुए उनका पीछा करने लगे। इस लुका-छिपी में सारी रात समाप्त हो गई। प्रातः काल होने पर बचने की कोई भी सम्भावना न देख, उन लोगों ने आमने सामने लड़कर प्राण देना ही ठीक समझा।

निश्चय करने भर की देर थी। एक ओर युद्ध के सारे सामान से सुसज्जित हज़ार से भी अधिक गाँव वाले तथा पुलिस के लोग थे और दूसरी ओर थे भूख, प्यास, अनिन्द्रा और मार्ग के थकान से परेशान केवल पाँच विप्लवी ! दोनों ओर से गोली चलने लगी। वायुमण्डल बारूद के धुएँ से भर गया। ये लोग ऊँची-नीची ज़मीन पर लेटकर गोलियाँ चलाने लगे। किन्तु भूख प्यास से व्याकुल पाँच विप्लवी कब तक पुलिस का सामना कर सकते थे। प्रायः सभी लोग घायल हो चुके थे कि एक गोली ने

चिन्मय को सदा के लिए धराशायी बना दिया। यतीन्द्र भी बुरी तरह घायल हो चुके थे। गोलियाँ भी समाप्त होने पर थीं। अस्तु, अपने जीने की और अधिक आशा न देख, उन्होंने आग्रह कर शेष तीनों साथियों से आत्म-समर्पण करा दिया।

यतीन्द्र अवसन्न होकर गिर पड़े। प्यास से उनका गला सूखने लगा। खून से तर-बतर बालक मनोरञ्जन पास में पड़ा था। यतीन्द्र के क्षीण स्वर से “पानी” का शब्द सुनकर मनोरञ्जन पास के सरोवर से चादर भिगोने चल दिया। यह देखकर पुलिस-अफसर की आँखों में भी आँसू आ गए। उसने मनोरञ्जन से बैठने के लिए कहा और स्वयं अपनी टोपी में पानी लाकर यतीन्द्र के मुख में डालने लगा। बाद में कटक के अस्पताल में पहुँचकर रणचण्डी के परम उपासक वीर यतीन्द्र ने भी अपने प्राण त्याग दिए। उस समय पुलिस-कमिश्नर मि० टेगार्ट ने कहा था :—

“Though I had to do my duty, but I have a great respect for him. He was the only Bengali who gave his life while fighting face to face with the polic.”

यह घटना ६ सितम्बर १९१५ की है।

अन्त में मनोरञ्जन तथा नीरेन्द्र को भी फाँसी की सजा हुई और ज्योतिष को आजन्म कारागार का दण्ड दिया गया। बाद में जेल के कष्टों से वे पागल हो गए और कुछ दिन बहरमपुर के पागलखाने में रहने के बाद वे भी अपने चारों साथियों के पास चले गए।

श्री० नलिनी बाक्य

पंजाब का विराट् विप्लवायोजन विफल हो जाने के बाद भी विप्लवी एकदम निराश नहीं हुए। जो लोग उस समय की

धर-पकड़ से बच गये थे, उन्होंने फिर नए सिरे से उस महान् यज्ञ की आयोजना प्रारम्भ कर दी। बिहार में सङ्गठन की कमी थी। अस्तु; वीरभूमि के श्री० नलिनी वाक्छ्य को भागलपुर के कॉलेज में पढ़ने के लिए भेजा गया। यहाँ आकर नलिनी एक पूरा बिहारी बन गया। सर के लम्बे-लम्बे बाल कटाकर उन्होंने टोपी पहननी शुरू कर दी। एक मोटे कपड़े का कुत्ता तथा फेंट-दार धोती बाँधकर वे उस कॉलेज में अपने दिन बिताने लगे ! इतना सब करने पर भी आप पुलिस की निगाह से बच न सके और विवश हो, उन्हें कॉलेज छोड़कर फिर बंगाल वापस जाना पड़ा। सन् १६१७ के दिन थे। बंगाल में उस समय भी चारों ओर धर-पकड़ जारी थी। अस्तु, यहाँ पर भी अधिक समय तक उनका ठहरना न हो सका। परिस्थिति अधिक भयानक होते देख, कुछ दिनों के लिए कार्य को स्थगित कर, चुने-चुने कार्यकर्त्ताओं को किसी सुरक्षित स्थान पर रख देने की बात निश्चित की गई। नलिनी अपने चार साथियों को साथ लेकर गोहाटी में एक किराए के मकान में रहने लगे। सोते समय रिवॉल्वर भरकर तकिए के नीचे रख लेते और बारी-बारी एक आदमी खिड़की में बैठकर पहरा दिया करता।

अभी अधिक दिन न बीते थे कि किसी ने पुलिस को पता दे दिया कि अमुक मकान में कुछ बंगाली-युवक रह रहे हैं। बस दूसरे ही दिन प्रातः काल मकान घेर लिया गया। पहरे वाले युवक ने चुपके से और साथियों को जगा दिया, और सब लोग नीचे आकर पुलिस पर गोलियाँ बरसाने लगे। पुलिस को इस प्रकार के आक्रमण का लेशमात्र भी ध्यान न था। अस्तु, सब के सब तितर-बितर हो गए और ये लोग भागकर पास की पहाड़ी पर जा पहुँचे।

तीसरे पहर का समय था। एकदम हज्जारों सशस्त्र सिपा-

हियों से पहाड़ी घिर गई। एक बार फिर बन्दूक तथा पिस्तौल की आवाज़ से आकाश गूँज उठा। किन्तु इतनी सेना के सामने ये इने-गिने युवक कब तक ठहर सकते थे। अस्तु, दो को छोड़कर शेष सभी वहीं पर मारे गए। बचे हुए दोनों युवक किसी प्रकार आँख बचाकर निकल गए।

सात दिन पहाड़ी पर बिना खाए-पिए घूमते रहने से नलिनी के अंग शिथिल होने लगे थे कि इसी बीच एक पहाड़ी कीड़ा भी इनके चिपक गया। नलिनी वहाँ से पैदल ही बिहार पहुँचे; किन्तु वहाँ पर पहले ही से आपकी तलाश हो रही थी। अस्तु, बिहार से भी आप को भागना पड़ा।

बंगाल में हावड़ा-स्टेशन पर पहुँचकर आपको कोई भी साथी न मिला। शरीर बिलकुल कमजोर हो चुका था। दो सप्ताह से खाना तो क्या, अन्न के दर्शन भी न हो पाए थे। पहाड़ी कीड़ा अब भी उसी भाँति चिपका था। अस्तु, उसके विष के कारण आपको ज्वर भी आने लगा। पास में भरा हुआ रिवाँल्वर है। चलने की शक्ति नहीं। पैसे के नाते बिलकुल सफ़ाया है। अब करें तो क्या करें? निराश हो, नलिनी किले के मैदान में एक वृक्ष के नीचे पड़ रहा।

दो दिन इसी प्रकार और बीत जाने पर प्रसङ्गवश उनका एक साथी उधर से आ निकला। विष के अधिक फ़ैल जाने से उनके अब चेचक भी निकल आई थी। साथी उनकी यह दशा देखकर रो पड़ा। घर पर उठा तो ले गया, किन्तु अब इलाज कैसे हो। नलिनी को बाहर ले जाना मौत को निमन्त्रण देना था। अस्तु, साथी ने उनके शरीर पर हल्दी मिलाकर मट्टे की मालिश करनी शुरू कर दी और छाछ ही उन्हें पीने को देने लगा।

भगवान् की लीला बड़ी विचित्र है! नलिनी इसी से चङ्गा होने लगा। और जिस दिन दोनों ने एक साथ बैठकर भोजन

किया तो उसी साथी के शब्दों में उसके आनन्द की सीमा न रही। स्वस्थ हो जाने पर दोनों फिर काम पर निकले। संयोग-वश घर से बाहर होते ही उक्त साथी गिरफ्तार हो गया।

हमारे नायक ने हावड़ा में एक मकान किराए पर लिया और उसी में तारिणी मजूमदार के साथ रहने लगे। अभी चैन से बैठने भी न पाए थे कि फिर पुलिस के घेरे में आगए। दोनों साथियों ने बाहर आकर फिर सामना करना शुरू कर दिया। कुछ देर तक दोनों ओर से गोली चलने के बाद तारिणी वीर गति को प्राप्त हुआ। नलिनी के भी गोली लग चुकी थी, किन्तु उसके अरमान अभी पूरे नहीं हुए थे। अफसर ने सामने आकर कहा—“आत्म-समर्पण कर दो” उत्तर में नलिनी के रिवॉल्वर की गोली से साहब की टोपी नीचे जा गिरी। इस बार एक घड़ाके की आवाज़ के साथ ही नलिनो भी ज़मीन पर आ गिरा।

वीर के गिरते ही उसे गिरफ्तार कर लिया गया। पास में ही घोड़ा-गाड़ी खड़ी थी, नलिनी भूमता हुआ उसी में सवार हो गया।

अस्पताल के कमरे में नलिनी एक खाट पर पड़ा है। चारों ओर पुलिस-अफसरों का जमाव है।

“नाम क्या है ? कहाँ के रहने वाले हो ? पिता क्या करते हैं ? तुम्हें मरने से पहले अन्तिम बयान (Dying Declaration) देना होगा ।” आदि बातों के कहे जाने पर वीर ने धीरे से कहा:—

“Dont, disturb me please. Let me die peacefully.”

अर्थात्—“तङ्ग न करो, कृपा कर मुझे शान्ति से मरने दो।”
Unhonoured, unsung और unwept जाने का

(१६६)

कितना ज्वलन्त उदाहरण है। जीवन भर सङ्गटों के साथ खेलकर अन्त समय भी उसकी यही इच्छा है कि कोई उसे न जाने कि वह कौन था और कैसे मर गया। अपने मूल्य को छिपाकर Unknown and unlamented ही वह जाना चाहता था। अस्तु, १५ जून, १९१८ को माँ का एक और पागल पुजारी उसकी गोद से सदा के लिए छिन गया।

श्री० ऊधमसिंह

अमृतसर ज़िले के कसैल नामक गाँव में ऊधमसिंह का जन्म हुआ था। विसव-पन्थी प्रायः जीवन के अन्तिम समय में ही संसार के सामने आते हैं। अस्तु, ऊधमसिंह के बाल्यकाल की बातें जानी न जा सकीं। केवल इतना ही पता है कि व्यवसाय के सम्बन्ध में वे अमेरिका चले गए थे और वहीं पर जब “ग़दर” अखबार द्वारा भारत के स्वाधीनता-युद्ध की घोषणा की गई तो आप भी उसी में शामिल हो गए। सन् १९१४ में महा-युद्ध के छिड़ते ही अमेरिका-निवासी भारतीयों ने देश को वापस आना शुरू कर दिया। एक दिन अमेरिका के आने वाले एक जहाज़ के भारतीय तट पर लगते ही उसके ३५० भारतीय यात्रियों में से सत्र के सब गिरफ्तार कर लिए गए। भारत में जन्म लेकर वहीं के अन्न जल से पले हुए इन कतिपय भारतीयों को अपने ही देश की स्वच्छन्द जलवायु से वञ्चित कर, सरकार ने पञ्जाब की विभिन्न जेलों में घुट-घुट कर प्राण देने के लिए बन्द कर दिया। इन ३५० यात्रियों में हमारे नायक ऊधमसिंह भी थे।

सन् १९१५ के अप्रैल मास में पञ्जाब में विराट विसवायोजन के विफल हो जाने पर लाहौर-प्रथम षड्यन्त्र के नाम से अभियोग चलाया गया। आखिर न्याय ही तो ठहरा। जो ऊधमसिंह

(१६७)

भारत की भूमि पर पैर रखने के पहले ही गिरफ्तार कर लिए गए थे, उन्हें भी इस मामले में घसीट कर लाया गया। अदालत से आजन्म कालेपानी का दण्ड मिलने पर कुछ साल तक अन्दमान-जेल में रखने के बाद, १९२१ के अन्त में आप को मद्रास की वेलारी-जेल लाया गया। पञ्जाब के अन्य राजनैतिक कैंदियों से अलग एक दूसरे अहाते की मुन्सान कोठरी में अकेले रहकर ऊधमसिंह जीवन के दिन बिता रहे थे कि एक दिन जब प्रातःकाल अधिकारियों ने आकर उनकी कोठरी में देखा तो ऊधमसिंह गायब थे। चारों ओर खोज-खबर होने लगी, किन्तु बहुत कुछ दौड़-धूप के बाद भी न तो किसी को ऊधमसिंह ही का पता लगा और न कोई यह समझ सका कि कोठरी का ताला ज्यों का त्यों बन्द रहने पर भी वे पुलिस की कड़ी निगरानी से कब, कैसे और किधर से निकल गए।

ऊधमसिंह जेल से निकलकर काबुल पहुँचे, किन्तु किसी कवि के कथनानुसार 'बुरी होती है लौ लगी दिल की' अस्तु, उन्हें वहाँ चैन न आया और वे फिर भारत आ गए और कुछ दिन काम करने के बाद फिर वापस चले गए। इधर पुलिस को भी आपके बिना चैन न था। ज़ोरों के साथ तलाश होने लगी और नोटिस भी निकाला गया। कई बार मौत के मुँह में आकर सकुशल निकल जाने के बाद एक दिन जब आप फिर भारत आ रहे थे, तो सरहद पर उन्हें गोली मार दी गई और वे फिर देश को वापस न आ सके। गोली किसने मारी, यह आज तक एक राज की बात है।

पं० गेंदालाल दीक्षित

तीस नवम्बर, सन् १८८८ ई० को आगरा जिले की "बाह" बहसील के "मई" ग्राम में पं० गेंदालाल का जन्म हुआ। अभी

आप तीन ही वर्ष के थे कि आपकी माता का देहान्त हो गया । आपके पिता का नाम पं० भोलानाथ जी दीक्षित है । हिन्दी मिडिल पास करने के बाद कुछ दिनों तक आप इटावे के हाई स्कूल में पढ़ते रहे । फिर आगरा चले गए और वहीं से मैट्रिकुलेशन पास किया । इच्छा होते हुए भी आप और आगे न पढ़ सके और औरैया में डी० ए० बी० पाठशाला के अध्यापक हो गए ।

बङ्ग-भङ्ग के दिन थे । स्वदेशी-आन्दोलन चल रहा था । आप लोकमान्य तिलक के भक्त तो थे ही, इधर महाराष्ट्र में भी शिवाजी के उत्सव मनाने का आन्दोलन चल खड़ा हुआ । समय की लहर से प्रभावित होकर हमारे नायक ने भी “शिवाजी-समिति” नाम की एक संस्था स्थापित की । इसका उद्देश्य नव-युवकों में स्वदेश के प्रति प्रेम तथा भक्ति के भाव उत्पन्न करना था । कुछ दिनों तक तो पुस्तकों तथा समाचार-पत्रों द्वारा ही प्रचार-कार्य होता रहा, किन्तु बाद में बङ्गाली युवकों को प्राणों की किञ्चन्मात्र भी चिन्ता न करते हुए, बम् तथा रिवाल्वर का प्रयोग करते देख पं० गेंदालाल ने भी उसी नीति के अनुसरण करने का निश्चय किया । बाद में उस नीति के अनुसार कार्य करने के लिए उपयुक्त साधन न मिल सके, अतएव आपने शिवाजी के मार्ग का अनुसरण करने का निश्चय किया ।

कार्य आरम्भ करने पर आपको य० पी० के शिक्षित समुदाय से बड़ी निराशा हुई । किस की आशाओं पर कार्य आरम्भ होगा, यही चिन्ता उन्हें दिन-रात घेरे रहती थी । बहुत कुछ विचार करने पर ध्यान आया कि देश में एक ऐसा भी दल है जिसमें अब भी वीरता के कुछ चिन्ह पाए जाते हैं । पाठक डरें नहीं, यह डाकुओं का दल था । इन लोगों के पास बहुधा अच्छे-अच्छे अस्त्र-शस्त्र भी होते हैं । देश का सभ्य समाज इन लोगों से इसलिए घृणा करता था कि ये लोग जीवन-निर्वाह तथा

दुरेच्छापूर्ति के लिए ही डाके डालते तथा चोरी करते हैं। जो हो, पं० गेंदालाल जी ने इन्हीं लोगों के सङ्गठित करने का निश्चय किया। उनका विचार था कि इन लोगों का संग्रह कर अमीरों को लूटकर धन एकत्रित किया जाय, जिसके द्वारा शिक्षा का प्रचार हो और उस दल के लोगों को भी सदाचार की शिक्षा दी जावे ताकि वे गरोब तथा निर्बलों पर अत्याचार न कर सकें और इसी प्रकार धन एकत्रित कर अस्त्र-शस्त्र का संग्रह कर गवर्नमेण्ट को भयभीत करते रहें।

कुछ दिनों तक इसी प्रकार कार्य होता रहा। समिति के बहुत से सदस्य बन गए, किन्तु वे सब अशिक्षित थे। पण्डित जी को इससे कुछ शान्ति न मिली। आप कुछ अध्ययन करने के लिए बम्बई गए। वहाँ से लौटने पर आपको कुछ ऐसे युवक मिले जिनसे आपको आशा बंधी कि संयुक्त प्रान्त में भी बङ्गाल की भांति राजद्रोही समिति की नींव डाली जा सकती है। आप बहुत से नवयुवकों से मिले। उन्हें अस्त्र-शस्त्र दे उनका प्रयोग भी सिखाया। इन्हीं दिनों पण्डित जी की एक युवक से भेंट हुई। आप भी पुलिस के अत्याचारों से व्यथित होकर घर से निकल पड़े थे। आपने एक प्रसिद्ध धनुर्धर से शिक्षा प्राप्त की थी। इनके मिलने से समिति कार्य जोरों से चलने लगा। इन महाशय का नाम सुविधा के लिए हम “ब्रह्मचारी जी” धरे देते हैं। इन्होंने चम्बल तथा यमुना के बीहड़ों में रहने वाले डाकुओं का सङ्गठन किया और ग्वालियर-राज्य में निवास करने लगे। थोड़े ही दिनों में इनके पास एक बहुत बड़ा दल हो गया और धन भी खूब एकत्रित किया गया।

इसी बीच गेंदालाल जी ने भी अपने कार्य को कुछ-कुछ विस्तार दिया। बहुत से शिक्षित युवक भी दल में सम्मिलित हो चुके थे। कुछ कार्य भी किया गया। किन्तु धन की कमी ने

बाधा उपस्थित करदी। ब्रह्मचारी जी का दल बहुत सा धन एकत्रित कर चुका था। अस्तु, पण्डित जी ने उनसे मिलकर धन लाने का निश्चय किया। इस निश्चय के पूर्व ही “मातृवेदी” नामक संस्था का संगठन किया जा चुका था। यही संस्था आगे चलकर मैन-पुरी-षड्यन्त्र के नाम से प्रसिद्ध हुई। उक्त संस्था के कार्यकर्त्ता भी चुने जा चुके थे।

मातृवेदी का सङ्गठन करने के बाद आप ब्रह्मचारी जी से मिलने ग्वालियर गए। उस समय ब्रह्मचारी जी के दल को गिरफ्तार करने के पूरे प्रयत्न हो रहे थे। दल के एक व्यक्ति हिन्दूसिंह को प्रलोभन दिया गया कि यदि वह किसी भांति इस दल को गिरफ्तार करा दे तो उसे राज्य की ओर से इनाम भी मिलेगा और जायदाद भी दी जावेगी। वह राजी हो गया और दल को पकड़वाने का षड्यन्त्र रचा गया।

डाका डालने का एक स्थान निश्चय किया गया। निवास-स्थान से जगह इतनी दूरी पर थी कि पहुँचने में दो दिन लगें और एक पड़ाव जङ्गल में देना पड़े। उस समय दल में केवल ८० मनुष्य थे। जब एक रात चलकर सब थक गए और भूख भी लगी तो राज्य के भेदिए ने ले जाकर सबको एक निश्चित जङ्गल में ठहरा दिया और स्वयं अपने किसी सम्बन्धी के यहां से भोजन लेने गया। सब मामान पहले ही से ठीक था थोड़ी देर में गर्मा गरम पूड़ियाँ आ गईं। आज कुछ होना ही ऐसा था कि जो ब्रह्मचारी जी कभी किसी के यहां का भोजन न करते थे, उन्होंने भी विश्वासघाती के आग्रह करने पर पूड़ियाँ ले लीं। खाते ही जबान ऐंठने लगी। उसी समय विश्वासघाती पानी लेने के बहाने वहाँ से चल दिया। पूड़ियों में इतना जहर मिला था कि पेट में पहुँचते ही अपना असर दिखाया। ब्रह्मचारी जी सब को पूड़ियाँ न खाने का आदेश कर विश्वासघाती पर गोली चलाई,

किन्तु विष की हलाहलता के कारण निशाना खाली गया। बन्दूक की आवाज होते ही अन्य साथी संभल भी न पाए थे कि चारों ओर से सैकड़ों बन्दूकों की आवाजें सुनाई दीं। जङ्गल में ५०० सवार छिपे खड़े थे। दोनों ओर से खूब गोली चली जबतक इन लोगों में कुछ भी होश रहा, बराबर गोली चलाते रहे। ब्रह्मचारी जी के यों तो हाथ-पैरों में कई गोलियाँ लग चुकी थीं, किन्तु अन्त में एक गोली से हाथ बिलकुल घायल हो गया और बन्दूक हाथ से गिर गई। पं० गेंदालाल के भी कई एक छरें लगे थे। एक छरा उनकी बाईं आंख में लगा, जिसके कारण वह आंख जाती रही। उस समय दल के लगभग ३५ मनुष्य खेत रहे।

पं० गेंदालाल जी, ब्रह्मचारी जी तथा उनके अन्य साथी पकड़कर ग्वालियर के किले में बन्द किए गए। गिरफ्तारी का समाचार सुनकर “मातृदेवी” के कुछ सदस्य किले में जाकर महल देखने के बहाने से परिडत जी से मिले। सब हाल जानकर निश्चय किया गया कि जैसे भी हो, परिडत जी को छुड़ाया जाय। नेता की गिरफ्तारी से शिक्षित युवकों के हृदयों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वे दूने उत्साह से काम करने लगे। कार्य ने अच्छा विस्तार पाया। शक्ति का भी संगठन हो गया था, किन्तु कई असावधानियों के कारण मामला खुल गया और गिरफ्तारियाँ शुरू हो गईं। मामला बहुत बढ़ गया और मैनपुरी षड्यन्त्र के नाम से कोर्ट में अभियोग चला।

सरकारी गवाह सोमदेव ने पं० गेंदालाल को इस षड्यन्त्र का नेता बताते हुए ग्वालियर में उनके गिरफ्तार होने का हाल कह सुनाया। अस्तु, आप ग्वालियर से मैनपुरी लाए गए। किले में बन्द रहने तथा अच्छा भोजन न मिलने के कारण आपका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया था। आप इतने दुर्बल हो गए थे कि स्टेशन से मैनपुरी-जेल तक जाने में (केवल एक मील में) आठ

जगह बैठना पड़ा। आपको तपेदिक का रोग हो गया था। जेल पहुँचकर आपको सारा हाल मालूम पड़ा।

आपने पुलिस वालों से कहा कि तुम लोगों ने इन बच्चों को क्यों गिरफ्तार किया है। बङ्गाल तथा बम्बई के विद्रोहियों में से बहुतों के साथ मेरा सम्बन्ध है। मैं बहुतों को गिरफ्तार करवा सकता हूँ, इत्यादि। दिखावे के लिए दो-चार नाम भी बता दिए। पुलिस वालों को निश्चय हो गया कि क्लिरे के कष्टों के कारण यह सारा हाल खोल देगा। अब क्या था, पण्डितजी सरकारी गवाह समझे जाने लगे। उन्हें जेल से निकाल कर सरकारी गवाहों के साथ रख दिया गया। आधी रात के समय जब पहरा बदला गया तो कमरे में अँधेरा था। लालटेन जलाने पर मालूम पड़ा कि पं० गेंदालाल एक और सरकारी गवाह रामनारायण के साथ गायब हैं। बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी कुछ फल न हुआ और उनमें से कोई भी बाद को पुलिस के हाथ न आया।

पं० गेंदालाल रामनारायण के साथ भागकर कोटा पहुँचे। वहाँ आपके एक सम्बन्धी थे, उन्होंने आपकी बड़ी सहायता की। किन्तु आपकी वहाँ भी बड़ी तलाश हो रही थी, अतएव उस जगह अधिक दिन न ठहर सके। कोटा से विदा होने के पूर्व एक विशेष घटना और घटी। रामनारायण का मस्तिष्क फिर बिगड़ गया। उसके दिल में जाने क्या आई कि पण्डित जी के भाई ने जो रुपए तथा कपड़े दिए थे उन्हें ले, कुछ बहाना बता, आपको एक कोठरी में बन्द कर भाग गया। पण्डित जी उस कोठरी में तीन दिन तक बन्द रहे। रोग का जोर, निर्बलता, फिर एक कोठरी में तीन दिन तक बिना अन्न-जल बन्द रहना, यह पण्डित जी का ही साहस था। अन्त में व्यथित हो, किसी से कोठरी की जखीर खुलवाई और पैदल ही वहाँ से चल दिए।

जो व्यक्ति एक मील चलने में आठ बार बैठा हो, वह किस प्रकार इस अवस्था में पैदल सफर कर सकता है ? एक पैसा भी पास न था, किन्तु फिर भी जैसे-तैसे आगरा पहुंचे । आगरा में दो-एक मित्रों ने कुछ सहायता दी । उस समय पण्डित जी की हालत बहुत खराब हो रही थी । रोग ने साक्षात्क रूप धारण कर लिया था । कोई भी ऐसा न था, जिसके यहां एक दिन भी ठहर सकते । सब मित्रों पर आपत्ति आई हुई थी । अस्तु—

कहीं भी ठहरने का स्थान न मिलने पर विवश हो, आप घर चले गए । घर वालों को पुलिस ने बुरी तरह सता रक्खा था । आपको देखकर सब बड़े भयभीत हुए । सोचा, पुलिस को बुलाकर आपको गिरफ्तार करा दिया जाय । इस पर आपने अपने पिता को बहुत कुछ समझाया और कहा—“आप घबराइए नहीं, मैं बहुत शीघ्र आपके यहां से चला जाऊंगा ।” अंत में दो-तीन दिन बाद आपको घर त्यागना पड़ा । उस समय आपको दस कदम चलने पर भी मूर्च्छा आ जाती थी । आपने दिल्ली जाकर जीवन निर्वाह के लिए एक प्याऊ पर नौकरी कर ली । स्वास्थ्य दिनोंदिन बिगड़ रहा था । अस्तु, अपनी अवस्था का परिचय देते हुए आपने अपने एक निकट आत्मीय को पत्र लिखा पत्र पाते ही वह सज्जन आपकी पत्नी को साथ लेकर देहली आ गए ।

बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी अवस्था दिनोंदिन खराब होती गई और आपको घड़ी-घड़ी पर मूर्च्छा आने लगी । आपकी स्त्री फूट-फूट कर रोने लगी । उस समय का हृदय-विदारक दृश्य आपके आत्मीय से न देखा गया । वह चुपचाप बाहर आकर रोने लगा । पण्डित जी को जब होश आया तो आपने आत्मीय को सान्त्वना देते हुए कहा—“तुम रोते क्यों हो ?

देश की सेवा में मेरा यह हाल हुआ है। दुखिया भारत की सेवा में मेरा यह हाल हुआ है दुखिया भारत की स्थिति देखकर मेरी यह अवस्था हो गई है। तुम लोग दुख मत करो। यदि देश-सेवा हेतु मेरे प्राण चले गये तो मैंने अपना कर्तव्य पालन किया। यदि तुम लोग भी इस कार्य में सहायता करोगे तो मेरी आत्मा को शांति मिलेगी।” फिर पत्नी को सम्बोधन कर पूछा—तुम क्यों रोती हो ?

पत्नी ने रोते हुए उत्तर दिया—मेरा इस संसार में कौन है ? पण्डित जी एक ठण्डी साँस ले, मुस्कराकर कहने लगे—आज लाखों विधवाओं का कौन है ? लाखों अनाथों का कौन है ? २२ करोड़ भूखे किसानों का कौन है ? दासता की बेड़ियों में जकड़ी हुई भारत-माता का कौन है ? जो इन सबका मालिक है, वही तुम्हारा भी। तुम अपने आप को परम सौभाग्यवती समझना, यदि मेरे प्राण इसी प्रकार देश-प्रेम की लगन में निकल जावें और मैं शत्रुओं के हाथ न आऊँ। मुझे दुख है तो केवल इतना ही कि मैं अत्याचारियों को अत्याचार का बदला न दे सका, मन की मन में ही रह गई। मेरा यह शरीर नष्ट हो जायगा, किन्तु मेरी आत्मा इन्हीं भावों को लेकर फिर दूसरा शरीर धारण करेगी। अब की बार नवीन शक्तियों के साथ जन्म ले, शत्रुओं का नाश करूँगा।” उस समय उनके मुख पर एक दिव्य ज्योति का प्रकाश-सा छा गया था। आप फिर कहने लगे—रहा खाने-पीने का, सो तुम्हारे पिता जीवित हैं। तुम्हारे भाई हैं, मेरे कुटुम्बी हैं; और फिर मेरे मित्र हैं जो तुम्हें अपनी माता समझ, तुम्हारा आदर करेंगे। तुम किसी बात की चिन्ता न करो। मुझे केवल यही दुख है कि अन्तिम समय किसी मित्र से न मिल सका।”

इसके बाद आपको फिर बेहोशी आ गई। अवस्था भयंकर

हो गई थी। आत्मीय ने सोचा, यदि यहीं पर प्राण निकल गये तो मृतक संस्कार करना भी कठिन हो जायगा। और यदि पुलिस को पता चल गया तो और भी विपत्ति आएगी। अस्तु, उन्हें सरकारी अस्पताल में भरती करा, उनकी स्त्री को यथास्थान पहुँचा आये। जब लौटकर आए तो देखा, पण्डित जी चुपचाप बिस्तर पर पड़े थे। अब पं० गेंदालाल दीक्षित इस संसार में नहीं थे, केवल उनका शरीर पड़ा था। उस समय दिन के दो बजे थे और दिसम्बर, सन् १९२० की २१ वीं तारीख थी।

जिस देश के लिये सर्वस्व त्यागा, सारे कष्ट सहे, और अन्त में प्राण तक दे दिये, उस देश में किसी ने यह न जाना कि पण्डित गेंदालाल कहाँ विलीन हो गये ! किन्तु जब स्वतन्त्र भारत वर्ष का इतिहास लिखा जायगा, उस समय देशवासियों को आप की याद आएगी, और आपका नाम स्वर्णद्वारों में लिखा जायगा।

श्री० खुशीराम

सन् १९१६ का वर्ष भी भारत के इतिहास में अमर रहेगा। युद्ध के पुरस्कार में रोलट ऐक्ट पाने पर देश में एक विराट् आन्दोलन उठ खड़ा हुआ, जिसके परिणाम में जलियान-वाला और मार्शल लॉ तक की नौबत आ गई। उस समय लोग बहुत त्रस्त हो उठे थे। एकाएक ऐसी कठोरता उन पर होगी, यह वे न जानते थे। परन्तु उस त्रस्त समय में भी हमारे नायक श्री० खुशीराम जी जैसे वीर अपनी जान पर खेलकर अपना नाम अमर कर गए।

आप एक निर्धन परिवार में २७ श्रावण, सम्बत् १९५७ में पैदा हुए थे। पिता का नाम लाला भगवान दास था। जाति के अरोड़ा थे। जन्म के थोड़े ही दिनों बाद पिता का देहान्त हो

गया था। आपका जन्म-स्थान पिण्डी-सैदपुर, जिला मेलम था। पिता की मृत्यु के बाद लाहौर नवाकोट के अनाथालय में आपका पालन-पोषण हुआ। आपका शरीर बहुत सुन्दर तथा सुदृढ़ था। बहुत शक्तिशाली थे। जन्म पर जन्म-पत्री लिखने वाले पण्डित ने कहा था, यह बालक हाथी की तरह बलवान होगा और इसका नाम अमर हो जायगा। उस समय आपका नाम भीमसेन रक्खा गया था, परन्तु बाद में “खुशीराम” नाम से ही वे प्रसिद्ध हुए।

आप डी० ए० बी० कॉलेज, लाहौर के विद्यार्थी थे। १९१६ में १६ वर्ष की आयु में शास्त्री की परीक्षा देकर छुट्टियों का उपभोग करने जम्बू चले गये थे। इधर ३० मार्च के बाद ६ अप्रैल को समस्त भारत में हड़ताल की बात थी। अस्तु, आप उधर न ठहर, तुरन्त लाहौर आगए और कॉलेज-विद्यार्थियों के जुलूसों का नेतृत्व अपने हाथ में ले लिया।

१२ अप्रैल को लाहौर की बादशाही मस्जिद में एक विराट् सभा हुई। असंख्य लोगों का जमाव था, व्याख्यान हुए और खूब जोश बढ़ा। सभा विसर्जित हुई और लोग शहर की ओर जुलूस की शक्त में चल दिए। फण्डा हमारे नायक के हाथ में था। कोई एक फ्लाङ्क के अन्तर पर ही हीरामण्डी बाजार है। यहीं से वे नगर में घुसना चाहते थे। आगे फौज खड़ी थी। उस समय सेना की अध्यक्षता नवाब मोहम्मदअली (बरकतअली) के हाथ में थी। आज्ञा हुई, सब लोग बिखर जाओ। जुलूस न निकलने दिया जायगा। जुलूस के नेता श्री खुशीराम ने कहा—“जुलूस निकलेगा और जरूर निकलेगा; और जायगा भी इसी मार्ग से।” नवाब ने आकाश में गोली चलवाई। लोग डर के मारे इधर-उधर भागने लगे, तब सिंह की तरह गरजकर खुशीराम ने कहा, “भागकर खाहमखाह कायर क्यों बनते हो ?

मरना तो एक ही दिन है, फिर वीरों की तरह क्यों न मरो । बड़ी लज्जा की बात है कि आज गीदड़ों की तरह भागकर जान बचाने की फिक्र में उठते-पड़ते भाग रहे हो । तुम को शर्म आनी चादि। आदि-आदि ।” लोग रुक गए । नवाब ने फिर कहा—“जुलूस मुन्तशिर कर दो !” खुशीराम उसी तरह गरज कर बोले—‘न, यह न होगा । हमारा जुलूस इसी तरह चलेगा ।’ वे आगे बढ़े और उधर से गोली चली । अब की गोली हवा में न गई । सीधी खुशीराम की छाती में आ रही । एक गोली लगी, खुशीराम दो कदम आगे बढ़े । एक और लगी, वे और आगे बढ़े । इस तरह एक-एक करके सात गोलियाँ छाती में समा गईं परन्तु वह वीर उसी तरह आगे बढ़ता चला गया । आठवीं गोली माथे में दाईं ओर और नवीं बाईं ओर लगी । अब संभलना मुश्किल हो गया और वे अनन्त निद्रा में सो गए और फिर न उठे ।

उस दिन उनके शव के साथ लोगों का समुद्र ही उमड़ आया था । तत्कालीन समाचार-पत्रों की रिपोर्ट थी कि उन लोगों की संख्या पचास हजार से भी अधिक थी ।

खुशीराम अमरत्व प्राप्त कर गए, वे आज इस संसार में नहीं हैं, परन्तु उनका नाम, कार्य और साहस आज भी जीवित है ।

श्री० गोपीमोहन साहा

तरुण तपस्वी आ, तेरा,
कुटिया में नव स्वागत होगा ।
दोषी, तेरे चरणों पर—
फिर मेरा मस्तक नत होगा ॥

सब प्रकार के उपायों में असफल हो जाने पर क्रांतिकारी दल को छिन्न-भिन्न करने के लिए बङ्गाल-सरकार ने ऑर्डिनेन्स की शरण ली थी। मनमानी गिरफ्तारियाँ होने लगीं। जिसको चाहा पकड़ कर अनिश्चित समय के लिए जेल में फेंक दिया। न कोई सुबूत की आवश्यकता थी और न अदालत में जज के सामने लाने का कोई काम था। इतना ही नहीं, जेल में बेचारे निरपराध युवकों पर अत्याचारों की भी कमी न थी। कहीं-कहीं पर एक प्रकार से हद्द ही कर दी गई। उन दिनों बङ्गाल में मि० टेगार्ट का ही राज्य था। अस्तु, वे लोगों की आँखों में काँटे की भाँति खटकने लगे।

क्रांतिकारी दल प्रायः मृतप्राय-सा हो चुका था। एक-एक कर सभी कार्यकर्त्ता पकड़े जा चुके थे। चारों ओर से यही सुनाई पड़ने लगा कि क्रांतिकारी दल समाप्त हो गया। किन्तु उस दिन एक बालक को अङ्गरेज की हत्या करने के बाद वीरता पूर्वक अदालत में अपना अपराध स्वीकार करते देख, सारा देश आश्चर्य से चौंक पड़ा। लोगों ने उसकी ओर श्रद्धा-भरी निगाह से देखा। किसी ने कहा वह मस्त था, दीवाना था; किसी ने कहा देश-प्रेम की लगन थी और उसके हृदय में थी प्रतिहिंसा की आग। एक ने उसे हत्यारा, घातक और पापी के नाम से सम्बोधित किया तो दूसरे ने उसके काम में निस्वार्थ देश-सेवा की मल्लक देखी। किन्तु उस पागल ने फाँसी के तख्ते पर खड़े होकर बड़ी शान से, उच्च स्वर में केवल इतना ही कहा कि—
“मैं तो टेगार्ट को मारने आया था। निर्दोष डे साहब के मारे जाने का मुझे हृदय से दुख है।”

विद्यार्थी जीवन में ही गोपीमोहन क्रांतिकारी दल के सदस्य बन गये थे। मि० टेगार्ट के पिछले कारनामे तथा उस समय के



श्री० खुशीराम



श्री० बलवन्तसिंह

किये गये अत्याचारों से उसके हृदय में प्रतिहिंसा की आग सुलग उठी। धीरे-धीरे जसका स्वभाव भी बदलने लगा। जो मोहन, मोहन बनकर पहले सबको हँसाया करता था, उसने अब मानो एकदम मौन-व्रत धारण कर लिया। उसकी चञ्चलता गम्भीरता में परिणत हो गई। अब वह एकान्त में बैठकर न जाने घंटों तक क्या सोचा करता था।

देखने वाले बतलाते हैं कि कुछ दिनों बाद उसकी अशांति इतनी बढ़ गई कि वह बात करते-करते टेगार्ट का नाम लेकर चिल्ला पड़ने लगा। एक दिन तो रात में सोते-सोते टेगार्ट को ललकार कर उठ बैठा। उसके बाद वह एक प्रकार से पागल सा हो गया। सोते-जागते हर समय उसे टेगार्ट का ही ध्यान रहने लगा।

मन ही मन न जाने क्या निश्चित कर, एक दिन वह टेगार्ट के बँगले के सामने जाकर घूमने लगा। कुछ देर बाद उस बँगले से एक अङ्गरेज महोदय के बाहर निकलते ही पिस्तौल की आवाज आई और वे महाशय ज़मीन पर आ गिरे। क्रोध के आवेश में बालक ने पिस्तौल की सभी गोलियाँ एक-एक कर इन्हीं पर समाप्त कर दीं। किन्तु यह क्या? यह तो टेगार्ट नहीं हैं। मोहन ने पिस्तौल ज़मीन पर पटक दी और पुलिस ने बढ़कर उसे ज़ब्जियों से जकड़ लिया।

अभियोग चलने पर उसने सब बातें मान लीं। अस्तु, × × × की हत्या के अपराध में उसे फाँसी की सजा हुई। उस समय मोहन के भोले मुख पर अहङ्कार-मिश्रित गर्व की जो एक रेखा दिखलाई पड़ी थी वह उसी प्रकार के कुछेक मनुष्यों में ही देखने को मिलती है।

गोपीमोहन को गए आज पाँच वर्ष हो गए, इसी प्रकार और भी कितने ही वर्ष बीत जायँगे। इस समय भारत उनके पार्थिव शरीर को भले ही भुला दे, किन्तु उनके उस भयानक कार्य के पीछे जो महान् आदर्श छिपा था उसे भुलाने का सामर्थ्य उसमें कभी भी न हो सकेगा।

बोमेली-युद्ध के चार शहीद

प्रसिद्ध बबर अकाली-आन्दोलन के, मौत के साथ खिल-वाड़ करने वाले अनेक नर-रत्नों में से श्री० कर्मसिंह जी, श्री० उदयसिंह जी, श्री० विशनसिंह जी और श्री० महेन्द्र-सिंह जी भी हैं। कार्यक्षेत्र में पैर बढ़ाने के वाद इन्होंने फिर कभी पीछे फिरकर देखने की इच्छा तक नहीं की। प्यारे देश को ठोकरोँ पर ठोकरोँ लगते देख, वे अपने आपको सँभाल न सके। कैनेडा में भारतीयों के प्रति किए गए अत्याचार, कामा-गाटा मारू की घटना, बजबज का हत्याकाण्ड, जलियान-वाला का हृदय-विदारक दृश्य, मार्शल लॉ और गुरु के बाग में निहत्थों पर डण्डेबाजी आदि बातें वे और अधिक सहार न सके। उस समय परतन्त्रता-पाश को तोड़-फेंकने के लिए अधीर होकर उन्होंने जिस मार्ग का अनुसरण किया था, प्रस्तुत कहानी उसी का एक प्रतिबिम्ब-मात्र है।

उपरोक्त चार वीरों में से श्री० कर्मसिंह दौलतपुर के, उदय-सिंह रामगढ़ भुगियाँ के, विशनसिंह मङ्गत के और महेन्द्रसिंह पिण्डोरी गङ्गासिंह के रहने वाले थे। जिस समय किशनसिंह गर्गड़ ने बबर अकाली आन्दोलन की नींव डाली, तो इन चारों ने ही शान्तिमय असहयोग आन्दोलन को छोड़, उसमें भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। बहादुरी में चारों ही एक-दूसरे

से बढ़कर थे और ये लोग सदैव ही कठिन तथा मुश्किल काम को ही पसन्द करते थे। कुछ दिनों के बाद कर्मसिंह तथा उदय-सिंह मुख्य कार्यकर्त्ताओं में गिने जाने लगे।

अकाली-मत की दीक्षा लेने के बाद कर्मसिंह जी ने गाँव-गाँव घूमकर व्याख्यान देना प्रारम्भ किए। आप दीवानों में जाकर लोगों को समझाते कि हम पर आए-दिन जो भी अत्वा-चार ढाए जा रहे हैं, उन सब का मूल कारण हमारी अपनी ही कमजोरी है और जब तक हम अपने पैरों खड़े होकर गुलामी को दूर नहीं करते, तब तक इसी भाँति ठोकरें खाते रहेंगे, इत्यादि। कुछ ही दिन काम कर पाए थे कि गिरफ्तारी के सामान होने लगे। वारण्ट निकलने पर आप फ़रार हो गए और कार्य करते रहने पर भी अन्त समय तक पुलिस के हाथ न आए।

कर्मसिंह निरे सिपाही हों, सो बात न थी, वे एक अच्छे वक्ता थे और गाना भी जानते थे। “बबर अकाली” नामक पत्र का सम्पादन भी इन्हीं के द्वारा होता था। एक मस्त प्रेमी की भाँति उन्हें यदि किसी बात की चिन्ता थी, तो अपने काम की। वे रात-दिन काम कर के भी थकते न थे। आज किसी दीवान में व्याख्यान दिया जा रहा है, तो कल विश्वासघाती को दण्ड देने का विधान हो रहा है और परसों रुपया लेकर हथियार खरीदने के लिए कहीं दूर जाने की तैयारी हो रही है !

इधर पुलिस भी आपके लिए बहुत बेचैन थी। जगह-जगह पर पुलिस के आदमी तैनात किए गए, इनाम भी बढ़ा गया, मगर वे फिर भी हाथ न आए।

उदयसिंह जी से आपका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था। अधिकतर वे दोनों एक ही साथ रहा करते थे। फ़रार भी दोनों साथ

ही साथ हुए थे और अन्तिम समय में भी दोनों ने साथ ही साथ लड़कर प्राण दिए। प्रेम तथा मैत्री का कैसा ज्वलन्त उदाहरण है ?

पुलिस को बबर अकालियों के सम्बन्ध में भेद देने के अपराध में उदयसिंह ने १४ फरवरी १९२३ को हैयतपुर के दीवान को मार दिया। आपका कहना था कि मैं दुश्मन को छोड़ सकता हूँ, किन्तु घर के भेदिए को नहीं छोड़ सकता। इसके बाद २७ मार्च, सन् १९२३ को उसी अपराध में आप दोनों साथियों ने कुछ और साथियों को लेकर बड़बलपुर के हजारासिंह का वध किया। इसके अतिरिक्त और भी कई-एक देश-द्रोहियों को उनके अपराध का दण्ड इन लोगों ने दिया था। दण्ड का विधान केवल मौत ही न था। अपराध कम होने पर उसकी सम्पत्ति लेकर या नाक-कान काटकर भी छोड़ दिया जाता था।

एक दिन जब ये चारों वीर कपूरथला-राज्य के बोमेली गाँव के पास से होकर जा रहे थे, तो किसी भेदिए ने पुलिस-सुपरिन्टेण्डेण्ट मिस्टर स्मिथ को इस बात का पता दे दिया। बस, उसी क्षण फ़ौज के कुछ पैदल सिपाही और कुछ सवार लेकर उन्होंने इनका पीछा किया। एडिशनल-पुलिस के सव-इन्स्पेक्टर फ़तेह खाँ को भी पचास आदमी लेकर दूसरी ओर से भेजा गया। मि० स्मिथ को पीछा करते देख, इन लोगों ने चौंता साहब के गुरुद्वारे में, जो पास ही में था, पनाह लेने का निश्चय किया। किन्तु पीछे से गोली चल रही थी, अतः ये लोग शत्रुओं का मुकाबला करते हुए गुरुद्वारे की ओर हटने लगे। अभी तक फ़तेह खाँ के आदमी एक ओर छिपे खड़े थे, किन्तु गोली चलने की आवाज सुनकर वे लोग भी बाहर आ

गए। गुरुद्वारे के चारों ओर एक नाला था, ये चारों वीर स्मिथ की सशस्त्र सेना का वीरतापूर्वक सामना करते हुए इस नाले के पास पहुँच गए और पानी में घुसे ही थे कि पीछे से कुछ दूर पर खड़े हुए फतेह खाँ के आदमियों ने भी गोली बरसानी शुरू कर दी। एक ओर तो अस्त्र-शस्त्र से सजी हुई फौज और दूसरी ओर चार आदमी—और वे भी दो सेनाओं के बीच में ! भला वे कब तक सामना कर सकते थे। अस्तु, कुछ देर इसी प्रकार सामना करने के बाद उदयसिंह और महेन्द्रसिंह गोली खाकर पानी में ही गिर गए।

कर्मसिंह किसी भाँति नाले को पार कर गए और दूसरे किनारे से रान तक पानी में खड़े होकर शत्रुओं पर गोली चलाने लगे। फतेह खाँ ने दूसरे किनारे से पुकारकर कहा—“आत्म-समर्पण कर दो !” परन्तु उस वीर ने तो मरने और मारने की शपथ खाई थी। उसने ‘न’ कहते हुए फतेह खाँ पर गोली चलाई। दुर्भाग्यवश निशाना खाली गया और दूसरे क्षण वह वीर भी मत्थे पर गोली खाकर सदैव के लिए उसी पानी में गिर गया।

जिस समय कर्मसिंह ने नाले की दूसरी ओर से सेना के सभी लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रक्खा था, उस समय विशनसिंह जी, जो अभी नाले के इसी किनारे पर थे, अवसर पाकर पास की नरकुल की झाड़ी में छिप गए। नरकुल के हिलने पर सन्देह हो गया और दो आदमी वहाँ देखने के लिए भेजे गए। उनके पास आते ही ‘सत् श्री अकाल’ के नाद के साथ ही विशनसिंह ने उन पर हमला कर दिया और तलवार के पहले ही हाथ में एक को बुरी तरह घायल कर दिया। दूसरे के कुछ दूर हट जाने पर जब आप नाले को पार

करने का प्रयत्न कर रहे थे, तो उस दूसरे सिपाही ने उन पर गोली चला दी और इस प्रकार आप भी अपने तीन और साथियों की भाँति उसी नाले में गिर गए।

यह घटना पहली सितम्बर सन् १९२३ की है।

श्री० धन्नासिंह

पञ्जाब के बड़वलपुर नामक एक गाँव में उनका बाल्य-काल बीता था। वे शरीर से बहुत बलिष्ठ तथा सुन्दर थे। साहस तथा उत्साह तो उनकी नस-नस में भरा था और भय स्वयं उनसे भय खाता था। गुरु के बाग में अकालियों पर किए गए अत्याचारों को देखकर आप शान्तिमय आन्दोलन के विरोधी हो गए। इन्हीं दिनों आप ही जैसे विचार वाले कुछ और उन्मत्त वीर भी देश को परतन्त्रता-पाश से छुड़ाने की उधेड़-बुन में किसी दूसरे मार्ग की आयोजना कर रहे थे। बस, बबर अकाली-आन्दोलन की नींव पड़ी और आपने भी उसी में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया।

प्रचार-कार्य तथा संगठन के साथ ही विश्वासघातियों को दण्ड देने में भी आपने कुछ कम भाग नहीं लिया। पुलिस के साथ मिलकर जिस समय पटवारी अर्जुनसिंह अकालियों को हर तरह से नुकसान पहुँचा रहा था उस समय उसके मारने के दोनों प्रयासों में आपका काफी हाथ था। बाद में १० फरवरी १९२३ को अपने तीन और साथियों को लेकर आपने रानी-थाने के विशनसिंह नामक जैलदार को पुलिस का भेदिबा होने के कारण मार दिया। इस काम में आपके साथ फांसी पाने वाले श्री० सन्तसिंह भी थे। बाद में एक नोटिस द्वारा इस बात का एलान भी किया गया था कि विशनसिंह केवल 'सुधार' के लिए मारा गया है।

श्री० बन्तासिंह धामियां द्वारा मारे जाने वाले 'बूटा' लम्बरदार की हत्या में भी आप शामिल थे। कहते हैं कि इस लम्बरदार ने कितने ही निर्दोष अकाली वीरों को योंही पुलिस के जाल में फँसा दिया था और इसी कारण उसमें 'सुधार' की आवश्यकता समझ इन लोगों ने यह काम किया था।

इसके कुछ ही दिनों बाद १६ मार्च, १९२३ को तीन और साथियों को साथ लेकर मिस्त्री लाभसिंह नामक व्यक्ति का 'सुधार' किया। और फिर २७ मार्च, १९२३ को बड़बलपुर गाँव के 'हाजरा' नामक व्यक्ति को, जिसने कि पुलिस को आपके बारे में बहुत सी बातों का पता दे रखा था, जा मारा। इस हत्या के बारे में 'बबर अकाली' नामक पर्चे में इस प्रकार लिखा गया था—“इनाम आज २७ मार्च को बड़बलपुर के हाजारासिंह को ज़मीन के तीन स्वकेयरस् अर्थात् तीन गोलियाँ दी गई।”

इसी प्रकार विश्वासघातियों तथा देश-द्रोहियों को उनके अपराध का पुरस्कार देते और आन्दोलन का प्रचार करते दिन बीत रहे थे कि एक दिन २५ अक्टूबर, १९२३ को आप पुलिस के घेरे में आ गए। आज तक भारत में जितने भी विप्लव के प्रयास हुए हैं, प्रायः उन सभी की असफलता का कारण अपने भाइयों का विश्वासघात ही रहा है। अस्तु, आप ज्वालासिंह नामक एक दूसरे व्यक्ति के पास बालक दलीपा की गिरफ्तारी के बारे में पूछ-ताछ करने गए। उन्हें क्या पता था कि दलीपसिंह पर इन्हीं ज्वालासिंह की ही कृपा हुई है। ज्वालासिंह ने धन्नासिंह को एक ऊख के खेत में बिठला दिया और स्वयं किसी बहाने से जाकर पुलिस-सब-इन्स्पेक्टर गुल्जारासिंह को सूचना दे दी कि धन्नासिंह अमुक स्थान पर मौजूद हैं। इस पर दोनों ने होशियारपुर जाकर पुलिस-सुपरिन्टेण्डेण्ट मिस्टर हार्टन को इस बात की सूचना दी। सुनते ही हार्टन ने

ज्वालासिंह से धन्नासिंह को होशियारपुर के मननहाना नामक गांव के कर्मसिंह के चौबारे में लाकर ठहराने को कहा। ज्वाला सिंह ने ऐसा ही किया। दूसरे दिन रात को ये दोनों ही कर्म-सिंह के यहां बैलों के बाड़े में चारपाइयों पर सो रहे। आधी-रात का समय था, ज्वालासिंह पुलिस को आता देख भाग गया। पुलिस बाड़े की ओर बढ़ी ही थी कि धन्नासिंह भी उठकर उसी ओर को चलते बने, जिधर ज्वालासिंह गया था। पुलिस वालों ने, जिन्होंने कि पहले व्यक्ति को जान-बूझकर निकल जाने दिया था, आपको चारों ओर से घेर लिया। इस समय वे कुल मिलाकर ४० व्यक्ति थे। घिर जाने पर आप अभी रिवॉल्वर निकाल ही रहे थे कि पुलिस-सब-ईन्स्पेक्टर गुल्जारासिंह ने आप पर लाठी चला दी। अचानक इस प्रहार को बचाने के व्यर्थ-प्रयास में धन्नासिंह जी अपने को सभाल न सके और जमीन पर गिर गए। अब क्या था ? तुरन्त ही लोग आप पर टूट पड़े और बहुत मुश्किल के बाद आपको पकड़ने में समर्थ हुए। हथकड़ी पड़ जाने के बाद भी आपने कई बार अपना हाथ छुड़ाने का प्रयत्न किया था। अस्तु, आपको एक स्थान पर बिठलाकर दो-तीन पुलिस के आदमियों ने हथकड़ी की ज़ब्ज़ीर पकड़ ली और दोनों हाथ ऊपर को उठाए रखे गए। डर बढ़ी चीज़ है। अस्तु, इस पर भी सन्तोष न होने पर एक व्यक्ति ने पीछे से आपकी दोनों कलाईयां भी कपड़ लीं।

समय की भी क्या ही विलक्षण गति है ! जो धन्नासिंह अभी कुछ घण्टे पहले एक राष्ट्र-निर्माण का स्वप्न देख रहे थे, वही धन्नासिंह, हां वही अब अपराधी बन, अपने भाग्य के निबटारे के लिए दूसरे के मुंह की ओर देखेंगे ! तो क्या धन्नासिंह गिरफ्तार हो गए ? नहीं, भला यह भी कभी सम्भव है ! उन्होंने तो मरने की शपथ खाई थी, न कि गिरफ्तार होने

की। अस्तु, जिस समय आपको पुलिस वाले पकड़े खड़े थे, तो एकदम आपने एक ऐसा झटका मारा कि हाथ नीचे आ गया और साथ ही कमर के पास छिपे हुए बम् में कोहनी की एक ऐसी चोट दी की एकदम धड़ाका हो गया।

देखते-देखते चारों ओर भगदड़ पड़ गई और जहां पर धन्नासिंह जी बैठे थे वहां पर खून, मांस और हड्डियों के एक ढेर के सिवा कुछ भी बाकी न बचा। साथ ही पुलिस के भी ५ आदमी तो जान से मारे गए और तीन बहुत बुरी तरह घायल हुए, जिनमें से मि० हार्न और एक कॉन्स्टेबल अस्पताल में बाद को मर गए और इस प्रकार उस वीर खिलड़ी ने अपनी इहलीला समाप्त की।

श्री बन्तासिंह धामियां

बबर अकाली-आन्दोलन की मुख्य तथा रोमाञ्चकारी घटनाओं में से सुप्रसिद्ध “मुण्डेर-युद्ध” भी है। तीन बबर अकाली वीर एक मकान में घिर गए थे और घंटों तक असंख्य सशस्त्र सैनिकों से युद्ध करते हुए दो ने तो वहीं प्राण दे दिए और तीसरा व्यक्ति इतने मुश्किल घेरे से भी साफ बचकर निकल गया। उनका नाम श्री० बर्यामसिंह था। मरने वाले थे श्री० बन्तासिंह धामियां और श्री० ज्वालासिंह कोटला।

श्री० बन्तासिंह जी धामियां कलां के रहने वाले थे। वहीं सन् १६०० के लगभग आपका जन्म हुआ था। बचपन से ही आपका स्वभाव बड़ा चञ्चल था। खेल-कूद में आप बहुत चतुर थे। गांव के स्कूल में आप पढ़ने के लिए बिठलाए गए। चार-पांच वर्ष तक वहीं पढ़े। फिर कुछ दिन घर-बार के काम काज में लगे रहे। बाद में आप फौज में नौकर हो गए और तीन वर्ष तक ५५ नं० सिक्ख-पलटन में काम करते रहे। वहां पर भी

आप खेल-कूद में सबसे बढ़-चढ़ कर थे। दौड़ने में तो आप एक ही थे। उन्हीं दिनों कुछेक लोगों के संसर्ग से आप डाके आदि में योग देने लगे। परन्तु कुछ अधिक दिनों तक उस मार्ग पर नहीं चले थे कि बबर अकाली-आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। दौलतपुर के श्री० कर्मसिंह, रामगढ़ के श्री० उदयसिंह आदि बबर अकालियों की साहसपूर्ण घोषणाएँ पढ़-कर आप बहुत प्रभावित हुए। और उनमें ही जा शामिल हुए।

वे भली प्रकार समझ गए थे कि अपने पुराने पापों का प्रायश्चित केवल निज प्राणोत्सर्ग करने से ही हो सकेगा। वे अपनी उस कालिमा को निज रक्त से धोने के प्रयत्न में व्यग्र होकर कार्य-क्षेत्र में अग्रसर हुए थे। इस मार्ग में आकर भी उन्हें दो-एक डकैतियों में योग देना पड़ा था, परन्तु आपका स्वभाव एकदम बदल गया था। सन् १६२३ की दूसरी या तीसरी मार्च को जमशेर नामक स्थान के स्टेशन-मास्टर के घर डकैती हुई थी। उस समय नेतृत्व इन्हीं के हाथ में था। कहते हैं कि किसी एक नीच व्यक्ति ने एक स्त्री पर कुछ हाथ बढ़ाने की चेष्टा की थी। उधर उस स्त्री को श्री० बन्तासिंह ने दूर खड़े होकर कहा—“माता ! अपने आभूषण उतारकर स्वयं ही दे दो। हम आपको नहीं छुँगे।” तब उसने रोकर दूसरे व्यक्ति की नीच-तापूर्ण चेष्टा की कथा सुना, बड़े व्यङ्ग्य और वेदना-भरी आवाज़ में कहा—“अब इतना महात्मापन दिखाने से क्या होगा ?”

बन्तासिंह यह सुनकर आग बबूला हो गए। गड़ासा लेकर उस नीच पर चला दिया। गर्दन कट ही तो गई होती, परन्तु एक दूसरे व्यक्ति ने बीच ही में हाथ रोक दिया। और सब लोगों ने बहुत अनुनय-विनय के बाद उनका क्रोध शान्त किया। उन्होंने कहा—“ऐसे नीच व्यक्ति हमारी स्वराज्य योजना को योंही बदनाम कर देंगे। पहले ही विवश हो डकैती करनी पड़ती

हैं तिस पर भी यह अन्धेर ! इस तरह हम कर ही क्या सकेंगे ?” इसी से समझा जा सकता है कि वैप्लविक बनने पर उनके स्वभाव में कितना अन्तर आ गया था ।

फिर वे बबर अकाली-दल के प्रोग्राम के अनुसार काम करते रहे और कई-एक देशघातकों को मृत्यु-दण्ड दिया । ११-१२ मार्च को पुलिस के खुशामदी नम्बरदार बूटा को, जोकि राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचलने में सरकार की विशेष सहायता किया करता था, उसके घर पर आक्रमण कर उसे मार दिया । इसी प्रकार उन दिनों यह सभी कार्य होता रहा । उधर पुलिस आप लोगों को पकड़ने के लिए दोआवे भर में ठोकरें खा रही थी । आपको पकड़वाने के लिए बहुत बड़ा इनाम भी घोषित कर दिया गया था । परन्तु आपको पकड़ना कोई आसान काम न था । एक दिन एक छोटे से जङ्गल में कुछ घुड़सवार सिपाहियों से आपकी भेंट हो गई । वे लोग इन्हीं बबर अकाली-वीरों को मारने या पकड़ने पर नियुक्त किए गए थे । आपने उन्हें अकेले ही ललकारा । सभी तुरन्त भाग गए “अजी हम न तो आपको गिरफ्तार करने में राजी हैं और न मारने में ही, क्योंकि आप ही लोगों की बदौलत हम लोगों की भी कद्र हो रही है और तिगुनी-चौगुनी तनख्वाहें मिल रही हैं ।” आपके साहस के बारे में ऐसी बहुत सी बातें सुनी जाती हैं । कहा जाता है कि एक दिन एक छावनी में अकेले ही घुसकर रिसाले के पहरेदार को थोड़ी और रायफल छीनकर ले गए थे । अस्तु—

इस तरह बहुत दिनों तक पुलिस के साथ आँखमिचौनी होने के बाद अन्त में १२ दिसम्बर, १९२३ को आप पुलिस के घेरे में आ गए । बात दरअसल यह थी कि शाम-चुरामी गाँव, जो जालन्धर से १०-१२ मील की दूरी पर है, का एक व्यक्ति जगतसिंह सन्देह में पकड़ा गया । पुलिस उसके विरुद्ध कुछ

ग्रमाण न पा सकी, इसलिए उसे धमकाकर और इस बात पर राजी कर के, कि वह बबर अकालियों की गिरफ्तारी में सहायता करे, छोड़ दिया गया। उस कम्बख्त ने अकालियों से दोस्ती गाँठ ली। कुछ दिन पुलिस की हवालात में रह आने के कारण उसे अपनी वीरता और गम्भीरता की ढींगें मारने का बहुत अवसर मिल गया था। परन्तु वह तो था निरा नरपशु। उसने एक दिन बन्तासिंह, ज्वालासिंह और बर्यामसिंह को अपने घर परटिका दिया और स्वयं पुलिस को सूचना भेज दी। कुछ घण्टे दिन रहते ही सेना ने गाँव को घेर लिया।

जब इन लोगों ने जाना कि शत्रुओं ने गाँव का घेरा डाल लिया है तो वे तुरन्त एक चौबारे में जा चढ़े। वे चाहते थे मरना, परन्तु वीरतापूर्वक लड़-लड़ कर। वह सांभ्रामिक दृष्टि से सुन्दर स्थान था कि उन तीन आदमियों ने ही घण्टों पुलिस का नाकों दम किए रक्खा। दोनों ओर से खूब गोली चली। सैनिक लोगों की मैशीनगनों और रायफलें सब व्यर्थ हुई जाती थीं। सामने मकान की छत पर मैशीनगन रखकर चलाई गई। परन्तु कुछ प्रभाव न हुआ।

दया के अवतार गौराङ्ग महाप्रभुओं ने तब अद्वितीय दयाभाव दिखाया। पम्प से मकान पर तेल डालकर आग लगा दी गई। उधर श्री० ज्वालासिंह जी के गोली लग गई वे बुरी तरह घायल हो गए। उसी समय श्री० बन्तासिंह जी मकान से निकलने की कोशिश करने लगे। उनके भी गोली लगी और वे भी घायल होकर वहीं गिर गए। उस समय उनमें इतनी शक्ति भी न रही थी कि खिड़की के पास जाकर शत्रु पर गोली चला पाते। आपने वेदना-भरी आवाज़ में कहा—“बर्यामसिंह ! तुम तो जाओ। भाई, देखो बच सको तो बच जाओ। फिर कभी इनसे हमारा बदला लेना। परन्तु एक अन्तिम प्रार्थना

हमारी भी है। यह लो रिवॉल्वर, एक गोली सिर पर या छाती में मार दो। अब जीते जी शत्रुओं के हाथ में बन्दी बनने की इच्छा नहीं होती। तड़प-तड़प कर शत्रुओं के हाथ में तिल-तिल कर मरने से एक ही बार अन्त कर जाओ जी।” वर्यामसिंह के प्यारे, दुख-सुख के पुराने साथी बन्तासिंह आज घायल हुए आँखों के सामने तड़प रहे हैं। अन्तिम इच्छा भी प्रकट की है कौन किसी मित्र की अन्तिम इच्छा पूरी करने में भेपेगा ? परन्तु ओह ! कितनी कठिन और कितनी भयङ्कर है वह इच्छा ? अपने प्रियजन को अपने ही हाथों गोली से मारना कोई सुगम कार्य नहीं। परन्तु यह भी तो नहीं देखा जा सकता की शत्रु उन्हें शांतिपूर्वक मरने भी न दें और अन्त तक उन्हें बयान आदि के लिए तड़कें। तब श्री० वर्यामसिंह जी ने रिवॉल्वर भरकर बन्तासिंह के हाथों में पकड़वाते हुए, रुधे हुए गले से विदा माँगते हुए, कहा,—“भाई ! आज तक न जाने कितनी हत्याएँ कर डालीं। कितनी ही बार निःशङ्क भाव से लोगों पर गोलियाँ चला दीं। परन्तु अपने ही साथी, सहोदर से भी प्यारे साथी, पर भी गोली चलानी पड़ेगी, यह कभी भी न सोचा था। न, हम से यह न होगा। यह लो रिवॉल्वर, जब जरूरत समझना, अपने हाथ से ही गोली मार लेना।” आँखों से आँसू बहरहे हैं। साथी मर रहा है। सामने अपनी मौत नृत्य कर रही है। बाहर दनादन गोली बरस रही है। वर्यामसिंह एक बार फिर बन्तासिंह के सिर को छाती से लगाकर विदा हुए। वह वीर उस घेरे से सहज ही में निकल गया। हाथ में रिवॉल्वर था। एक दो सिपाहियों ने पकड़ने की कोशिश की। उन पर गोली चला, घायल कर वहीं गिरा दिया। फिर उन “वीर सैनिकों” को उनका पीछा करने का साहस नहीं हुआ।

उधर मकान धायें-धायें करने लगा। और गोली भी बराबर

चलती रही। इन कह सकता है कि बन्तासिंह के प्राण-पखेरू गोली के घाव से गए अथवा उस आग में जलकर। उस समय उनकी आयु २२-२३ वर्ष से अधिक न थी।

श्री० बर्यामसिंह धुग्गा

श्री० बर्यामसिंह जी का जन्म धुग्गा नामक गाँव, जिला होशियारपुर में लगभग १८६२ या ६३ में हुआ था। आप बड़े सुदृढ़ और शक्तिशाली व्यक्ति थे। शरीर गठा हुआ मजबूत था। आप भी सेना में भरती हो गए थे। बहुत दिनों तक वहीं पर सैनिक शिक्षा पाकर नौकरी की थी। उस दौरान में एक दिन किसी घरेलू शत्रु से बदला लेने के लिए सायङ्काल की हाजिरी देकर आप चले गए। बीस मील की दूरी पर भागे हुए गए। उस व्यक्ति को कत्ल कर अपना नाम घोषित कर सुबह की हाजिरी तक पलटन में फिर आ गए। इसलिए आपके विरुद्ध उधर कुछ भी न हो सका। भला फौज के रजिस्टर भी भूठे हो सकते हैं ? बाद में आप डकैत बन गए। दोआब में आप बड़े प्रसिद्ध डकैत थे। आपके नाम की धाक चारों ओर फैल गई थी।

परन्तु बबर अकाली-जत्थे के बनते ही आप उसमें शामिल हो गए और श्री० बन्तासिंह जी के साथ मिलकर सारे काम में योग देते रहे।

उस दिन १२ दिसम्बर, सन् १९२३ को जब बन्तासिंह मुण्डेर नामक गाँव के घेरे में आ गए थे तो आप भी उनके साथ थे। परन्तु मकान में आग लगने पर आप साहस कर घेरे में से भाग निकले थे। आपको देखते ही सिपाहियों के प्राण खुशक होने लगते थे।

इसके बाद आप दूर लायलपुर के जिले में चले गए। उधर एक सम्बन्धी के घर ठहरे हुए थे। बचपन से उसी

सम्बन्धी ने आपका पालन पोषण किया था। परन्तु लोभ और स्वार्थ मनुष्यता तक का नाश कर देता है। वर्यामसिंह जी से कहा गया—“हथियार गाँव से बाहर खेतों में रख दीजिये ताकि किसी को सन्देह न हो सके।” गाँव में ले गए, भोजन आदि कराया। रात अँधेरी थी भोजन करते ही कहा—“जाता हूँ, शस्त्र दूर छोड़कर दिल में न जाने क्या होने लगता है।” लौटकर शस्त्रों वाले स्थान को चल दिए परन्तु सेना तो पहले से ही वह स्थान घेरे हुए थी। पुलिस सुपरिन्टेण्डेण्ट मि० डी० गेल महाशय पहले सैनिक अफसर रह चुके थे बड़े साहसी और वीर थे। उनका इरादा उन्हें जीवित गिरफ्तार करवाने का था। परन्तु उस वीर ने तो इरादा कर रक्खा था लड़कर मरने का चारों ओर से घेरे हुए सेना धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। आप भी सब ताड़ गए। एक स्थान पर खड़े हो, सोचने लगे कि किया जावे तो क्या ? मि० डी० गेल ने जोर से कहा—“वर्यामसिंह, आत्म-समर्पण कर दो।” वर्यामसिंह ने उत्तर दिया—“अरे ! हिम्मत है तो एक बार शस्त्र ले लेने दो, फिर दो-दो हाथ हो ही जायें।” परन्तु यह राजपूती शान की बातें वहाँ कहाँ ? मि० डी० गेल ने आपको पीछे से पकड़ लिया। दोनों हाथ काबू में आ गए। अपनी कृपाण निकालकर वर्यामसिंह ने उसके बाजुओं को बुरी तरह घायल कर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। शशकों में उस समय व सिंह घिरा खड़ा था। शत्रु जीवित गिरफ्तार किया चाहते थे, किन्तु आपकी कृपाण देख सब जी मसोसकर रह जाते थे। कई बार दो-चार सिपाही आगे बढ़े, किन्तु घायल होकर पीछे हटने पर बाध्य होना पड़ा।

आखिर मि० डी० गेल ने उनपर गोली चलाने की आज्ञा दे दी। चारों ओर से गोलियों की बाढ़ शुरू हो गई। इस प्रकार छाती पर गोलियाँ खाकर वह वीर स्वर्गधाम सिधार गया।

उनका शव लायलपुर ले जाया गया। सहस्रों नर-नारी दर्शन करने के लिए वहाँ जमा हो गए थे। यह घटना ८ जून, १९२४ की है।

श्री० किशनसिंह गर्गज्ज

आप जालन्धर जिले के वारिङ्ग नामक गाँव के रहने वाले थे पिता का नाम श्री फतेहसिंह था। कुछ समय तक स्कूल में शिक्षा पाने के बाद सेना में भरती हो गए और फिर मार्च, १९२१ तक ३५ नम्बर सिक्ख-रिश्वाले में हवलदार के पद पर काम करते रहे।

जलियाँ वाले बाग की घटना के बाद देश में असयोग की सर्वव्यापी लहर चली और उसी से प्रभावित होकर आपने भी नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। आपने गिरफ्तार होने पर लिखित बयान में कहा था—“जब मैं फौज में नौकरी कर रहा था, तभी सरदार अजीतसिंह की नजरबंदी, दिल्ली के रकाब गख्ख के गुरुद्वारे की दीवार के तोड़े जाने, बजबज में निदोष यात्रियों पर गोली चलाने, रौलट-ऐक्ट और जलियाँवाले बाग की दुर्घटना और मार्शल-लॉ आदि बातों के कारण मेरे हृदय में घृणा उत्पन्न हो गई थी और अंत में गुलामी के बोझ को और अधिक न सह सकने के कारण मैंने सरकार की नौकरी छोड़ कर राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया।”

अभी पिछले घाव भरने भी न पाए थे कि एक और गहरी चोट से प्राण छटपटा उठे। २० फरवरी, १९२१ की ननकाना साहब की दुर्घटना के बाद आपने अकाली दल में भाग लेना आरम्भ कर दिया और अप्रैल में उक्त दल के मन्त्री चुने गए। किन्तु इस प्रकार चुपचाप पुलिस के हाथों मार खाना आपको



श्री० वर्यामसिंह

अच्छा न लगा और उन्होंने गुप्त सङ्गठन की आयोजना प्रारम्भ कर दी ।

अभी कार्य आरम्भ ही हुआ था कि दो व्यक्तियों की असावधानी से कुछ भेद खुल गया । ६ आदमी तो गिरफ्तार किए गये, किन्तु आप अपने चार और साथियों के साथ फरार हो गये । कुछ दिन मालवा में जीन्द-राज्य के मस्तुअना नामक स्थान पर रहकर आप १९२१ की सर्दियों में फिर दोआबा वापस आ गए । आते ही आपने “चक्रवर्ती-दल” जो बाद को “बबर अकाली-दल” के नाम से प्रसिद्ध हुआ, के बनाने का घोषणा की और गाँव-गाँव जाकर व्याख्यान देने आरम्भ कर दिये । किशनसिंह एक अच्छे वक्ता थे । अस्तु लोगों पर इनकी बातों का अच्छा प्रभाव पड़ा । कहते हैं कि गिरफ्तारी के समय तक आप ने कुल ३२७ व्याख्यान भिन्न-भिन्न स्थानों पर दिये थे ।

जिस समय कपूरथला-राज्य तथा जालन्धर जिले के अन्तर्गत किशनसिंह जी अपने कार्य को विस्तार दे रहे थे, ठीक उसी समय होशियारपुर जिले में दौलपुर के कर्मसिंह तथा उदयसिंह जी, जो कि बाद में बोमेली के पास पुलिस के साथ लड़ते हुये मारे गये, उसी प्रकार के विचारों का प्रचार रहे थे । अन्त में इन दोनों पार्टियों के मिल जाने पर कार्य और भी जोरों पर होने लगा । बम्, रिवाल्वर तथा बन्दूकों का संग्रह किया गया और स्थान-स्थान पर केन्द्र स्थापित हुये । उनका विचार था कि इस प्रकार पर्याप्त शक्ति के हो जाने पर सेनाओं की सहायता से १८५७ की भांति गदर द्वारा भारत को आजाद किया जाय । ये लोग घर के भेदियों को कभी न छोड़ते थे ।

“बबर अकाली” लोग भेदियों के बध करने को उनका “सुधार” करना कहते थे । अस्तु, बहुतों का “सुधार” करने और कार्य को काफी विस्तार दे चुकने के बाद अन्त में भेद खुल

गया और गिरफ्तारियां शुरू हो गईं । किशनसिंह भी गिरफ्तार कर, लाहौर लाए गए । अभियोग चलने पर आपने सब बातें मान लीं और कहा—“मैं सरकार का कट्टर शत्रु था और इसी से जिस तरह भी हो, अंगरेजों को भारत से निकाल-बाहर करने की इच्छा से ही यह सब कुछ किया था ।” अदालत से आपको फांसी की सजा मिली और एक दिन लाहौर Central jail में वे भी उसी पूर्व परिचित रस्सी से लटका दिए गए ।

श्री० सन्तासिंह

आप लुधियाना जिले के ‘हरयों खुर्द’ नामक गाँव के रहने वाले थे । पिता का नाम सूबासिंह था । सन्तासिंह के बाल्य-जीवन तथा शिक्षा आदि के सम्बन्ध में किसी विशेष बात का पता नहीं । हाँ, १९२० की फरवरी मास में आप ५४ नं० सिक्ख रिसाले में भरती हुए और दो साल तक नौकरी के बाद २६ जनवरी, १९२२ को वहाँ से त्याग-पत्र दे दिया । फौज में नौकरी करने से पहले आप खालसा-हाई स्कूल, लुधियाना में क्लर्क का काम भी कर चुके थे ।

नौकरी छोड़ने के बाद अकालियों के त्याग तथा दृढ़ता से प्रभावित हो आपने भी उसमें भाग लेना प्रारम्भ कर दिया और कुछ ही दिनों में अपनी चतुरता तथा कार्य-संलग्नता के कारण आन्दोलन के एक प्रमुख नेताओं में से गिने जाने लगे । फैसला सुनाते हुए जज ने आपके बारे में कहा—“अकालियों के कुछेक कार्यों को छोड़कर इस अभियुक्त ने प्रायः सभी में भाग लिया है और इस षड्यन्त्र की आयोजना में किशनसिंह और कर्मसिंह के बाद इसी का अधिक हाथ था ।”

उद्देश्य की प्राप्ति में बाधा पहुँचाते देख, आपने विशनसिंह जैलदार को अकेले ही जाकर मार दिया था । इसके अतिरिक्त

बूटा, लाभसिंह, हजारासिंह, राला और दित्तू, सूबेदार गैडा-सिंह और नौगल शमां के नम्बरदार आदि देश-द्रोहियों को उनके अपराध का दण्ड देने में भी आप सम्मिलित थे।

अन्त में अपने ही एक सम्बन्धी के विश्वाघात से आप एक दिन गिरफ्तार हो गए। अदालत से कुछ सवाल किए जाने पर आपने कहा—“इस सरकार से मुझे किसी प्रकार के भी न्याय की आशा नहीं। अस्तु, मैं एक भी सवाल का जवाब देना नहीं चाहता।”

अन्त में आपने स्वयं ही सब अपराधों को स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा—“यद्यपि मैं इस बात को भली-भांति जानता हूँ कि मेरे अपराध स्वीकार करने से मेरा केस और भी बिगड़ जायगा, किन्तु फिर भी मैंने जो कुछ किया, वह अच्छे के लिए ही किया था। अस्तु, मैं उसमें से एक बात को भी छिपाना नहीं चाहता।”

अदालत से आपको फाँसी की सजा मिली। और २७ फरवरी, १९२६ को लाहौर-सेन्ट्रल जेल में अपने और पाँच साथियों सहित आप भी तख्ते पर भूल गए।

श्री० दलीपसिंह

वरुण दलीप ! कायरता के उस युग में भारत के सोए हुए पामर प्राणों में स्फूर्ति फूँक कर एकाएक तुम किस अन्तरिक्ष में विलीन हो गए ? १७ वर्ष की छोटी अवस्था में किस नशे से उन्मत्त होकर तुमने वे सब काम किए थे ? वह कार्य-कुशलता, वह साहस, वह उत्साह और वह लगन तुमने इतनी जल्द कहाँ से पा ली थी ? ये सब बातें शायद बहुत-कुछ सर मारने के बाद भी आज के हम कायरों की समझ में न आ सकेंगी !

धमियाँ कलाँ, जिला होशियारपुर में श्री० लाभसिंह जी के

घर उस वीर का जन्म हुआ था। कुछ बड़े होने पर स्कूल बिठ-
लाए जाने के बाद से ही बालक ने अपनी कुशलता का परिचय
देना प्रारम्भ कर दिया। दलीप पढ़ने-लिखने में बहुत अच्छे न
होने पर भी अपने साथियों में सर्व-प्रिय थे। उनसे अपनी
इच्छानुसार काम ले लेना तो इनका बायें हाथ का काम था।

सन् १९२२ के दिन थे। अभी लड़कपन के खेल छूटने भी न
पाए थे कि उस कोमल हृदय ने एक गहरी चोट खाई। ननकाना
साहब की दुर्घटना तथा अकालियों पर किए गए अत्याचारों ने
उस भावुक हृदय को एकदम बेचैन कर दिया। बस मार्च, १९२३
में लाड़-प्यार से पाले गए उस बालक दलीप ने घर बार पर
लात मार कर अकाली-मत की दीक्षा ग्रहण की।

इसके बाद आपने क्या-क्या किया उसके बारे में अदालत
में फ़ैसला सुनाते समय आपके सम्बन्ध में कहे गए जज के शब्द
ही यहाँ पर दे देना उचित समझता हूँ। जज ने फ़ैसले के समय
कहा था :—

“This accused, young as he is, appears to
have established a record for himself second
only to that of Santa Singh accused, as to the
offences in which he has been concerned in
connection with this conspiracy. He is impli-
cated in the murders of Buta Lumberdar, Labh
Singh Mistri, Hazara Singh of Baiblpur, Ralla
and Dattu of Kaulgarh, Ata Mohammad Patwari,
in the 2nd and 3rd attempts on Labh Singh of
Dhadda Fathe Singh, and in the murderous
attack on Bishan Singh of Sandheara.”

इसी प्रकार कार्य करते हुए एक दिन सन्तासिंह के साथ

‘कन्दी’ नामक स्थान पर कुछ पर्वे बाँटने जा रहे थे कि एकाएक पुलिस ने घेर लिया। १२ अक्टूबर १९२३ को तरुण दलीप खन्जीरों में बाँधकर मुल्तान-जेल लाए गए। बालक समझकर लोगों ने चाहा कि डरवाकर कुछ बातें मालूम कर ली जायं, किन्तु आशाओं पर पानी फिरता देख क्रोध का ठिकाना न रहा। भला एक छोटे से लड़के की गुस्ताखी वे लोग क्यों सहने लगे। बस मार पड़ने लगी। कभी-कभी बीच-बीच में कुछ लालच भी दिया, पर अन्त में उसी एक खामोशी के सिवा और कुछ हाथ न आया।

कहते हैं कि श्री० दलीपसिंह देखने में बहुत भोले तथा सुन्दर थे। आयु तो थी केवल १७ वर्ष की ही। आपकी बाल्या-वस्था तथा भोलेपन पर मि० टैप (Tapp) सेशन जज मुग्ध-से हो गए थे। वे नहीं चाहते थे कि उन्हें फाँसी की सजा दी जाय। परन्तु सभी गवाहों की गवाही आप के विरुद्ध सुनकर आप बहुत झुंझलाते थे और येन-केन-प्रकारेण यही चेष्टा करते थे कि दलीपसिंह के विरुद्ध कुछ न लिखें। कई दिन तक यही खींचातानी चली, आखिर एक दिन श्री० दलीपसिंह हाथ बाँधकर जज महोदय के सामने जाकर खड़े हो गए और कहा— “आपकी इस कृपा-दृष्टि के लिए मैं बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ, परन्तु कृपाकर पहले मेरा वक्तव्य लिख लीजिए। मैंने यह सभी कुछ किया है और अगर आज छूट जाऊँ तो फिर यही सब करूँगा। परन्तु आप मुझे जीवित रखने के लिए क्यों लालायित हो रहे हैं ? मैं तो फाँसी पर लटककर प्राण दिया चाहता हूँ। उसका कारण यह है कि मुझे ईश्वर की कृपा से जो यह मानव-देह जैसा दुर्लभ पदार्थ मिला है इसे अभी तक मैंने किसी तरह भी अपवित्र नहीं किया है। और चाहता हूँ कि आज इसी तरह पवित्र देह ‘माँ’ के चरणों में भेंट कर दूँ। कौन कह

सकता है, कुछ दिन और जीता रहा तो यह पावित्र्य कायम रहे अथवा नहीं ; और फिर इस बलिदान का सारा महत्त्व और सौन्दर्य ही जाता रहे ।”

जज हैरान होकर उनके मुँह की ओर ताकता रह गया । अस्तु फैसला सुनाए जाने पर उन्हें फाँसी का दण्ड मिला ।

२७ फरवरी, १९२६ का दिन था, भुवन-भास्कर की पहली ही लाल किरण के साथ भगवान् ने उस युवक संन्यासी के पवित्र जीवन पर अपनी छाप लगा दी ।

खूँ के हरफों से लिखा जाएगा तेरा वाक्या ।

मुझको भूलेगी न यह पुरगम कहानी हाय हाय ॥

श्री नन्दसिंह

आपका जन्म सन् १८६५ ई० में जालन्धर ज़िले के घुड़ियाल नामक गाँव में हुआ था । आपके पिता का नाम गङ्गासिंह जी था । छोटी ही उमर में देहान्त हो जाने के कारण आपने रावल-पिण्डी में अपने बड़े भाई के पास परवरिश पाई । ये बचपन से ही बड़े फुर्तीले थे और खेल-कूद की ओर अधिक रुचि थी । १५ वर्ष की ही आयु में शादी हो जाने के बाद आप कुछ समय तक मकान पर ही बढ़ई का काम करते रहे, और फिर बसरा चले गए ।

ननकाना साहब की घटना के बाद अकाली-आन्दोलन ने जोर पकड़ा और आप भी उसी में भाग लेने की इच्छा से देश को वापस आ गए । उस समय गुरु के बाग के सत्याग्रह में उन्हें छः महीने की सज़ा भुगतनी पड़ी थी । जेल में मार भी अच्छी खानी पड़ी । अस्तु यहीं से आपके विचारों में परिवर्तन होना आरम्भ हो गया । उस नौजवान आत्माभिमान ने देखा

कि इस प्रकार निर्दय पुलिस वालों के दण्डे खाने से काम न चलेगा। अस्तु, जेल से बाहर आते ही आप किशनसिंह के बबर अकाली दल में सम्मिलित हो गए। उन्होंने अब मार खाने की बात को छोड़कर मरने और मारने की शपथ ली।

सत्याग्रह में सज्जा होने पर आपके भाई ने माफ़ी माँग कर कूट आने की सलाह दी। कहा—“बड़े भाई का शरीरान्त हो चुका है। लड़के की शादी करनी है। अस्तु, यदि ऐसी अवस्था में आप भी जेल चले गए तो कुछ भी न हो सकेगा।” इस पर आपने उत्तर दिया—“यदि बड़े भाई के बिना शादी हो सकती है तो मेरे बिना भी हो सकती है। इन शादी-जैसे घरेलू मामलों के लिए मैं क्रौम का काम रोकना नहीं चाहता।”

बबर अकाली-आन्दोलन में भाग लेने के बाद से गाँव का सूबेदार गेंदासिंह आपको बहुत तंग करने लगा। वह इनकी सभी बातों की सूचना पुलिस में दे देता। अस्तु; एक दिन आपने जाकर उसे मार दिया। पुलिस ११ दिन तक गाँव वालों को तंग करती रही, तब आपने उन लोगों से कहा—“जो कुछ किया है मैंने किया तुम लोग व्यर्थ में इन लोगों को क्यों तंग करते हो?”

आप को गिरफ्तार कर मुकदमा चलाया गया और फाँसी की सज्जा हुई। सज्जा सुनाई जाने के बाद आपने घर वालों से कहा—“तुम लोग मेरी फ़िक्र न करना। मैं किसी बुरी मौत से नहीं मर रहा हूँ। मुझे इस बात की खुशी है कि मेरे प्राण देश के काम के लिए जा रहे हैं। मैंने इमारत की नींव डाल दी। अब यह देश का फ़र्ज है कि यदि यह आज़ाद होना चाहता है तो उस नींव पर मकान बनाकर खड़ा करे।” आपने यह भी कहा था कि मरने के बाद हम सब को एक ही चिता पर जलाना और राख को रावी में डाल देना।

अन्त में २७ फ़रवरी, १९२६ को लाहौर सेन्ट्रल जेल में

पाँच साथियों के साथ आपको फाँसी दे दी गई और उनक सम्बन्धियों ने उनकी इच्छानुसार सब का एक ही चिता पर अंतिम संस्कार किया ।

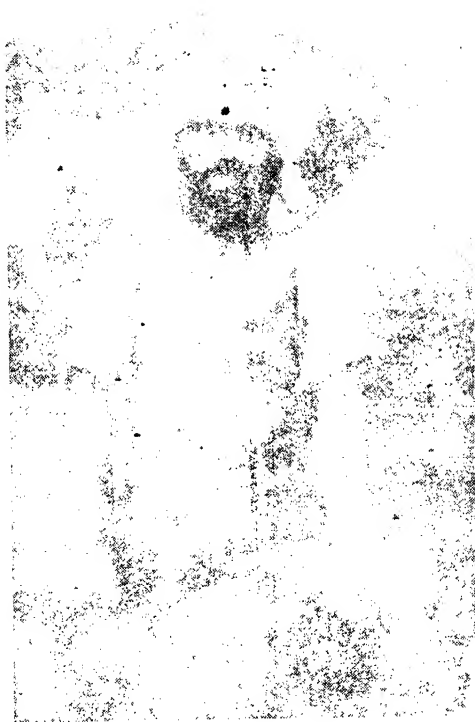
श्री० कर्मसिंह

आपके पिता का नाम श्री भगवानदास था । क्रौम के सुनार थे और जालन्धर जिले के मनको नामक गाँव में आप का घर था । बचपन अधिकतर खेल-कूद में बीता और घर के निर्धन होते हुए भी आपकी तबीयत दुनियावी कामों में कम लगती थी । छुटपन से ही ये बहुत चञ्चल थे और कभी किसी की कड़ी बात न सहते थे । असहयोग-आंदोलन के दिनों में आपने स्वतन्त्रता का पाठ सीखा और किशनसिंह के बबर अकाली-दल बनने पर आप उसमें शामिल हो गए ।

गेंदासिंह सूबेदार के मारे जाने में आप भी शामिल थे । इसके बाद कुछ दिनों तक प्रचार-कार्य भी करते रहने के बाद आप १२ मई, १९२३ को गिरफ्तार हो गए ।

अभियोग चलने पर आपने कहा—“अदालत की सारी कार्यवाही एक नाटक के समान है और जज लोग पुलिस के हाथ में खिलौने के समान हैं । अस्तु, मैं किसी प्रकार का बयान अथवा सफाई आदि देना नहीं चाहता ।” जेल में बयान लेने के लिए आपके साथ कड़ा व्यवहार भी किया गया और इस बात पर बाध्य किया गया कि वे सारा हाल पुलिस को बता दें । किन्तु आपने किसी भी बात का उत्तर देने से इन्कार कर दिया ।

अदालत ने आपको फाँसी को सजा दी और २७ फरवरी सन् १९२६ को लाहौर सेन्ट्रल-जेल में पाँच और साथियों के साथ आपको फाँसी दे दी गई ।



श्री० नन्दसिंह



स्वर्गीय सरदार भगतसिंह
(विद्यार्थी जीवन में)

सरदार भगतसिंह

सरदार भगतसिंह का जन्म लायलपुर के एक ख्याति प्राप्त देशभक्त परिवार में सरदार किशनसिंह के घर आश्विन शुक्ला तेरस संवत् १९६४ अथवा सन् १९०७ में शनिवार के दिन प्रातः काल नौ बजे हुआ था। आप अपने पिता के द्वितीय पुत्र थे। इसी दिन सरदार किशनसिंह वापिस नैपाल से तथा सरदार सुवरणसिंह जेल से आए थे। सरदार अजितसिंह के माण्डला जेल से छूटने का समाचार भी इसी दिन मिला था। अतः आप को 'भागों वाला' कहा गया। बाद में आपका नाम भगतसिंह रख दिया गया।

आप कुछ बड़े होने पर अपने बड़े भाई जगतसिंह के साथ बांगा के प्राइमरी स्कूल में भर्ती कराए गए। जगतसिंह का ११ वर्ष की अवस्था में ही देहान्त हो गया। इसके कुछ दिनों बाद आपको लाहौर के डी० ए० वी० स्कूल में भर्ती कर दिया गया। आपने वहां से मैट्रिकुलेशन परीक्षा पास की। असहयोग आंदोलन छिड़ने पर आप डी० ए० वी० कालेज छोड़ कर लाला लाजपतराय के नेशनल कालेज में भर्ती हो गए।

नेशनल कालेज उस समय लाहौर के ब्रैडला हाल वाले स्थान पर था। उस समय उसमें देवता स्वरूप भाई परमानन्द तथा जयचन्द विद्यालंकार जैसे योग्य प्रोफेसर थे। भाई जी ने भगतसिंह की परीक्षा लेकर उसको एफ. ए. में भर्ती कर लिया। इस समय कालेज में सुखदेव, यशपाल और भगवती चरण आदि भी पढ़ते थे। सुखदेव लायलपुर का निवासी था। इसका जन्म १९०७ में हुआ। भगवती चरण आगरे के निवासी गुजराती ब्राह्मण थे। आपके पिता का नाम रायसाहिब पंडित शिवचरण था। वे रेलवे के रिटायर्ड अफसर थे। उनका सन् १९२०—२१ में देहांत होने पर भगवतीचरण को ज़ायदाद के

अतिरिक्त तीस सहस्र रुपया नक़द मिला था। श्रीमती दुर्गावती बोहरा से उनका विवाह बाल्यावस्था में ही हो चुका था। यशपाल पंजाब के धर्मशाला नामक स्थान के निवासी थे। उनका जन्म १९०३ में हुआ था। पहिले उनकी शिक्षा गुरुकुल कांगड़ी में हुई थी। बाद में वह वहां की पढ़ाई बीच में ही छोड़ कर नेशनल कालेज में आ गए। पीछे से यशपाल यहां से बी. ए. पास करके यहीं अध्यापक हो गये थे। उन दिनों श्रीमती सुशीला देवी उर्फ़ दी दी का भी दुर्गादेवी बोहरा के साथ नेशनल कालेज के विद्यार्थियों तथा अध्यापकों से सम्बंध था।

पंजाब में विप्लववाद का आरम्भ सन् १९२० के बाद नेशनल कालेज लाहौर से ही हुआ। कहा जाता है कि यहां के अध्यापक पंडित जयचन्द विद्यालंकार की विप्लववाद में रुचि थी। उन्होंने भगतसिंह, सुखदेव, यशपाल, भगवतीचरण तथा सुशीलादेवी आदि को विप्लववाद के लिये उत्साहित किया और डाके आदि डालने की योजना सुभाई। कहा जाता है कि आप लड़कियों को भी जेवर आदि लाने को उत्साहित किया करते थे। किन्तु इन विद्यार्थियों में भगवती चरण एक ऐसे विद्यार्थी थे जिनकी पंडित जयचन्द जी में बिल्कुल श्रद्धा नहीं थी।

भगतसिंह ने नेशनल कालेज से १९२३ में बी० ए० पास किया। इस समय आपकी सहानुभूति बबर अकाली आंदोलन से हो गई थी। कुछ दिनों के बाद भगतसिंह के घरवालों ने उनके विवाह का प्रबन्ध करके मंगनी का दिन निश्चित कर दिया। भगतसिंह विवाह नहीं करना चाहते थे। अतः वह एक पत्र अपने पिता के नाम छोड़कर लाहौर से भागकर कानपुर आये। यहां आप स्वर्गीय गणेशशंकर जी विद्यार्थी के पास प्रताप प्रेस में 'बलबंत' नाम से काम करने लगे। यहीं आपकी बहु-

केशवर दत्त से मित्रता हुई, जिनके साथ आपने बाद में खूब काम किया ।

इसी समय इलाहाबाद में युक्तप्रान्त तथा पंजाब के क्रांतिकारियों ने मिलकर पूर्वोक्त 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' की स्थापना की, जिसका वर्णन पोछे काकोरी युग के वर्णन में पृष्ठ ३१० पर किया जा चुका है। भगतसिंह इस संस्था में पन्द्रह वर्ष की आयु में सन् १९२३ में ही सम्मिलित हो गए। आपका गुप्त नाम भी 'बलवन्त' ही रक्खा गया। अब आपने कानपुर के श्री योगेशचन्द्र चटर्जी की देखरेख में—जो वहां उस समय रायसाहिब नाम से काम करते थे—काम करना आरम्भ किया। कुछ दिनों बाद आप अपनी माता जी की बीमारी का समाचार सुनकर फिर अपने गांव चले गये। यहां से आप बेलगांव कांग्रेस में जाकर बलवन्त सिंह नाम से 'अमृतसर' के अकाली का सम्पादन करने लगे। इसके पश्चात् आपने 'कीर्ति' नामक पत्र का सम्पादन भी किया।

सन् १९२६ से सुखदेव ने भी लाहौर में क्रांतिकारी दल के लिये भर्तियां करनी आरंभ कर दी थीं। उसके विषय में ज्ञात हुआ है कि उसको अपने परिवारकी कुछ उलझनों ने इस प्रकार उत्तेजित किया कि उसका मन क्रांतिकारी हो गया। इस समय लाहौर षड्यंत्र का मुखबिर जैगोपाल लाहौर के नेशनल स्कूल में पढ़ता था और यशपाल वहां बी० ए० पास करके अध्यापक हो गया था। यशपाल ने नेशनल स्कूल के १९२६ में बंद होने से पूर्व जैगोपाल का परिचय सुखदेव से करा दिया। नवम्बर १९२६ में जैगोपाल सुखदेव की गुप्त समिति का सदस्य बन गया। स्कूल के पुस्तकालय के बंद होने से पूर्व जैगोपाल ने स्कूल के पुस्तकालय से सुखदेव के लिये 'विस्फोटक पदार्थ बनाने की विधि' (Manufacture & uses of Explosives)।

नामक पुस्तक, पारा, दो थर्मामीटर तथा दो बैटरियां चुराई। उसने यह सब वस्तुएं सुखदेव को दे दीं। सुखदेव ने नवम्बर या दिसम्बर सन् १९२६ में हंसराज बोहरा नाम के एक और व्यक्ति को भी दल में सम्मिलित किया। जो बाद में हंसराज वायरलेस से भिन्न था।

इस समय काकोरी की गिरफ्तारियों के कारण युक्तप्रान्त का विप्लवी दल अत्यंत निर्बल हो गया था। सन् १९२६ के आरंभ में इस दल के जतीन्द्र नाथ सान्याल से फणीन्द्र नाथ घोष ने इलाबाद में भेट की। फणीन्द्र नाथ बेतिया का रहने वाला था। उसका संबंध १९१६ में ढाका अनुशीलन समिति से हुआ था। १९१८ में उसको भारत रक्षा कानून के अनुसार एक साल के लिये नजरबंद किया गया। सन् १९१९ के बाद वह बेतिया में बिहार के लिये तीन वर्ष तक एक विप्लवी दल का संगठन करता रहा। १९२३ में उसने इस दल में मन मोहन बनर्जी को सम्मिलित किया। १९२५ में उसने 'हिन्दुस्तानी सेवा दल' नामक स्वयंसेवकों की संस्था खोली। उसने १९२६ से बनारस आकर युक्तप्रान्त के क्रांतिकारियों से संबन्ध स्थापित किया। १९२७ में उसने बिहार के दल में कमलनाथ तिवारी को सम्मिलित किया।

भगतसिंह ने १९२६ में लाहौर जा कर सुखदेव तथा भगवती चरण की सहायता से काकोरी के बंदियों को छुड़ाने का यत्न किया, किंतु यह उद्योग सफल न हो सका। उसी समय उन्होंने कानपुर के विजय कुमार सिंह, सुखदेव और भगवती चरण के साथ मिल कर दल को फिर से संगठित किया। अक्टूबर १९२६ में दशहरा के मौके पर फटे हुए बम के सम्बन्ध में उन पर मुकदमा चलाया गया, जिस में वे निर्दोष प्रमाणित हुए। इसी बीच में उन्होंने लाहौर में नौजवान भारत सभा को संगठित किया।

इस समय कैलाशपति उर्फ काली चरण जिला गोरखपुर के बुरहलगंज पोस्ट ऑफिस में नौकर था। वह २६ जून १९२८ को डाकखाने का ३१६०) रुपया लेकर भाग गया। यह रुपया क्रांतिकारी दल के कार्यों में खर्च किया गया।

फणीन्द्र नाथ इस समय जून या जुलाई १९२८ तक कलकत्ते ही में रहा। इसी समय युक्त प्रान्त में कुछ कार्य नहीं हुआ। केवल ललित कुमार मुकर्जी—जिसका सन् १९२५ में सान्याल बंधुओं से परिचय हुआ था—उस समय अजय कुमार घोष और जतीन्द्र नाथ सान्याल के साथ भावी कार्यक्रम के विषय में परामर्श किया करता था। वास्तव में काकोरी के मुकदमे के कारण युक्त प्रांत का क्रान्तिकारी दल अगस्त १९२८ तक अच्छी तरह विसंगठित ही पड़ा रहा।

कानपुर की मीटिंग

जुलाई १९२८ में गया प्रसाद, शिवप्रसाद और सुखदेव ने कानपुर में मंत्रणा की। इस के फलस्वरूप सुखदेव गयाप्रसाद को लाहौर ले गया। उन लोगों के कुछ दिन लाहौर रहने पर शिववर्मा भी उन से आ मिले। सुखदेव के प्रस्ताव पर गयाप्रसाद फिरोजपुर गया। यहाँ उसने एक मकान किराए पर लेकर उसमें डाक्टर बी० एस० निगम नाम से डाक्टरी की दुकान खोली। इस दुकान को खोलने के तीन उद्देश्य थे—पहिला जिससे पंजाब से युक्तप्रांत के मार्ग में आते अथवा जाते समय वस्त्र बदले जा सकें, दूसरा जिससे डाक्टर के द्वारा विस्फोटक पदार्थ बनाने की सामग्री प्राप्त की जा सके, तीसरे डाक्टरी के सफल होने पर आर्थिक सहायता का लाभ।

केन्द्रीय दल बनाने का यत्न

इस समय तक एक तो बिहार का दल था, जिसमें फणीन्द्र

नाथ घोष, मन मोहन बनर्जी और कँवल नाथ तिवारी थे। दूसरा युक्तप्रांत का दल था, जिसमें शिववर्मा और विजय कुमारसिंह थे और जिसका सम्बन्ध संभवतः गयाप्रसाद, ललित कुमार मुकर्जी, अजय कुमार घोष, जतीन्द्र नाथ सान्याल और फणीन्द्र नाथ घोस से हो गया था। इसके अतिरिक्त लाहौर के दल में सुखदेव, भगतसिंह, जै गोपाल, भगवती चरण, हंसराज वोहरा तथा १९२८ की प्रोष्म के बाद गयाप्रसाद, महावीरसिंह और संभवतः किशोरीलाल थे। कुन्दनलाल और चन्द्रशेखर आजाद (उर्फ पंडित जी) संभवतः १९२८ के प्रथमाब्द में भाँसी में थे। कुन्दन लाल भाँसी में पढ़ता था और आजाद वहाँ काकोरी के वारन्ट से छिप कर मोटर चलाना सीखता था।

अगस्त १९२८ में विजय कुमार सिंह फणीन्द्र नाथ घोष के पास बेतिया गया। इन दोनोंकी इस से पूर्व कभी भेंट नहीं हुई थी। मनोरंजन घोष के सहमत न होने पर भी विजयकुमार सिंह और फणीन्द्रनाथ घोष इस के थोड़े समय बाद फिर मिले। इसमें विजयकुमार सिंह ने फणीन्द्र को एक नए दल में सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया, जो उसके प्रस्तावानुसार पंजाब, युक्त-प्रान्त, बिहार और बंगाल के (बंगाल को बाद में प्रथक् ही रहने दिया गया) दलों को मिलाकर बनाया जाने वाला था। उसने यह भी प्रस्ताव किया कि तारीख ८ और ९ सितम्बर १९२८ को एक गुप्त मीटिंग देहली में की जावे, जिसमें फणीन्द्र के अतिरिक्त भगतसिंह तथा उसके अन्य पंजाबी साथियों, शिववर्मा और चन्द्रशेखर आजाद को भी बुलाया जावे। विजय कुमार सिंह ने यह भी कहा कि वह जितेन्द्र नाथ सान्याल की आधी-नता में काम करना नहीं चाहता, क्योंकि वह बहुत सुस्त है। इस पर फणीन्द्र ने कहा कि वह इसका उत्तर मनमोहन बनर्जी के परामर्श से देगा।

केन्द्रीय समिति की स्थापना

८ सितम्बर १९२८ को वे सब देहली में एकत्रित हुए। विजय कुमार ने बतलाया कि मीटिंग ६ सितम्बर को होगी। वे लोग एक वृत्त के नीचे बैठे थे कि वहीं कुन्दनलाल भी आ गया। विजय कुमार सिंह ने उसका परिचय क्रान्तिकारी दल के सदस्य के रूप में अन्य लोगों को दिया। जहाँ ये लोग बैठे थे उस से थोड़ी दूर पर ही एक मीटिंग हो रही थी, जिसमें भगत सिंह, सुखदेव, जैदेव, शिववर्मा, विजय कुमार सिंह, ब्रह्मदत्त (मुखबिर) और सुरेन्द्र नाथ पाण्ड्या (छूटा हुआ अभियुक्त) थे। फणीन्द्रनाथ घोष का अभी तक भगतसिंह, सुखदेव या जयदेव से परिचय नहीं था। उसका उनसे अगले दिन परिचय कराया गया उस रात को फणीन्द्र नाथ घोष और मनमोहन बनर्जी के स्थान तथा भोजन का प्रबन्ध कुन्दन लाल ने किया।

अगले दिन ये लोग फिर फिरोज शाह के कोटले में प्रातः ८ बजे एकत्रित हुए। अब उनकी सभा आरंभ हुई। इस सभा में फणीन्द्र नाथ घोष, मनमोहन बनर्जी, कुन्दन लाल, विजय कुमार सिंह, सुखदेव, भगतसिंह, जैदेव और शिववर्मा थे। इन लोगों ने एक नया केन्द्रीय दल बना कर उसकी एक कार्यकारिणी समिति बनाई, जिसके निम्न लिखित सात सदस्य चुने गए—

भगतसिंह, सुखदेव, विजय कुमार सिंह, शिववर्मा, फणीन्द्र नाथ घोष, कुन्दन लाल और चन्द्र शेखर आज़ाद। आज़ाद इस सभा में उपस्थित नहीं था। जैदेव और मनमोहन बनर्जी के उपस्थित होने पर भी उनको केन्द्रीय समिति में नहीं लिया गया।

यह तय किया गया कि बंगाल के क्रान्तिकारी दल से कोई सम्बन्ध न रखा जावे, क्योंकि वह आतंकवाद और हिंसा का विरोधी था; जब कि इस सभा के सदस्य आतंकवाद और

हिंसा को क्रांति का प्रधान साधन मानते थे। सुखदेव को युक्त-
 प्रांत का प्रधान, फणीन्द्रनाथ घोष को बिहार का प्रधान, आन्नाद
 को सेना विभाग का प्रधान और कुन्दनलाल को केन्द्रीय दफ्तर
 का अध्यक्ष बनाया गया। यह तय किया गया कि केन्द्रीय
 दफ्तर भाँसी में रहे। केन्द्रीय समिति के अन्य दो सदस्य भगत
 सिंह और विजयकुमार सिंह को विभिन्न प्रान्तों में सम्बन्ध
 स्थापित करने का काम दिया गया। इस मीटिंग में यह भी तय
 किया गया कि प्रान्तीय अध्यक्षाओं को अपने २ प्रान्त के विषय में
 पूरी स्वतन्त्रता होगी। किन्तु डकैतियाँ, हत्याएँ अथवा आतंक-
 वाद के अन्य कार्य केन्द्रीय समिति की सहमति से ही करने
 तय किये गए। यह भी तय किया गया कि केन्द्रीय समिति भी
 किसी प्रान्त के विषय में उस प्रांत के अध्यक्ष की सहमति के
 बिना कोई कार्य नहीं करेगी। शास्त्रों को केन्द्रीय समिति के अधि-
 कार में ही रखना तय किया गया। किन्तु प्रान्त के अध्यक्ष को
 वह आवश्यकता के समय दिये जा सकते थे। घोष का भी
 केन्द्रीय समिति को ही दिया गया।

आतंकवाद को दल की नीति के रूप में स्वीकार किया
 गया। डकैतियों, हत्याओं तथा हिंसा के अन्य कार्यों को
 आतंकवाद में सम्मिलित किया गया। नई समिति का नाम
 हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी (हिन्दुस्तान सामाजिक
 जनतंत्रीय सेना)' रखा गया। पुराने हिन्दुस्तान रिपब्लिकन
 एसोसिएशन को प्रचार के लिये प्रथक् रखा गया।

देहली की इस मीटिंग में और भी बहुत सी बातें तय की
 गईं। यह तय किया गया कि काकोरी मुकदमे के बंदी योगेश-
 चन्द जी चटर्जी को आगरा जेल को बदलते समय छुड़ा लिया
 जावे। इस मीटिंग में विजयकुमार सिंह ने योगेश बाबू का पत्र
 पढ़ कर सुनाया। इस पर विजयकुमारसिंह को अधिकार दिया

गया कि वह योगेश बाबू के साथ पत्रव्यवहार करके उनके छुड़ाने का उपयुक्त अवसर निश्चित करे। इस समय शचीन्द्रनाथ सान्याल को छुड़ाने का भी निश्चय किया गया। किन्तु इस विषय में सम्भवतः कोई योजना न बनाई जा सकी। उस समय यह भी तय किया गया कि साइमन कमीशन को ले जाने वाली रेलगाड़ी को उड़ा दिया जावे। इस काम के लिये दल के सदस्यों को बम बनाना सिखलाने के लिये बंगाल से एक बम बनाने वाला बुलवाने का निश्चय किया गया, जिसके अनुसार बाद में यतीन्द्रनाथ दास को बुलाया गया।

एक और प्रस्ताव द्वारा तय किया गया कि काकोरी मुकदमे के मुखबिरों की हत्या कर दी जावे। धन एकत्रित करने के लिये डाका डालने के लिये भी बिहार प्रांत का एक स्थान चुना गया। अन्त में उपस्थित व्यक्तियों तथा आजाद के पार्टी की ओर से प्रथक २ गुप्त नाम रखे गए। यह मीटिंग सायंकाल ४ बजे समाप्त हुई। भगतसिंह उसी समय देहली से चला गया।

सन् १९२८ के कार्य

अक्तूबर १९२८ में इस समिति के सदस्यों ने कोई विशेष कार्य नहीं किया। क्रमशः उन लोगों ने लाहौर, सहारनपुर, कलकत्ता और आगरा में बम बनाने के कारखाने स्थापित किये। जिनमें से लाहौर और सहारनपुर के कारखाने पकड़े गए। १७ नवम्बर १९२८ को लाला लाजपतराय का देहान्त हो गया। उस समय यह सुना गया कि उनका देहान्त पुलिस सुपरिटेण्डेंट मिस्टर स्काट की उन लाठियों की चोटों से हुआ है, जो उन पर लाहौर में बीस अक्तूबर १९२८ को साइमन कमीशन का बहिष्कार कराते समय जुलूस में पड़ी थीं। आजाद और महावीरसिंह फिरोजपुर से वापिस आ रहे थे कि लाहौर छावनी पर

उनको जै गोपाल मिल गया। आज़ाद के साथ उस समय एक सूट केस था, जिसमें एक मौज़ेर पिस्तौल तथा चार रिवाल्वर थीं। उसी दिन युक्त प्रांत से कुन्दनलाल और शिवराम राजगुरु भी आकर जै गोपाल से मिले, जो उनको मोजंग हाउस ले गया। महावीरसिंह जी ने उनके ठहरने का प्रबंध यहीं किया था। मोजंग हाउस में उस रात्रि को सुखदेव, भगतसिंह, आज़ाद, महावीरसिंह, कुन्दनलाल, शिवराम राजगुरु और किशोरीलाल ठहरे हुए थे।

अब केन्द्रीय समिति के चार सदस्य लाहौर में थे। शेष तीन में से कुन्दनलाल कुछ दिन पहले चला गया था। शिव-वर्मा अमृतसर या आगरे था और फणीन्द्रनाथ घोष बिहार था। इन लोगों ने इस समय कुछ महत्त्वपूर्ण निश्चय किये, जिनके अनुसार वाद में काम किया गया।

पंजाब नेशनल बैंक पर धावे की योजना

४ फरवरी १९२८ को पंजाब नेशनल बैंक को लूटना तय किया गया। इस पार्टी का नेता चन्द्रशेखर आज़ाद को बनाया गया। यह तय किया गया कि सुखदेव बैंक के दरवाजे पर खड़े संतरी की बंदूक छीने; हंसराज, राजगुरु और आज़ाद बैंक के बाहिर पहरा दें तथा कैलाशपति और भगतसिंह टेलीफोन पर कब्जा करें। जयगोपाल और किशोरीलाल रुपया लेकर भाग जावें और तब महावीरसिंह मोटर चला कर सब को मोजंग हाउस पहुँचा दे। किन्तु जब यह लोग इस योजना के अनुसार ३ बजे दोपहर को बैंक गए तो वहाँ भगतसिंह और महावीरसिंह न पहुँच सके। अतः इस योजना का विचार त्याग कर सब लोग वापिस आ गए।

सांडर्स की हत्या

६ या १० दिसम्बर १९२८ को मोज़ंग हाउस में पुलिस सुपरिंटेंडेंट मिस्टर स्काट की हत्या करने के विषय में एक मीटिंग हुई। उस समय यह समझा जाता था कि लाला लाजपत राय की मृत्यु मिस्टर स्काट की लाठियों से ही हुई है। इस मीटिंग में चन्द्रशेखर आज़ाद, सुखदेव, भगतसिंह, किशोरी लाल, शिवराम राजगुरु, महावीरसिंह और जयगोपाल थे। इनमें से तीन सेन्ट्रल कमेटी के सदस्य थे। विजयकुमारसिंह यद्यपि केन्द्रीय समिति का सदस्य था और लाहौर में भी था, किन्तु वह इस मीटिंग में उपस्थित नहीं था। जयगोपाल को मिस्टर स्काट के ऊपर नज़र रखने का काम दिया गया। वह इस सिलसिले में ११ से १५ दिसम्बर तक बराबर पुलिस दफ्तर में जाता रहा। आज़ाद ने हत्या के लिये १७ दिसम्बर का दिन निश्चय किया। इसी दिन दोपहर को दो बजे मोज़ंग हाउस में एक मीटिंग हुई, जिसमें आज़ाद, भगतसिंह, सुखदेव, शिवराज, राजगुरु और जयगोपाल उपस्थित थे। इस मीटिंग में हत्या का कार्यक्रम निश्चित किया गया। जयगोपाल को कोई शस्त्र नहीं दिया गया। उसका काम था घटनास्थल पर उपस्थित रह कर शिकार को बतलाना। इसके अतिरिक्त उसको शस्त्र न देने से इस बात का भी अवसर था कि वह पकड़े जाने पर भी निरपराध सिद्ध किया जा सके।

अब आज़ाद ने मौज्जेर पिस्तौल, भगतसिंह ने ऑटोमैटिक (स्वयं कार्य करने वाली) पिस्तौल तथा शिवराज राजगुरु ने रिवाल्वर ली। हत्या का कार्य इन्हीं तीनों को करना था। महावीरसिंह को मोज़ंग हाउस में रह कर हत्या के बाद आतिथ्य करने का कार्य दिया गया। सुखदेव को कोई कार्य नहीं दिया

गया। शिवराज राजगुरु पैदल ही पुलिस दफ्तर के पास पहुंच गए, जब कि आज्ञाद, भगतसिंह और जयगोपाल साइकिलों पर गए।

लगभग ४ बजे के असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट पुलिस मिस्टर सांडर्स हेड कांस्टेबिल चाननसिंह के साथ पुलिस दफ्तर से बाहिर निकले। जयगोपाल ने उसको दस बजे प्रातः काल लाल मोटर साइकिल पर दफ्तर जाते हुए देख कर मिस्टर स्कॉट समझा था। मिस्टर सांडर्स अपनी मोटर साइकिल को चला कर धीरे २ दफ्तर से निकल कर सड़क पर आए।

अब जयगोपाल ने संकेत किया। इस पर शिवराम राजगुरु ने अपनी रिवाल्वर निकाल कर उसकी मोटर साइकिल के पास आते ही उस पर गोली चलाई। मिस्टर सांडर्स गोली से घायल होकर हाथ ऊपर उठाए हुए अपनी मोटर साइकिल सहित सड़क पर गिर पड़े। उनका एक पैर साइकिल के नीचे आ गया। अब भगतसिंह दौड़ कर आया। उसने अपनी ऑटोमैटिक पिस्तौल से कई गोलियां मिस्टर सांडर्स पर चलाई। इसके बाद भगतसिंह, शिवराम राजगुरु और जयगोपाल कोर्ट स्ट्रीट से भाग चले। हेड कांस्टेबिल चाननसिंह और ट्रैफिक इन्स्पेक्टर मिस्टर फर्न उनका पीछा कर रहे थे। जिस समय गोलियां चल रही थीं तो एक मोटर कार—जिसको अब्दुल्ला चला रहा था—कोर्ट स्ट्रीट के मोड़ पर आकर रुक गई। जिस समय मिस्टर फर्न भगतसिंह और शिवराम राजगुरु का पीछा कर रहा था तो वह भगतसिंह की गोली से घायल होकर गिर पड़ा।

अब भगतसिंह और शिवराम राजगुरु कोर्ट स्ट्रीट से घूमकर डी० ए० वी० कालेज के अहाते के छोटे से दरवाजे में घुस गए। हेड कांस्टेबिल चाननसिंह अब भी उनका पीछा कर रहा

था। इधर जयगोपाल अब भी अपनी साइकिल पर चढ़ा कोर्ट स्ट्रीट से ही जा रहा था। कालेज कम्पाउंड में घुसते ही आजाद ने चाननसिंह पर गोली छोड़ी। वह उसके एक घण्टे बाद मेयां अस्पताल में मर गया।

भगतसिंह, राजगुरु और आजाद थोड़ी देर डी० ए० वी० कालेज के होस्टल में ठहर कर वहां से साइकिलों पर ही चले गए। इनके वहां के रवाना होने के बाद ही पुलिस के दल ने होस्टल को चारों ओर से घेर लिया। आने जाने के सब मार्ग रोक लिए गए और कोने-कोने की तलाशी ली जाने लगी। लाहौर से बाहिर जाने वाली सब सड़कों तक पर पहरा बिठला दिया गया और रेलवे स्टेशनों पर खुफिया पुलिस प्रत्येक व्यक्ति पर निगाह रखने लगी। किन्तु इन तीनों ने पुलिस के सारे प्रयत्न मिट्टी में मिला दिये। इस समय तक सिक्ख होने के कारण भगतसिंह केश रखते थे। किन्तु इस घटना के बाद उन्होंने रूप बदलने के लिये केश कटवा कर अंग्रेजी ठाठ बनाकर एक सम्भ्रांत धनिक का रूप बनाया और खूब बड़ा सा नाम रखा। आपने उसी नाम के लेबल अपने ट्रंक और पोर्टमेण्टो पर लगवा लिये। पुलिस की आंख में धूल भोंकने के लिये उन्होंने एक सुन्दर युवती को भी अपने साथ लेकर फर्स्ट क्लास में सफर किया। राजगुरु आपके अर्दली बने। कहा जाता है उक्त देवी श्रीमती दुर्गादेवी बोहरा उर्फ भावी थीं। उन्होंने शची को अपनी गोद में लिया हुआ था। श्री रामदुलारे त्रिवेदी ने जो अपनी पुस्तक 'शहीद सरदार भगतसिंह' में उक्त देवी को श्रीमती सुशीला देवी उर्फ 'दीदी' लिखा है, सो ठीक नहीं है। इस समय चन्द्रशेखर आजाद ने एक और सरल तरीका ढूँढ निकाला। उन्होंने मथुरा के लिये तीर्थयात्रियों की टोली तैय्यार की, जिसमें केवल बूढ़े लोग थे। आप ब्राह्मण पंडित के वेष में

इसी टोली के साथ सकुशल लाहौर से बाहिर निकल गए।

इस समय पुलिस को भगतसिंह पर विशेष संदेह था। अतः वह उनकी तलाश बड़ी सरगमी से कर रही थी। सांडर्स हत्याकांड से दल की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई और उसकी आर्थिक दशा सुधरने लगी। कांड करने के दिन इन लोगों के पास मकान में दिया जलाने को तेल खरीदने तक के लिये पैसे न थे। इस समय कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ते में होने वाला था। भगतसिंह और विजयकुमारसिंह ने वहां जाकर पहिले तो वहां के विप्लवियों से परिचय प्राप्त किया। इस समय आपने यह भी देखा कि बंगाल के कार्यकर्ता आतंकवाद में विश्वास न कर विप्लववाद में विश्वास करते थे। कलकत्ते में आपने 'ऐसोसिएशन' की शाखा भी खोली। कलकत्ते से आपको एक बम बनाने वाला भी मिल गया।

अब आपने आगरा जाकर वहां बम बनाने का कारखाना खोला। लाहौर और सहारनपुर में भी बम के कारखाने खोले गए। आगरे के दो बमों की भांसी में परीक्षा भी की गई। लाहौर में कारखाने का मकान भगवतीचरण के नाम से लिया गया था। इस कारखाने के अध्यक्ष सुखदेव थे और यशपाल, किशोरीलाल आदि उसमें काम करते थे।

असेम्बली में बम का धड़ाका

इसके पश्चात् दल ने भगतसिंह के विषय में तय किया कि वह काबुल के मार्ग रूस से जाकर भारत को शस्त्र भेजने का प्रबन्ध करे। इसकी बहुत कुछ तैयारी कर ली गई। किन्तु सुखदेव और भगतसिंह के मतभेद के कारण भगतसिंह को इस कार्यक्रम को छोड़कर असेम्बली में बम फेंककर आत्म समर्पण करने का निश्चय करना पड़ा। अब भगतसिंह २४ फरवरी

१९२६ के लगभग सुखदेव से पांच खाली बम और रुपया लेकर देहली आ गया। शिववर्मा भी देहली आ गया। बमों के खाली खोलों को शिववर्मा, भगतसिंह, आजाद, फणीन्द्रनाथ घोष, विजयकुमार सिंह, बटुकेश्वर दत्त, गयाप्रसाद और शिवराम राजगुरु ने भरा। उसी समय के लगभग केन्द्रीय समिति की बैठक हुई, जिसमें साइमन कमीशन पर बम फेंकने की योजना का विचार त्याग दिया गया, क्योंकि इस योजना में यात्रा में बहुत धन लगने की संभावना थी। इसके बदले में यह तय किया गया कि भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त देहली की केन्द्रीय असेम्बली में बम फेंकें और उनके बम फेंकने पर आजाद, जयदेव और सदाशिव उनको वहां से बचा लावें। किंतु बाद में भगतसिंह के आग्रह पर यह तय किया गया कि भगतसिंह और दत्त असेम्बली में बम फेंककर आत्मसमर्पण कर दें, जिससे देश में व्यापक जागृति की जा सके।

८ अप्रैल १९२६ को भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने देहली के असेम्बली हाल में खाली सरकारी बेंचों पर उस समय बम फेंका, जब प्रेसीडेंट पटेल पब्लिक सेफ्टी बिल के विषय में अपनी रूलिंग देने को खड़े हुए। बम फेंकते ही सारे हाल में धुआं छा गया। सर बामन जी दलाल आदि कुछ व्यक्तियों के हल्की चोट भी आई। होम मेम्बर सर जेम्स क्रोसर तो एकदम मुर्दा से होकर ज़मीन पर लेट गए। धुएँ के कारण भागने का पर्याप्त मौका होने पर भी भगतसिंह और दत्त भागे नहीं; वरन् वह वहीं खड़े हुए 'इंक्लाव ज़िन्दाबाद', 'साम्राज्यवाद का नाश हो' के नारे लगाते रहे। उस समय उन्होंने कुछ लाल पर्चे भी बाँटे, जिनमें 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' की ओर से निकाली हुई एक अपील थी। यह अंग्रेज़ी में टाइप की हुई थी। आध घंटे बाद पुलिस का एक दल दो साजैटों

सहित आया, किंतु उनको इनके पास आने का साहस न हुआ। तब इन दोनों ने अपने अपने पास के भरे रिवाल्वर दूर फेंक कर पुलिस अफसरों को इशारा किया कि वह उन्हें गिरफ्तार कर लें। रंगमंच से अदृश्य होने से पूर्व उन्होंने एकबार फिर 'इंकलाब जिंदाबाद' और 'साम्राज्यवाद का नाश हो' के नारे लगाए।

इन दोनों का मुकदमा ७ मई १९२६ को देहली जेल में एडी-शनल मैजिस्ट्रेट मिस्टर पूल की अदालत में आरम्भ हुआ। इस समय ६ पत्रप्रतिनिधियों, अभियुक्तों के माता पिता, कुछ सम्बंधियों तथा वकीलों के अतिरिक्त और किसी को अंदर नहीं जाने दिया गया। इस्तग्रासे की ओर से कुल १६ गवाह सुनाए गए। दो दिन के बाद उनको दफा ३०७ (हत्या करने के प्रयत्न) और विस्फोटक ऐक्ट की दफा ३ के अनुसार सेशन सुपुर्द कर दिया गया।

सेशन अदालत की कार्यवाही उसी प्रकार की कड़ी पाबंदियों के साथ ४ जून १९२६ से मिस्टर मिडलटन सेशन जज देहली के सामने देहली जेल में ही आरंभ हुई और १२ जून १९२६ को समाप्त हो गई। सरकारी गवाहों के बयान हो चुकने पर सरदार भगतसिंह और दत्त ने अपना संयुक्त वक्तव्य देकर क्रांतिकारी आंदोलन के उद्देश्य पर प्रकाश डाला। सेशन जज ने आप दोनों को १२ जून १९२६ को आजीवन कारावास का दण्ड दिया। इसके बाद भगतसिंह को मियांवाली जेल और दत्त को लाहौर सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। भगतसिंह और दत्त ने इस मुकदमे की अपील हाईकोर्ट में की, जो वहां से १३ जनवरी १९३० को खारिज हो गई।

दशहरा वम कांड

२३ अक्टूबर १९२८ को दशहरा था और लाहौरी जनता



सरदार भगतसिंह असेम्बली में बम फेंकते समय

की भीड़ की भीड़ दशहरा के मेले में जा रही और वहां से वापिस आ रही थी। जनता मेले से आ रही थी कि रोशनी दरवाजे के पास एक मकान में दशहरा की भीड़ के बीच एक भयंकर बम फट गया, जिससे दस मरे और तीस घायल हुए। पुलिस को इस विषय में कई माह तक तहकीकात करने पर पता चला कि इस स्थान के बोर्डिंग हाऊस में ओरिएंटल कालेज के भूतपूर्व छात्र आया करते थे। उन दोनों को गिरफ्तार करके उन पर सखती की गई तो उनमें से एक ने बतलाया कि सांडर्स के हत्यारों में भगतसिंह भी था और भगवती चरण पंजाब का विशेष कार्यकर्ता था।

खुफिया पुलिस की सरगर्मियां

इससे कुछ पहिले लाहौर के कुछ व्यक्तियों ने वहां के लुहारों से कुछ लम्बी २ वस्तु ढलवाई थी, जिसको बाद में एक गैस की मशीन का भाग समझा गया। स्थानीय कारीगरों की इस कार्य से बड़ी उत्सुकता बढी और उन्होंने इस विषय में अपने परिचित एक पुलिस कांस्टेबल से भी जिक्र कर दिया। इसकी सूचना पुलिस में दी जाने पर ढलाई का काम कराने वालों की देख रेख करने की आज्ञा दी गई। पीछा करने पर उक्त व्यक्ति सुखदेव निकला, जो नं० ६६ कश्मीर बिल्डिंग में गया था। जांच करने से यह भी पता चला कि उक्त मकान भगवती चरण ने किराये पर ले रखा था।

इस बीच में देहली से यह भी सूचना मिली कि देहली का बम उक्त ढली हुई वस्तु से मिलता जुलता था। सुखदेव और भगवती चरण की निगरानी करने पर पता चला कि १३ अप्रैल १९२८ को जयगोपाल कोहाट से लाहौर वापिस आकर १४ अप्रैल को सुखदेव से मिला। जयगोपाल उस समय कश्मीर

बिल्डिंग में भी गया, जहाँ उस समय सुखदेव और किशोरी-लाल बम बना रहे थे। पुलिस ने इस मकान पर १५ अप्रैल को छापा मार कर सुखदेव, किशोरीलाल और जयगोपाल को गिरफ्तार किया। इनमें से जयगोपाल शीघ्र ही २३ अप्रैल को मुखबिर बन गया और उसने पुलिस को इस क्रांतिकारी संगठन का पूरा इतिहास बतला दिया। उसको सरकार की ओर से क्षमा प्रदान की गई। २ मई को हंसराज वोहरा को गिरफ्तार किया गया। उसको भी माफ़ी देकर मुखबिर बना लिया गया।

इस बीच में जयगोपाल और हंसराज वोहरा मुखबिर बन गये और उन्होंने सहारनपुर की बम फैक्टरी का पता भी पुलिस को दे दिया। फलतः पुलिस ने २३ मई को छापा मार कर मय बम फैक्टरी के शिववर्मा और जयदेव को गिरफ्तार किया। पुलिस को यहाँ छै बम भरे हुये, तीन खाली खोल, कई भरी हुई रिवाल्वर, बहुत सी गोलियाँ तथा क्रांतिकारी पुस्तकें मिलीं। शिववर्मा ने गिरफ्तार होते ही ऐसी अनेक बातें मान लीं, जिनसे कोई नया मुकदमा नहीं बन सकता था।

इसके पश्चात् ४ जून को मनमोहन बनर्जी ने पूर्व निश्चित योजना के अनुसार बिहार प्रांत के मौलनिया नामक स्थान में डाका डालने का प्रबन्ध किया। मौलनिया में ७ जून १९२६ को डाका डाला गया। इस डाके में मकान मालिक बांके महतो कोइरी को जानसे मार डाला गया। इस डाके में श्री योगेन्द्र शुक्ल का हाथ भी था।

प्रथम लाहौर षड्यंत्र के अभियुक्तों और

भागों हुआओं का वर्णन

क्रमशः अनेक अभियुक्त गिरफ्तार कर लिये गये और

पुलिस ने भी मुकदमा तैयार कर लिया। इनका मुकदमा १० जुलाई १९२६ को लाहौर सेन्ट्रल जेल में राय साहिब पं० श्री कृष्ण स्पेशल मैजिस्ट्रेट के सामने विचारार्थ उपस्थित किया गया। इस समय जेल और लारेंस गार्डन के सभी मार्ग बंद कर दिये गये और उनपर पुलिस का पहरा बिठला दिया गया। सड़कों में यूरोपियन सार्जेंट मोटर साइकलों पर गश्त लगा रहे थे। अभियुक्तों ने अदालत में आते ही एक स्वर से 'इन्कलाब जिंदा-बाद' और 'बंदे मातरम्' आदि का घोष किया। इस मुकदमे में कुल ३२ अभियुक्त थे, जिनमें से सात मुखबिर बन गये, ६ भागे हुए थे और शेष १६ पर मुकदमा चलाया जा रहा था। सभी अभियुक्तों को इस समय तक लगभग अढ़ाई मास जेल में हो गये थे।

१६ अभियुक्त निम्नलिखित थे—

१. सुखदेव को दल का नेता, भगवती चरण को मस्तिष्क तथा भगतसिंह को दाहिना हाथ समझा जाता था। सुखदेव में संगठन की शक्ति अद्भुत थी। वह नए-२ सदस्यों को दल में भर्ती करके उनकी योग्यता के अनुसार प्रत्येक कार्य दिया करता था।

२. किशोरी रतन होशियारपुर का रहने वाला था। उसने प्रायः लाहौर में ही काम किया। वह लाहौर ब्रांच का महत्वपूर्ण सदस्य था।

३. शिववर्मा को सहारनपुर में पकड़ा गया। वह हरदोई का था।

४. गया प्रसाद कानपुर निवासी था और सहारनपुर में पकड़ा गया। उसको शिववर्मा ने भर्ती करके सहारनपुर भेज दिया था। उसने पहिले फिरोजपुर में दूकान खोली, फिर वह आगरे के केन्द्र में आ गया। बाद में वह सहारनपुर चला

गया। वह अपनी डाक्टरी की दूकान की मार्फत बम बनाने का सामान दिया करता था।

५. जयदेव कपूर को पीछे से बम बनाने के लिये सहारनपुर भेज दिया गया था। वह हरदोई का निवासी तथा बनारस इंजिनियरिंग कालेज का छात्र था।

६. यतीन्द्रनाथ दास दक्षिण कलकत्ता कांग्रेस कमेटो के सहायक मंत्री थे। उनको पहिली पहल ५ नवम्बर १९२५ को गिरफ्तार किया गया था। किंतु यत्न करने पर भी सरकार उन पर काकोरी का मुकदमा नहीं चला सकी। बाद में उनको बंगाल आर्डिनैस के अनुसार बन्द कर लिया गया। जेल में उनको अनेक कष्ट दिए गए। एक बार तो ढाका जेल में हाथापाई हो जाने के कारण पीटा भी गया था, जिससे उन्होंने २३ दिन तक अनशन करके उच्च अधिकारी को क्षमा मांगने को विवश किया। अंत में उनको २७ सितम्बर १९२७ को छोड़ दिया गया। बाद में उनको लाहौर पड्यंत्र के मामले में १४ जून १९२६ को कलकत्ते में ही गिरफ्तार किया गया। बचपन में भी वह असहयोग आंदोलन में पकड़े जाकर चार दिन बाद छूट गए थे। १९२१ में उनको फिर एक मास की सजा हुई। १९२२ में उनको तीन मास की जेल हुई थी। किंतु अब की बार उनको सबसे बड़ी परीक्षा में उत्तीर्ण होना था। उनके उपवास करके प्राण देने की कहानी का आगे वर्णन किया जावेगा।

७. भगतसिंह देहली में पकड़ गया था, जहां उसको असेम्बली में बम फेंकने के अपराध में आजीवन कालेपानी का दंड दिया गया था। उसको जेल से लाकर इस मुकदमे में सम्मिलित किया गया।

८. कमलनाथ त्रिवेदी अथवा कंवल नाथ तिवारी विश्वासगर कालेज कलकत्ते का छात्र था। वह चम्पारन का निवासी

था। वह प्रायः कलकत्ते में रह कर काम किया करता था। उसने अपना कलकत्ते का मकान दल को दे रखा था। जनवरी १९२६ में उसके मकान में काटन (Gun Cotton) भी बनाई गई थी। मई में वह बेतिया गया था, जिससे वह ७ जून १९२६ को वहां डाके में भाग ले सके। बाद में उसने मौलनिया की डकैती में भाग भी लिया था, जिसमें एक आदमी मर गया और बहुत सा माल लूट लिया गया।

६. बटुकेश्वर दत्त बर्दवान के जी. डी. दत्त के पुत्र थे। इनका जन्म १९०८ में हुआ था। उनको योगेशचन्द्र चटर्जी ने दल में भर्ती किया था। उनको भी देहली के असेम्बली बम केस में आजन्म कालेपानी का दंड दिया गया और जेल से लाकर इस मुकदमे में सम्मिलित किया गया था।

१०. जितेन्द्रनाथ सान्याल (प्रयाग) प्रसिद्ध शचीन्द्र नाथ सान्याल का छोटा भाई था। वह ४ जुलाई को पकड़ा गया था।

११. आज्ञाराम स्यालकोट जिले का निवासी था।

१२. देशराज डी. ए. वी. कालेज लाहौर का छात्र था।

१३. प्रेमदत्त गुजरात (पंजाब) का था। वह पहिले डी. ए. वी. कालेज में पढ़ता था। वह जनवरी १९२६ में ही दल में सम्मिलित हुआ था। वह बम बनाने के नुस्खे पुस्तकों में से नकल करके पार्टी वालों को दिया करता और उनके सामान को पहुँचाया करता था।

१४. सुरेन्द्रनाथ पांडेय कानपुर में ८ जुलाई को पकड़ा गया था।

१५. महावीरसिंह एटा जिले का रहने वाला था। वह देहली की मीटिंग से पहिले ही पंजाब के दल में सम्मिलित हो गया था। उसने अक्टूबर १९२८ के बाद पंजाब में खूब काम किया था। वह युक्तप्रांत से पंजाब और पंजाब से युक्तप्रांत जाने वाले

साथियों का प्रबन्ध किया करता था। उसने पंजाब नेशनल बैंक के छापे में भी काम किया था। सांडर्स की हत्या के बाद वह बीमार पड़ कर सुखदेव की सम्मति से अपने घर एटा चला गया था।

१६. अजय कुमार घोष ८ जुलाई को कानपुर में पकड़ा गया था। इस समय निम्नलिखित नौ अभियुक्तों को भगोड़ा घोषित किया गया—

(१) भगवती चरण लाहौर निवासी, (२) यशपाल धर्मशाला निवासी, (३) विजयकुमार सिंह (काकोरी के बन्दी राजकुमार सिंह का छोटा भाई) को बाद में पकड़ लिया गया, (४) चन्द्रशेखर आज़ाद, (५) रघुनाथ बनारस निवासी, (६) कैलाश झांसी निवासी, (७) सतगुरु दयाल अवस्थी कानपुर निवासी मई में पकड़ा गया, किन्तु जमानत देकर फिर भाग गया; (८) शिवराम राजगुरु को सितम्बर १९२६ में पूना में रिवाल्वर और कारतूस सहित गिरफ्तार किया गया। यह खेड़ा जिला पूना के निवासी महाराष्ट्रीय और ब्राह्मण क्षत्रपति वंश के राजगुरु परिवार में थे। आपका जन्म १९०६ में हुआ था। आप घर से भाग कर काशी आए और कानपुर में विस्वीदल में सम्मिलित हुए थे, (९) कुन्दनलाल को भी बाद में गिरफ्तार कर लिया गया। इस मुकदमे में निम्नलिखित सात व्यक्ति मुखबिर बन गए—

१. जयगोपाल १५ अप्रैल को लाहौर बम फैक्टरी में पकड़ा गया।

२. हंसराज बोहरा फोरमैन क्रिश्चियन कालेज लाहौर का छात्र था और ट्रेनिंग कालेज के एक प्राफेसर का पुत्र था।

३. रामसरन दास कपूरथले का निवासी था।

४. ललित कुमार मुकर्जी इलाहाबाद के एक ऐडवोकेट का पुत्र था ।

५. ब्रह्मदत्त कानपुर में पकड़ा गया था ।

६. फत्हीन्द्र नाथ घोष कलकत्ते में पकड़ा गया था । और

७. मनमोहन मुकर्जी चम्पारन का रहने वाला था ।

ऐतिहासिक अनशनों का वर्णन

भगतसिंह और दत्त को असेम्बली बम कांड के बाद दिल्ली जेल में ही जेल कर्मचारियों एवं जेल नियमों के विरुद्ध शिकायत थी । अतः उन्होंने उक्त मुकदमे के बोच में ही १५ दिन तक अनशन किया था । उस समय सरकार ने कहा था कि बगैर सजा पाये हुए व्यक्ति क़ैदियों के अधिकारों की मांग नहीं कर सकते । किन्तु जब उनको आजीवन कारावास की सजा देकर क्रमशः मियाँवाली जेल तथा लाहौर जेल में भेज दिया गया तो उन्होंने राजनीतिक क़ैदियों के अधिकार के लिये अपने २ स्थान पर १५ जून १९२६ से फिर अनशन करना आरम्भ कर दिया । इस समय पंजाब और बंगाल में ३० जून को 'सिंह-दत्त' दिवस भी मनाया गया ।

इसी बीच ६ जुलाई १९२६ को भगतसिंह को अनशन की ही दशा में मियाँवाली जेल से लाहौर सेंट्रल जेल में लाकर लाहौर षड्यंत्र केस में सम्मिलित कर दिया गया । लाहौर षड्यंत्र केस जब १० जुलाई १९२६ से आरम्भ हुआ तब भी भगतसिंह और दत्त दोनों अनशन पर थे और उनको अनशन की अवस्था में ही अदालत लाया जाता था । जब सरकार ने किसी प्रकार उनकी माँगों की ओर ध्यान नहीं दिया तो सब अभियुक्तों ने मिलकर १३ जुलाई १९२६ को अनशन करने की घोषणा कर दी । १४ तारीख को केवल सरदार भगतसिंह अदालत में लाये

गए, क्योंकि बटुकेश्वर दत्त की अवस्था उस समय बहुत खराब हो रही थी। इस समय पंजाब सरकार ने उनको मेडिकल प्राउण्ड (स्वास्थ्य के कारण) पर विशेष भोजन देना स्वीकार कर लिया था। किंतु सरदार भगतसिंह ने १४ तारीख को अदालत में उसको अस्वीकार करते हुए कहा, “हम चाहते हैं कि हमको राजनैतिक कैदी की हैसियत से विशेष व्यवहार मिले। हम इसी सिद्धान्त को कार्यरूप में परिणत करने के लिये अपने जीवन को खतरे में डाल रहे हैं।”

श्री दत्त की अनुपस्थिति के कारण अदालत बंद रहने लगी। १७ तारीख को फिर पेशी हुई। इस दिन अभियुक्तों पर कुछ नवीन सख्तियाँ की गईं। उनके हाथों में हथकड़ियाँ डाल दी गईं और दो अभियुक्तों के बीच में पुलिस वाले को बैठाया गया। इसके फलस्वरूप अभियुक्तों तथा पुलिस अफसर में कुछ गरमागर्मी भी हो गई। इस लिये अभियुक्तों ने मामले को दूसरी अदालत में ले जाने के लिये हाईकोर्ट में दरखवास्त दी। मामला फिर मुलतवी हो गया। इस समय देश में इनके स्वास्थ्य के संबन्ध में चिंता फैल गई।

उन दिनों लाहौर की दोनों जेलों में कुल तेरह अभियुक्तों अनशन कर रहे थे। बलात्पान जारी था। इनमें से कुछ व्यक्ति बलात्पान कराते समय उनका हर प्रकार से प्रतिरोध करते थे। अतः उनकी अवस्था बहुत खराब हो रही थी। २५ जुलाई को अभियुक्तों में से दो ने स्पेशल मैजिस्ट्रेट के सामने जो ब्यान दिया था, उससे पता लगता है कि उन लोगों को बलात्पान कराते समय एक २ के ऊपर सात आठ मनुष्य नियुक्त किये जाते थे। एक आदमी सर पर बैठता, दूसरा छाती पर और शेष हाथ पैर पकड़ लेते थे। इसके बाद उनकी नाक में और कभी मुँह में भी रबड़ की लम्बी नलियाँ जोर से घुसेड़ दी जातीं।

श्री । यतीन्द्रनाथ दास के एक दिन नाक और मुँह दोनों में ही नली डाली गई तो बेहोश हो गए और उनकी नाड़ी डूबने लगी । डाक्टर को उन्हें होश में लाने के लिये ब्राँडी और पिचकारी देनी पड़ी । इन बातों से तँग आकर २६ जुलाई १९२६ को मुकदमे की कार्यवाही को अनिश्चित समय के लिये रोक दिया गया ।

अब सार्वजनिक नेताओं ने इस अनशन को बंद कराने का यत्न किया । देश में उनके साथ सहानुभूति प्रकट करने के लिये उनके दिवस मनाए गए । प्रयाग में २६ जुलाई को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में अनशन का समर्थन किया गया । राष्ट्रपति पं० मोतीलाल नेहरू ने ४ अगस्त को—अनशन के ५२ वें दिन सार्वजनिक सभा में इसके लिये सरकार की निंदा की । इसके बाद पं० जवाहरलाल नेहरू लाहौर आकर सब अभियुक्तों से मिले ।

६ अगस्त को पंजाब सरकार ने एक विज्ञप्ति निकाल कर अपनी स्थिति को स्पष्ट करने का यत्न किया । किन्तु स्थिति इससे भी न सुधरी । इसके पश्चात् पंजाब के गवर्नर शिमले से लाहौर आए । वह जेल अधिकारियों से मिले, किन्तु परिणाम इसका भी कुछ न हुआ । इस समय दास की दशा बराबर खराब होती जा रही थी । ६ अगस्त को सरकार ने फिर एक विज्ञप्ति निकाल कर अपना समर्थन किया । अब भारत सरकार का आसन हिल गया । अतः उसने भी एक विज्ञप्ति निकाल कर यह वादा किया कि जेल नियमों की जाँच तथा सुधार के लिये प्रत्येक प्रान्त में समितियाँ नियुक्त की जावेंगी । बाद में अगस्त के दूसरे सप्ताह में पंजाब सरकार ने इंसपेक्टर जेनेरल लेफ्टिनेंट कर्नल बार्कर की अध्यक्षता में पंजाब जेल कमेटी बना दी । इस अनशन की

सहानुभूति में बहुतों ने अनशन किया । ३१ अगस्त को विभिन्न जेलों में अनशनकारियों की परिस्थिति यह थी—

लाहौर जेल—

(१) सरदार भगतसिंह तथा बटुकेश्वरदत्त ७८ दिन, (२) लाहौर षड्यंत्र के शेष अभियुक्त ४८ दिन, (३) बाबा सोहनसिंह (१९१४ के लाहौर षड्यंत्र के बंदी) ३३ दिन, (४) श्री० बी० के० बनर्जी (दक्षिणेश्वर बम कांड) ३२ दिन, (५) सरदार उज्ज्वल-सिंह २६ दिन, (६) श्री० रतनचन्द (मार्शल लॉ के क़ैदी) २६ दिन ।

फिरोजपुर जेल—

(१) पं० जगताराम ३२ दिन ।

मियाँवाली जेल—

(१) भाई अरोड़ासिंह ३६ दिन, (२) श्रीकबूलसिंह ४१ दिन, (३) लाला रामचन्द्र २८ दिन, (४) मौलवी अहमद दीन २८ दिन, और (५) श्री गोपालसिंह क़ौमी २८ दिन ।

बारीसाल जेल—

(१) श्री सतीन्द्रनाथ सेन २८ दिन, (२) श्री उपेन्द्रनाथ गुह २८ दिन, (३) श्री एस० सी० दास २६ दिन, (४) श्री सतीन्द्र-नाथ विश्वास २६ दिन, (५) श्री फणिभूषण चटर्जी २६ दिन, (६) श्री बी० के० मिश्र २६ दिन ।

रायपुर (मध्य प्रान्त) जेल—

(१) सरदार करतार सिंह २८ दिन, (२) सरदार ज्वाला सिंह २८ दिन, (३) सरदार रणधीरसिंह २८ दिन ।

इनके अतिरिक्त इधर-उधर और भी इक्के दुक्के अनशन हो रहे थे ।

यतीन्द्रनाथ दास का आत्म-बलिदान

अगस्त के महीने में जेल जांच के एक सदस्य तथा अन्य नेताओं ने अभियुक्तों से भेंट की। २१ अगस्त को इन्स्पेक्टर जनरल ने अभियुक्तों से कहा कि 'मैं जेल जांच कमिटी का प्रधान हूँ। तुम्हारी शिकायतों को दूर कर दूँगा। तुम अनशन त्याग दो।' किन्तु उन्होंने समझौता होने तक अनशन तोड़ने से इंकार कर दिया। किन्तु जेल जांच कमिटी के सदस्य अभियुक्तों से बार बार मिल कर अनशन तुड़वाने में सफल हो ही गए और २ सितम्बर को संध्या समय श्री यतीन्द्रनाथ दास के अतिरिक्त लाहौर षड्यंत्र के सभी कैदियों ने अनशन तोड़ दिया। इस उपसमिति ने दास को अनशन न तोड़ते देख कर सरकार से सिफारिश की कि दास छोड़ दिये जावें।

इस समय दास के जीने की आशा नहीं रही थी। उनके रक्त का दौरा केवल हृदय के आस-पास ही होता था और सब अंग लगभग निर्जीव हो गए थे। दृष्टि-शक्ति क्षीण हो गई थी। उनके छोटे भाई को उनकी परिचर्या करने की अनुमति दे दी गई थी। इस समय सरकार ने दास को जमानत पर छोड़ना स्वीकार कर लिया, किन्तु उन्होंने जमानत पर छूटने से इन्कार कर दिया। उनके पिता ने भी पुत्र को जमानत पर न छूटने की ही सम्मति दी।

परिस्थिति इस प्रकार बिगड़ती देख कर भगतसिंह, दत्त, अजयकुमार घोष, विजयकुमारसिंह, जितेन्द्रनाथ सान्याल, किशोरी लाल और शिववर्मा ने ६ सितम्बर से दुबारा अनशन प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने जेल कमिटी को एक पत्र लिख कर अपनी पुरानी मांगों के साथ श्री दास को तुरंत रिहा कर देने की मांग उपस्थित की। इसके अतिरिक्त उन्होंने सरकार पर प्रतिज्ञाभंग का दोष भी लगाया।

जब सरकार ने देखा कि दास या उनके सम्बन्धी जमानत नहीं देंगे तो उसने कोई अन्य दो व्यक्ति खड़े करके उनसे जमानत दिला कर दास को छोड़ने की आज्ञा दी। किन्तु दास ने इस प्रकार छूटना भी स्वीकार न किया। इधर अन्य अनशनकारियों की दशा भी बिगड़ने लगी। शिववर्मा को बलात् पान कराते समय रक्त की वमन हुई और उसकी नाड़ी एक दम गिरने लगी। विजयकुमारसिंह, अजय घोष तथा किशोरीलाल की भी यही दशा हुई।

इस समय दास मृत्यु-शय्या पर थे। उनकी लाश को कलकत्ते ले जाने के लिये श्री सुभाषचन्द्र बोस ने ३००) भेज दिये थे। किन्तु इधर बम्बई वाले तो इधर पंजाब वाले भी इस खर्च को स्वयं देने पर तुले हुए थे।

हंगर स्ट्राइक बिल

इधर सरकार भी अपनी जिद पर अड़ी हुई थी। वह अनशनकारियों की मांग पर विचार न कर मुकदमा चलाने पर तुली हुई थी। अतः भारत सरकार के तत्कालीन होम मेम्बर सर जेम्स क्रैरार ने केन्द्रीय व्यवस्थापिका असम्बली के शिमला अधिवेशन में हंगर स्ट्राइक बिल या 'अनशन बिल' नाम से एक बिल पेश किया। उसमें १८६८ की जान्ता फौजदारी की दफा ५४० ए० में इतना सुधार करने का प्रस्ताव किया गया कि यदि मुकदमा चलते समय कोई अभियुक्त इच्छापूर्वक ऐसा कार्य करे जिस से वह अदालत जाने में असमर्थ हो जावे, तो उसकी अनुपस्थिति में भी मुकदमा चल सके। यह बिल १२ सितम्बर १९२६ को पेश किया गया। इस बिल का असम्बली में बड़ा भारी विरोध किया गया। मि० जिन्ना तक ने इसका विरोध किया।

इधर इस बिल पर बहस हो ही रही थी कि उधर १३ सितम्बर को दोपहर १ बजे यतीन्द्रनाथ दास का बोस्टल जेल में ६२ अनशनों के बाद स्वर्गवास हो गया। दास का शव लाहौर से कलकत्ता लाया गया, जहां उसका इतना अधिक स्वागत हुआ कि वह भी भारत के राजनैतिक इतिहास की अद्भुत घटना बन गया। १४ सितम्बर को शहीद यतीन्द्र नाथ दास की स्मृति में सारे देश में हड़ताल मनाई गई।

इस समय लाहौर षड्यंत्र के अन्य अभियुक्तों ने राज-बंदियों के कष्टों की जांच के आश्वासन पर ११५ दिन बाद अनशन तोड़ दिया और होम मेम्बर सर जेम्स क्रोरर ने भी १६ सितम्बर १९२६ को उक्त बिल को वितरित करने का प्रस्ताव करके अनशन बिल को एक तरह से वापिस ले लिया।

क्रमशः अभियुक्तों में शक्ति आने लगी और सितम्बर १९२६ से मुकदमा फिर नियमपूर्वक चलने लगा। किन्तु अभियुक्तों की अदालत, पुलिस और जेलवालों से अब भी कशमकश चलती ही रही। २२ अक्टूबर १९२६ को एक मुखबिर ने बयान देते समय अभियुक्तों को अपमानित करने का कुछ प्रयत्न किया। इस पर एक अभियुक्त ने उत्तेजित होकर इसकी ओर जूता फेंका। इस पर अदालत ने आज्ञा दी कि अभियुक्तों के जेल से बाहिर आने पर और अदालत में भी हाथों में हथकड़ियां डाल दी जाय करें। फलतः सब के अदालत में ही हथकड़ी डाल दी गई, विरोध करने पर उन्हें मैजिस्ट्रेट के सामने ही कुत्ते की तरह घसीटा गया।

इसके पश्चात् पुलिस अधिकारियों ने ३०० जवानों के साथ जेल में उनके साथ अत्यन्त लज्जाजनक व्यवहार किया। दूसरे दिन २२ अक्टूबर को भगतसिंह ने मैजिस्ट्रेट से शिकायत की कि उसके साथ जेल में दुर्व्यवहार किया गया। दत्त ने शिका-

बत की कि पुलिस ने उसके सीने पर ठोकर मारी। एक अन्य अभियुक्त ने कहा 'हमें बुरी तरह बेतों से पीटा गया है। हममें से अनेकों के पाखाने के मुकाम में डंडे डाले गए हैं। हमारे कई साथी इतनी बुरी तरह से घायल हुए हैं कि वह उठ नहीं सकते और अस्पताल में पड़े हैं।' किंतु मैजिस्ट्रेट ने इन बातों को टाल दिया और हथकड़ियां लगे ही लगे मुकदमा चलता रहा। इधर यह मुकदमा चल रहा था, उधर भगतसिंह और दत्त की असेम्बली बम कांड के मुकदमे की अपील लाहौर हाई कोर्ट में पेश थी, जो १३ जनवरी १९३० को अस्वीकृत कर दी गई।

१७ जनवरी १९३० को भगतसिंह, दत्त और कुन्दन लाल के अतिरिक्त शेष १५ अभियुक्तों ने जमानत की दख्वास्त दी। दख्वास्त में जमानत के कारणों में सफाई की सुविधा, पुलिस तथा जेल वालों का दुर्व्यवहार और अदालत की घटना के लिये जेलर द्वारा दंड दिया जाना बतलाया गया। किन्तु इन लोगों की यह दख्वास्त भी अस्वीकार कर दी गई।

भगतसिंह आदि का अन्तिम अनशन

अब शिकायतें काफी जमा हो गई थीं। उधर जेल कमैटी के कारण भी इनको कुछ सुविधा नहीं मिली थी। अतः भगतसिंह ने २८ जनवरी १९३० को होम मेम्बर के पास भेजने के लिये मैजिस्ट्रेट को एक पत्र दिया। पत्र में अपनी पुरानी मांगों को फिर उपस्थित करके कहा गया था कि पत्र का सात दिन तक उत्तर न आने पर हम लोग फिर अनशन करेंगे। किन्तु होम मेम्बर का उत्तर नहीं आया और ४ फरवरी १९३० को लगभग सभी अभियुक्तों ने फिर अनशन करना आरम्भ कर दिया, जिससे मुकदमे को ८ फरवरी से ८ मार्च तक फिर रोकना पड़ा। इस मुकदमे में सरकार को कुल ६०७ गवाह सुनाने थे, जिनमें से

(२६३)

वह इस नौ माह की कशमकश के समय में कुल २३० गवाह ही सुना सकी थी। इन लोगों की सहानुमति में ८ फरवरी १९३० से बरेली जेल में काकोरी के 'दी राजकुमार सिंह, शचीन्द्र नाथ बख्शी, मुकन्द लाल गुप्त तथा मन्मथ नाथ गुप्त ने भी अनशन आरम्भ कर दिया। बरेली जेल वालों का यह अनशन ५२ दिन के बाद विजय प्राप्त होने पर ही टूटा।

भगतसिंह आदि के इस अनशन के विरुद्ध सरकार ने खूब प्रचार किया, जिससे भगतसिंह और दत्त ने ११ फरवरी १९३० को अपने मुकदमे के स्पेशल मैजिस्ट्रेट को लाहौर जेल के सुपरिंटेंडेंट की मार्फत निम्न आशय का पत्र भेजा—

“आपकी ४ फरवरी १९३० की उस आज्ञा के सिलसिले में जो ६ फरवरी १९३० के ‘सिविल एंड मिलिटरी गजट’ में छपी है यह आवश्यक जान पड़ता है कि हम लोग अदालत न आने के कारणों पर प्रकाश डालें। हमने ब्रिटिश अदालतों का बहिष्कार नहीं किया है। हम मिस्टर लेविस की अदालत में जा रहे हैं, जो आपकी अदालत के २६ जनवरी १९३० के हमारे आचरण का मुकदमा जेल ऐक्ट की दफा ३२ के अनुसार कर रहे हैं। आपके सामने हम अपने कष्टों को जमानत की दूर्वास्त के अतिरिक्त अन्य अनेक अवसरों पर रख चुके हैं, जिनके विषय में कभी कोई सुनवाई नहीं की गई। अभियुक्तों के अनेक प्रान्तों का निवासी होने के कारण उनको मुलाकात की सुविधा मिलनी आवश्यक है। बी० के० दत्त श्रीमती लज्जावती से और कमल नाथ त्रिवेदी श्रीमती पारवती देवी से मिलना चाहते थे। किन्तु उनको सम्बन्धी या वकील न होने के कारण मुलाकात की अनुमति नहीं दी गई। बाद में उनको ऐटॉर्नी के अधिकार दिये जाने पर भी नहीं मिलने दिया गया, जिससे सफाई के कार्य में बाधा पड़ी।

‘मैं स्वयं किसी वकील को पूरे समय के लिये नहीं रख सकता। अतः मैं चाहता था कि मेरे आदमी मुकदमे के समय उपस्थित हो कर कार्यवाही देखा करें। किन्तु मेरे आदमियों को अनुमति न देकर लाला अमर दास को बिना स्पष्ट कारण के ही अदालत में स्थान दिया गया। इस प्रकार न्याय के नाम पर इस न्याय के नाटक का किया जाना हमको पसंद नहीं है।

‘तीसरी शिकायत समाचारपत्र न मिलने के विषय में है। विचाराधीन कैदियों के साथ जेल प्राप्त कैदियों जैसा व्यवहार नहीं किया जा सकता। उनको कम से कम एक दैनिक पत्र मिलना ही चाहिये। अधिकारी लोग एक दैनिक पत्र केवल अदालत में ही देने को सहमत हो गए हैं। किन्तु हम अङ्गरेजी न जानने वाले अभियुक्तों के लिये देशी भाषा का दैनिक पत्र चाहते हैं। अतएव हम प्रतिवादस्वरूप ‘दैनिक ट्रिब्यून’ को भी वापिस कर रहे हैं। इन्हीं कारणों से हमने २६ जनवरी को अदालत में न आने की घोषणा की थी। इन कष्टों के दूर होते ही हमको अदालत आने से कोई इन्कार न होगा।”

किन्तु उन लोगों के इस पत्र पर भी कोई सुनवाई न की गई और उन लोगों का अनशन चलता ही रहा।

स्पेशल ट्रिब्यूनल में मुकदमा

१ मई १९३० को भारत सरकार ने राजट में ‘लाहौर कांस्प रेसी केस आर्डिनैस’ प्रकाशित किया। इसके अनुसार मुकदमा श्रीकृष्णसिंह मैजिस्ट्रेट के पास से हटाकर सेशन सुपुर्द कर दिया गया। यह व्यवस्था की गई कि सेशन के स्थान पर इस मुकदमे का विचार तीन जजों का एक स्पेशल ट्रिब्यूनल करे, जिसे लाहौर हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस नियुक्त करें। इस प्रस्तावित ट्रिब्यूनल को अभियुक्तों की अनुपस्थिति में भी मक-

दमा करने का अधिकार दिया गया। ट्रिब्यूनल के निर्णय को अन्तिम निर्णय करके यह घोषित किया गया कि उसकी अपील न हो सकेगी। बाद में इस ट्रिब्यूनल में मिस्टर जस्टिस हिल्टन, मिस्टर जस्टिस टैप और सर अब्दुल कादिर को रखा गया। स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने जाने पर वटुकेश्वर दत्त के ऊपर से मुकदमा उठा लिया गया। अभियुक्त लोग अदालत में नहीं आते थे। अतएव ट्रिब्यूनल ने उनकी अनुपस्थिति में ही मुकदमा करना आरम्भ किया।

जुलाई १९३० के मध्य में जेल कमैटी ने अपनी सिफारिशों में कैदियों का वर्गीकरण करके ए० बी० और सी० श्रेणियां बनाईं। राजनैतिक कैदियों को ए० और बी० श्रेणि में रखने का निश्चय किया गया। इस निर्णय से संतुष्ट हो कर लाहौर षड्यंत्र के अभियुक्तों ने २० जुलाई १९३० को अपना अनशन खोला।

प्रथम लाहौर षड्यंत्र के मुकदमे का निर्णय

इस के बाद मुकदमे में फिर कोई उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। स्पेशल ट्रिब्यूनल ने इस मुकदमे का फैसला ७ अक्टूबर १९३० को बोस्टल जेल में सुनाते हुए भगतसिंह, शिवराम राज-गुरु और सुखदेव को फांसी का दण्ड दिया। किशोरी लाल, महावीरसिंह, विजय कुमारसिंह, शिव वर्मा, गया प्रसाद, जय-देव और कमल नाथ त्रिवेदी को आजन्म कालेपानी का दण्ड दिया; कुन्दन लाल को सात वर्ष और प्रेम दत्त को पांच (तीन) वर्ष का कठोर कारावास दिया। ट्रिब्यूनल ने अजय कुमार घोष, जितेन्द्रनाथ सान्याल और देसराज को इस कारण छोड़ दिया कि उनके विरुद्ध मुखबिरों के अतिरिक्त और किसी की गवाही नहीं थी। ट्रिब्यूनल ने मुखबिर ब्रह्मदत्त और राम सरन पर

नए सिरे से मुकदमा चलाने की आज्ञा दी, क्योंकि उन्होंने आरम्भ में दिये हुए बयानों को बाद में बदल दिया था। यह फैसला ४०० फुलिस्केप पृष्ठों का था और २२५) रुपये में मोल को मिलता था।

भगतसिंह आदि को फांसी का दंड दिये जाने के विरुद्ध लाहौर, बम्बई, देहली, इलाहाबाद, अमृतसर तथा अन्य अनेक स्थानों में हड़तालें हुई और प्रदर्शन किये गए।

लाहौर में तो विद्यार्थियों और महिलाओं ने हड़ताल न करने वाले कालेजों पर धरना दिया, जिससे सात महिलाएं तथा बीस विद्यार्थी गिरफ्तार किये गए। यह सब डी० ए० वी० कालेज में हुआ। विद्यार्थियों ने एक प्रस्ताव पास करके पुलिस के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही करने का निश्चय किया। बम्बई में तो स्कूल, कपड़े की मिलें, डाकखाने और ट्रामवे तक बन्द रहीं।

इधर पंजाब में सन् १९३० में भगतसिंह आदि का मुकदमा चल रहा था तो देश में भी सत्याग्रह संग्राम बड़े जोर-शोर से चल रहा था। इस समय नमक कानून भंग, विदेशी वस्त्र और शराब पर धरना तथा जंगल सत्याग्रह आदि का जोर सारे भारतवर्ष में था। इधर आतंकवादी लोग भी जोर पकड़े हुए थे।

यद्यपि लाहौर कांस्परेसी केस आर्डिनेंस के अनुसार उसके फैसले की अपील नहीं हो सकती थी, किन्तु ट्रिब्युनल तथा आर्डिनेंस की मियाद केवल छै मास होने के कारण इस मुकदमे की अपील प्रीवी कौंसिल में करने की अनुमति दे दी गई, जहां वह ११ फरवरी को अस्वीकार कर दी गई।

गांधी-इर्विन पैक्ट

इस लाहौर षड्यंत्र के निर्णय के ५ दिन बाद ही तारीख १२

दिसम्बर १९३० को लंदन में भारतीय शासन पर विचार करने के लिये प्रथम बार राउण्ड टेबिल कांफ्रेंस हुई। किन्तु कांग्रेस के बहिष्कार के कारण उक्त कांफ्रेंस को कुछ भी महत्व प्राप्त न हो सका और कांग्रेस तथा आतंकवादियों का घनघोर युद्ध भारत सरकार के साथ चलता रहा। १६ जनवरी १९३१ को राउण्ड टेबिल कांफ्रेंस में इंग्लैंड के प्रधानमंत्री ने घोषणा की कि राउण्ड टेबिल कांफ्रेंस के परिणामस्वरूप औपनिवेशिक स्वराज्य तक दिया जा सकता है। किन्तु इसके लिये कांग्रेस का सहयोग आवश्यक है। प्रधानमंत्री की घोषणा के अनुसार २५ जनवरी को कांग्रेस कार्यसमिति पर प्रतिबंध हटाकर उसके महात्मा गांधी आदि सदस्यों को छोड़ कर संधि के लिये वातावरण तैयार किया गया; जिसके परिणामस्वरूप तारीख १६ फरवरी से महात्मा गांधी और वायसराय लार्ड इर्विन की संधि की बात-चीत देहली में आरम्भ हुई, जिसके फलस्वरूप ४ मार्च १९३१ को एक समझौता हो गया।

भगतसिंह आदि की फांसी

इस समय महात्मा गांधी ने वायसराय से अनुरोध किया कि सविनय अवज्ञा के कैदियों के अतिरिक्त भगतसिंह, सुखदेव राजगुरु और शिववर्मा को भी छोड़ दिया जावे, अथवा कम से कम उनके फांसी के दण्ड को बदल दिया जावे। क्योंकि इन लोगों को फांसी का दण्ड देने से देश में बड़ी हलचल मच रही थी। किंतु वायसराय ने इस संबंध में केवल इतना ही कहा कि मैं पंजाब सरकार से कहूँगा। इधर गांधी-इर्विन समझौता हुआ, उधर करांची में २६ मार्च से कांग्रेस होने वाली थी। वायसराय ने भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु की दया प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया, जिससे उन तीनों के संबंधियों को

ता० २३ मार्च १९३१ को उनसे अन्तिम बार भेट करने का निमंत्रण दिया गया। उन तीनों को उसी दिन सायंकाल ७॥ बजे फांसी दे दी गई। फांसी से कुछ पहिले भगतसिंह अपनी कोठरी में बैठे हुए ऊंचे स्वर से यह पद गा रहे थे—

मेरा रंग दे बसंती चोला,
इसी रंग में रंग के शिवा ने
मां का बंधन खोला।'

सरकार उनके शवों के जुलूस एवं प्रदर्शन से इतना घबराती थी कि उसने उनका स्वयं सतलज के किनारे पर गुपचुप रूप से अग्निसंस्कार कर दिया। इस संबन्ध में सरकार की बहुत निन्दा की गई। उस पर यहां तक आरोप लगाया गया कि उसने शवों को बड़े बे-परवाही से मिट्टी का तेल छिड़क कर जलवा दिया। उनके शवों के जल जाने पर सरकार ने उनके फूल तक उनके संबंधियों को न देकर सतलज में स्वयं ही डलवा दिये।

इन लोगों को फांसी देने के समाचार से शहर में उसी समय मुकम्मिल हड़ताल हो गई। इस समय बम्बई और मद्रास में भी भारी हड़ताल रही। कलकत्ते की हड़ताल में तो अशांति के चिह्न भी देखने में आये, जिससे सेना को शहर में घुमाना पड़ा।

कराची कांग्रेस का प्रस्ताव

कराची कांग्रेस में जो लोग इन तीनों युवकों की जान बचाने के गांधीजी के व्यक्तिगत प्रयत्न की अभीतक प्रशंसा कर रहे थे, अब इस बात पर बहुत नाराज हो रहे थे। यह बात आज तक भी तय नहीं हुई है कि कराची में भगतसिंह संबंधी प्रस्ताव लोगों को अधिक खींच रहा था, अथवा गांधी-इर्विन समझौते वाला प्रस्ताव। कांग्रेस ने इस संबन्ध में एक प्रस्ताव

द्वारा भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु की वीरता की प्रशंसा करते हुए उनको फांसी देने के लिये सरकार की बड़े प्रबल शब्दों में निन्दा की। इस प्रस्ताव के आरम्भ में 'प्रत्येक प्रकार की राजनीतिक हिंसा से अपने आपको अलिप्त रखते हुए' शब्द जोड़ कर कांग्रेस के अहिंसावाद की नीति से न हटने को भी स्पष्ट कर दिया गया। इस प्रकार केन्द्रीय असेम्बली में आरंभ हुआ भगतसिंह अध्याय कराची कांग्रेस में नियमित रूप से समाप्त हो गया।

भगतसिंह आदि को २३ मार्च १९३१ को फांसी दी जाने के समाचार से भारत के लगभग सभी नगरों में २४ मार्च को हड़ताल हुई। इस समय कानपुर की हड़ताल में कुछ मुसलमानों की दूकानें खुलने के कारण उनका कांग्रेस स्वयंसेवकों से भगड़ा हो गया। उपद्रव यहां तक बढ़ गया कि लोगों ने केरेंसी दफ्तर, तारघर और कचहरी पर भी धावा बोल दिया। इस समय हिंदू और मुसलमानों ने मस्जिदों और मंदिरों पर धाव करके पूर्ण क्रूरता का परिचय दिया। इसी दंगे में अद्वेय गणेशशंकर विद्यार्थी भी काम आये। कहा जाता है कि इस दंगे में कम-कम २५० मरे, ५०० घायल हुए और ५०० मकान फूंक डाले गये और २००० लूट लिये गये। दंगाइयों ने मासूम बच्चों तक को न छोड़ा।

सरदार भगतसिंह आदि की लाशें किस तरह जलाई गईं?

सरदार भगतसिंह आदि के शव दाह के विषय में जांच करने के लिए कांग्रेस की ओर से जो कमिटी नियुक्त की गई थी, उसने लाजपतराय हॉल में १२वीं अप्रैल से बयान लेना शुरू किया। १२वीं अप्रैल को बयान शुरू होने के पहले डाक्टर सत्यपाल ने बताया कि हमने पञ्जाब-सरकार के चीफ

सेक्रेटरी से इस जाँच में सहायता देने का अनुरोध किया था, पर वहाँ से जवाब मिला, कि सरकार इस मामले की जाँच कर चुकी है और उसका नतीजा भी प्रकाशित कर दिया गया है ; इसलिए अब वह और किसी जाँच में सहायता देना नहीं चाहती । इसके बाद फीरोजपुर कांग्रेस कमिटी के मन्त्री श्री० पृथ्वीचन्द वकील, मि० शफाअतुल्ला, श्रीमती पार्वती देवी और श्रीमती सौधी की गवाहियाँ हुईं ।

श्री पृथ्वीचन्द वकील का बयान

श्री पृथ्वीचन्द ने अपने बयान में कहा, कि २४ मार्च को सवेरे ८ बजे मुझे मालूम हुआ, कि सरदार भगतसिंह आदि की लाशें, सतलज के किनारे, पुराने पुल के पास, जलाई गई हैं । मैंने पृथ्वीराम और जगन्नाथ को इस समाचार की सच्चाई की जाँच करने को कहा । उन्होंने सवा नौ बजे वापस आकर कहा, कि खबर ठीक है । उन्होंने यह भी कहा, कि उस जगह से मिट्टी के तेल की बू आ रही है और जमीन अभी तक गरम है । सवा दस बजे के करीब एक सिकख ठेकेदार ने भी आकर कहा कि रात ही को वहाँ लाशें दफना दी गईं और जमीन से अभी तक मिट्टी के तेल की बू आ रही है ।

थोड़ी देर बाद मुझे मालूम हुआ कि सरदार भगतसिंह और उनके साथियों के रिस्तेदार मौके पर आए हैं । कुछ मित्रों के साथ मैं भी वहाँ पहुँचा । मैंने देखा, कि जहाँ लाशें दफनाई गई थीं, वहाँ से फिरोसिन तेल की गन्ध आ रही थी । कुछ अधजले कोयले के टुकड़े भी वहाँ पर पड़े हुए थे । मैंने महरचन्द फोटोग्राफर को बुलाकर उस स्थान का फोटो खिंचवा लिया । एक आदमी ने, जिसका नाम कृपाराम है, मुझे एक अधजला मांस का टुकड़ा दिखाया । वह अठन्नी के बराबर था और

आध इञ्च के करीब मोटा था। उसने कहा कि चींटियाँ उस टुकड़े को घसीट कर ले जा रही थीं। वहाँ मुझे यह भी मालूम हुआ, कि वहाँ एक कटी हुई हड्डी मिली थी, जिसे भगतसिंह के घर वाले ले गए।

छुट्टी के दिन हम लोग फिर उस स्थान पर गये। खॉ शफ़ाअतुल्ला ने चिता-स्थान से करीब ३० कदम के फासले पर एक जगह दिखाई, जहाँ दाह-क्रिया के दूसरे दिन उसने खून देखा था। हम लोगों को वहाँ कुछ कङ्कड़ मिले, जिन पर खून लगा हुआ था। वे कङ्कड़ फ़ीरोज़पुर में मेरे पास रखे हुए हैं। पचास-साठ कदम के फासले पर एक भोपड़ी थी, जिसमें भोपड़ी वाले के सिवा एक और आदमी था। भोपड़ी वाले को कुछ मालूम न था, किन्तु उस दूसरे आदमी ने कहा, कि दाह-स्थल के पास एक जगह उसने खून गिरा हुआ देखा था। रेलवे-फाटक पर उस समय मौजूद, एक आदमी से पूछने पर उसे मालूम हुआ कि रात को ४-५ लारियाँ वहाँ आई थीं, जिनमें अधिकतर अङ्गरेज थे। एक पर डेढ़-दो मन लकड़ा और मिट्टी के तेल के कनस्तर भी थे।

रायज्जादा हंसराज के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि जहाँ दाह-क्रिया की गई थी, वहाँ तीन अर्थियाँ अलग-अलग रख कर नहीं जलाई जा सकती थीं। अगर ऐसा किया जाता, तो पास वाली भोपड़ियों तक आग का असर जरूर पहुँचता और एक भाड़ी तो जल ही जाती।

मौलवी शफ़ाअतुल्ला का बयान

मौलवी शफ़ाअतुल्ला ने कहा, कि मैं एक सभा में भाषण दे रहा था, कि कृपाराम ने मुझे मांस का टुकड़ा और दूसरे कई लोगों ने हड्डियाँ दिखाईं। मैंने उपस्थित लोगों को वे चीजें

दिखा दीं। २५ तारीख को सबेरे मैं उस स्थान पर गया, जहाँ लाशें जलाई गई थीं। वह जगह रस्सी से घेर दी गई थी, जिसमें लोग जूते पहन कर उस पर न जायँ। उस घेरे के अंदर ३-४ फुट ऐसी जगह थी, जहाँ से किरोसिन तेल की बूँद आ रही थी। खुरेदने से, वहाँ हड्डी के छोटे-छोटे टुकड़े निकलते थे। मेरे सामने वह जगह खोदी गई। उसमें से हड्डी के टुकड़े और अध-जले कोयले निकले। उनसे मिट्टी के तेल की बूँद आ रही थी। वहाँ से कोई दो सौ गज के फासले पर एक जगह खून लगे हुए कंकड़ पड़े थे। मेरे साथियों ने उन्हें चुन लिया।

हमें मालूम हुआ, कि पुलिस वाले कसूर से ग्रन्थी और आचार्य लाये थे। वहाँ जाकर तलाश करने पर हमें जगन्नाथ आचार्य मिल गया, पर ग्रन्थी नहीं मिला। उसने साथ चलकर वह जगह दिखाई, जहाँ लाश जलाई गई थीं। उसने कहा कि तीनों लाशें एक-एक बलिशत के फासले पर रक्खी गई थीं। वह इससे अधिक कुछ नहीं बतला सका। कसूर में खोज करने पर मालूम हुआ, कि डिप्टी-पुलिस सुपरिण्टेंडेंट शिवदर्शन सिंह ने २३ मार्च की शाम को, एक दूकान से ४ टिन मिट्टी का तेल खरीदा था। डॉक्टर सत्यपाल की जिरह में गवाह ने कहा, कि जाँच करते समय कोई ऐसा आदमी नहीं मिला, जिसने लाशों को कटते हुए देखा हो।

श्रीमती पार्वती देवी का बयान

श्रीमती जी ने कहा, कि २४ मार्च को मैं सरदार भगतसिंह की बहिन और दूसरी कई स्त्रियों के साथ, सतलज के किनारे उस स्थान पर गई, जहाँ भगतसिंह आदि को लाशें जलाई गई थीं। मुझे वह जगह मालूम न थी। मैं लोगों से पूछताछ कर ही रही थी, कि इतने में मेरा पाँव एक ऐसी जगह जा पड़ा, जहाँ

की ज़मीन गरम थी। वहाँ से मिट्टी के तेल की सख्त बू आ रही थी। मैंने उस स्थान को खुरेदा तो कई छोटे-छोटे मांस के टुकड़े मिले। एक टुकड़ा अब भी मेरे पास है। श्रीमती सौधी ने भी श्रीमती पार्वती देवी के बयान का समर्थन किया।

फ़िरोज़पुर में जाँच कमिटी

१५वीं अप्रैल को, जाँच-कमिटी फ़िरोज़पुर पहुँची। वहाँ जाते समय सदस्यगण दाह-स्थान देखने के लिये भी गये। आज वह स्थान नहीं पहचाना जाता था, बालू से स्थान बराबर कर दिया गया था और स्वयंसेवकों द्वारा बनाया हुआ घेरा भी तोड़ डाला गया था। दो खुफ़िया पुलिस के आदमी थोड़ी दूर से उस स्थान की निगरानी कर रहे थे। सड़क के दूसरी ओर करीब एक फ़र्लाङ्ग की दूरी पर तीन खीमे गड़े हुए थे, जिसमें १ दर्जन से अधिक पुलिस के सिपाही बैठे थे। ज़मीन के बराबर किये जाने के सम्बन्ध में पूछने पर सी० आई० डी० वालों ने अपनी अनभिज्ञता जतलाई।

फ़िरोज़पुर में गवाहियां लेने पर, फोटोग्राफ़र लाला मेहरचन्द, जिन्होंने दाह-स्थान का फोटो लिया था, और कृपाराम नामक एक दूकानदार ने पिछले बयानों का समर्थन किया। कृपाराम ने कमिटी के सामने एक बोतल पेश की, जिस में चिता-स्थान पर पाया गया मांस का एक टुकड़ा रक्खा गया था। टुकड़े का वजन १ छटांक के लगभग था।

हरवंशलाल नामक एक मोटर-ड्राइवर ने कहा, कि कृपाराम ने उसके सामने मांस का टुकड़ा चिता-स्थान पर पाया था। गवाह ने उससे एक छोटा सा टुकड़ा ताबीज़ बनाने के लिए लिया।

नौजवान भारत-सभा के अध्यक्ष महाशय अमरनाथ ने कहा,

कि उन्हें उस स्थान पर कुछ जली हुई हड्डियाँ मिलीं। गवाह ने हड्डियों को कमिटी के सामने पेश भी किया।

पं० चिरञ्जीलाल ने भी मांस का एक टुकड़ा कमिटी के सामने पेश किया।

फ़िरोज़पुर के लाला मुकुन्दलाल, एडवोकेट ने कहा कि दाह-स्थान ४ वर्ग फ़ुट से ज्यादा न होगा। इतने सङ्कीर्ण स्थान में तीन लाशें अलग-अलग नहीं जलाई जा सकती थीं। उन्होंने कहा कि ज्ञान पड़ता है, कि लाशों के जलने में काफ़ी लकड़ी का व्यवहार नहीं किया गया था, और हिन्दू या सिक्ख किसी की भी लाश क़िरोसन के तेल से जलाना धर्म के विरुद्ध है। मौलवी मुहम्मदहुसैन, दीवान दुर्गाप्रसाद, बाबा चरणसिंह, आदि वकीलों ने भी, जिन्होंने इस विषय की पूरी जाँच की थी, उक्त बयानों का समर्थन किया। डॉ० सत्यपाल के प्रश्न का उत्तर देते हुए मौलवी मुहम्मदहुसैन ने कहा, कि लाशों के काटे जाने की बात उन्होंने सुनी है, किन्तु इस विषय का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण उनके पास नहीं है।

ग्रन्थी ने क्या किया ?

सरदार लाभसिंह ने कसूर में कमिटी के सामने अपना बयान देते हुए कहा कि नत्थासिंह ग्रन्थी ने उससे कहा कि २३ वीं मार्च की रात को वह बड़ी मुश्किल में पड़ा था। ग्रन्थी ने गवाह को बतलाया कि २३ वीं मार्च की शाम को, ७ बजे के लग-भग एक पुलिस का आदमी उसके पास आया और पुलिस के डिप्टी-सुपरिण्टेण्डेण्ट सुदर्शनसिंह के पास चलने को कहा। पुलिस के सिपाही ने कहा कि 'अखण्ड पाठ' के लिये ग्रन्थी की आवश्यकता है। वहाँ पहुँचने पर ग्रन्थी से कहा गया कि 'गण्डा-सिङ्ग वाला में पाठ की ज़रूरत है। इसके बाद आचार्य जगन्नाथ

के साथ ग्रन्थी गण्डासिङ्ग वाला लाया गया। उन लोगों के साथ किरासिन तेल के ३ कनस्तर भी लाए गए। पुलिस के कुछ अफसर और कुछ कॉन्स्टेबल भी उनके साथ थे। गण्डासिङ्ग-वाला स्टेशन पहुँचने पर उन्हें एक लारी मिली।

लाहौर से भी लारियाँ आईं

इसके बाद लाहौर की ओर से भी ४ लारियाँ आईं। एक लारी से पुलिस के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट अमरसिंह उतरे और वे ग्रन्थी की लारी में जा बैठे। उनकी आज्ञानुसार लारी पुराने पुल के पास लाई गई। अन्य लारियाँ भी यहीं आकर खड़ी हुईं। अमरसिंह ने ग्रन्थी और आचार्य से कहा, कि उनके साथ एक सिक्ख और दो हिन्दुओं की लाशें हैं, जिन्हें वे जलाना चाहते हैं। ग्रन्थी और आचार्य को उन मृतकों के नाम नहीं बतलाये गये। किन्तु तो भी ग्रन्थी को सन्देह हुआ कि ये लाशें भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव की हैं। जब टार्च की सहायता से उसने लाशों को देखा तो मालूम हुआ कि मृतकों के मुँह और नाक से खून बह रहा है। एक पुलिस कॉन्स्टेबल ने लाशों की पोशाक को फाड़ डाला और स्नान कराकर कपड़े में उन्हें लपेटा, और एक ही चिता पर तीनों लाशों को रख दिया। लाश के ऊपर और नीचे लकड़ियाँ रखी हुई थीं। चिता पर मिट्टी का तेल डाल दिया गया। तब ग्रन्थी और आचार्य से अन्तिम संस्कार करने के लिए कहा गया। उन्होंने मिट्टी के तेल की सहायता से आग लगा दी। इसके बाद उनसे लारी में चले जाने के लिये कहा गया। लारी में आकर वे क़रीब ढाई घण्टे तक पुलिस वालों की इन्तज़ारी में बैठे रहे। इतनी देर के बाद चिता पर पानी डाल दिया गया और कूदाली से भस्म, हड्डी आदि वस्तुओं को इकट्ठा कर कम्बलों में बाँधा गया और नदी

में छोड़ दिया गया। इसके बाद ग्रन्थी और आचार्य कसूर लाये गए। वे साढ़े पाँच बजे सुबह कसूर पहुँचे।

सिक्खों का अन्तिम संस्कार

गवाह ने आगे कहा कि वह सरदार अमरसिंह और लाला मणीराम के साथ साढ़े ग्यारह बजे दाह-स्थान देखने गया था। चिता-स्थान किरोसिन तेल से भीगा हुआ था। वहाँ चीड़ की लकड़ियों के कोयले पड़े हुए थे, जिससे पता चला, कि लाशों के जलाने में चीड़ की लकड़ी का व्यवहार किया गया है।

अन्य प्रश्नों का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि सिक्ख-धर्म के अनुसार अन्तिम संस्कार के लिये एक घण्टे की आवश्यकता है। संस्कार खतम हो जाने के बाद चिता में आग लगाई जाती है। गवाह ने कहा कि उसकी राय में मृतकों का अन्तिम संस्कार उचित रीति से नहीं किया गया, क्योंकि न तो ग्रन्थी को उसके लिए समय ही दिया गया, और न वह अन्तिम संस्कार के लिए तैयार ही होकर आया था। इसके अतिरिक्त 'कढ़ाहप्रसाद' भी, जो इस संस्कार के लिए अत्यावश्यक है, तैयार नहीं कराया गया था। ग्रन्थी ने गवाह से कहा था, कि उससे कोई संस्कार नहीं कराया गया था।

सिक्ख-धर्मानुसार लाश को रात में जलाना मना है। इससे पहले ऐसी कोई घटना नहीं हुई थी, कम से कम गवाह ऐसी किसी घटना के विषय में नहीं जानता है।

डॉ० सत्यपाल के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि किसी सिक्ख की लाश को, मृतक के किसी सम्बन्धी या पुरोहित को छोड़कर और कोई नहीं छू सकता। उसकी लाश को हर एक मनुष्य नहीं छू सकता है। ग्रन्थी ने उससे कहा था कि वे पुलिस कॉन्स्टेबल, जिन्होंने मृतकों को स्नान कराया

भिन्न धर्मावलम्बी थे। ग्रन्थी ने यह भी कहा, कि अन्तिम संस्कार के सम्बन्ध में उससे कोई बात नहीं पूछी गई थी।

लाला मणीराम जैन ने अपना बयान देते समय डॉ० सत्यपाल के पूछने पर कहा कि तीन लाशों को अच्छी तरह जलाने के लिए ५० मन लकड़ी की आवश्यकता है। हिन्दू-धर्म के अनुसार भी, मृतक के शरीर को उसके सम्बन्धी और पुरोहित के सिवा दूसरा कोई नहीं छू सकता और रात के समय लाश नहीं जलाई जा सकती। लाश जलाने के चौथे दिन भस्म इकट्ठी की जाती है और वह हरद्वार भेजी जाती है।

मिट्टी के तेल के सम्बन्ध में

कसूर की म्युनिसिपल कमिटी के वायसप्रेसीडेंट डॉ० बोधराज ने कहा, कि वे 'ट्रिब्यून' के स्थानीय सम्वाददाता हैं। उन्होंने सरकारी और गैर-सरकारी दोनों जरिए से जाँच की है। आचार्य और ग्रन्थी के पास भी वे पता लगाने के लिए गए थे। ग्रन्थी ने यह स्वीकार किया है कि लाशों के जलाने में मिट्टी का तेल काम में लाया गया है। गवाह ने तेल के ठेकेदार से भी इस बात की जाँच की थी। उसने यह बात स्वीकार की थी, कि पुलिस वाले उसके यहाँ से ४ टिन मिट्टी का तेल ले गये थे; किन्तु २४ वीं तारीख को तेल लौटा दिया गया। इसके बाद सरदार नत्थासिंह कमिटी के सामने पेश किये गए।

सभापति ने सूचित किया कि उन्हें पता चला है कि पुलिस ने ग्रन्थी को बुला भेजा है। उन्होंने ग्रन्थी से पूछा कि वह अपना बयान देने के लिए तैयार है या नहीं। ग्रन्थी अपने मित्रों से इस सम्बन्ध में सलाह करने के लिए बाहर चला गया। और कुछ मिनटों के पश्चात् लौट कर उसने कमिटी से कहा कि वह अपना बयान देने के लिए तैयार नहीं है।

सभापति ने पूछा—अपना बयान देने में आपको किस बात का डर है ?

ग्रन्थी—मैं इस समय कुछ नहीं कह सकता । मुझे इस पर सोच-विचार करने के लिए १५ मिनट का समय दीजिए ।

गवाह को समय दिया गया । उसने फिर बाहर जाकर अपने मित्रों से सलाह ली । किन्तु एक घण्टा बीत जाने पर भी वह नहीं लौटा ।

परिशिष्ट सारिणी

गत एक शताब्दी के हुतात्माओं की सूची

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
सन् १८५७ का गदर	तांत्या टोपे, भांसी की रानी,	फांसी	१	
		सम्मुख युद्ध में मारी गई ।	१	
	बहादुरशाह के चार बेटे ।	हडसन ने कत्ल किए ।	४	
	मुगल परिवार तथा नगर के प्रमुख जन	दिल्ली के फव्वारे पर फांसी चढ़ाए गए ।	१७५	
	दिल्ली, मेरठ, लखनऊ, कानपुर, में	सम्मुख युद्ध में हत	३५००	
	कानपुर में	तोप से उड़ा दिए गए ।	६५	
	मेरठ में	गोली से उड़ा दिये गये ।	४०	

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
कूका विद्रोह १८७२	विद्रोह के अपराध में युद्ध करते हुए ६८ नामधारी गिरफ्तार किये गये ।	<p>लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर कावन ने ४६ को अगले दिन तोप से उड़वा दिया ।</p> <p>पचासवां तेरह वर्ष का बालक था उसने कावन की दाढ़ी खींच ली थी उसे तलवार से टुकड़े २ कर दिया गया ।</p> <p>शेष १८ व्यक्ति दूसरे दिन मलौध में फांसी पर लटका दिये गये ।</p>	६८	
सन १८६७ २२ जून	चापेकर बंधुओं ने गवर्नमेंट हाऊस में उत्सव के समय प्लेग कमिश्नर रेंड और लेफ्टिनेन्ट आयर्स्ट को गोली मार दी । चापेकर बन्धु वहीं गिरफ्तार हुए । तीसरे भाई ने	तीनों को फांसी दे दी गई ।		३८५४

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१८६६ फरवरी	भरी अदालत में मुखविर को गोली मार दी वासुदेव राव रानडे ने चापेकर बन्धुओं के दो मुखविरों को जान से मार डाला। उस मामले में तीन और व्यक्ति फंस गए।	चारों को फांसी दी गई।	३	
१९०८ ३० अप्रैल	खुदीराम बोस और प्रफुल्लचाकी ने जिला जज किंग्स फोर्ड के धोखे में एक अभेज्ञ वकील की गाड़ी पर बम प्रहार किया, जिससे वकील की पत्नी और पुत्री जो उसमें बैठी थी मर गईं।	दोनों अभियुक्तों को ११ अगस्त १९०८ को फांसी दी गई।	४	
१९०८ ३१ अगस्त	सत्येन्द्र कुमार वसु और कन्हार्लाल दत्त ने अलीपुर बम केस के मुखविर नरेन्द्र गोस्वामी को जेल में मार डाला।	दोनों को १० नवम्बर १९०८ को फांसी दी गई।	२	
			२	३८६५

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	बोग
१८ मई	अलीपुर षड्यन्त्र केस ३६ व्यक्तियों पर चला ।	अशोक नन्दी जेल यन्त्रणा से मर गया । उल्लासकर ' काले पानी में पागल हो गया ।	२	
१६०६ १ जुलाई	मदन लाल धींगड़ा ने लण्डन में कर्जन वायली को गोली मार दी ।	१६ अगस्त १६०६ को फांसी दी गई ।	१	
२१ दिस- म्बर	अनन्त कान्हेरे ने नासिक के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट श्री जैक्सन को गोली से मार दिया ।	इसे और इस के तीन सहायक चित्पा वनब्राह्मणों को फांसी दी गई ।	४	
१० फरवरी	अज्ञात नाम व्यक्ति ने पब्लिक प्रासी-क्यूटर आशुतोष विश्वास को गोली मार दी । अभियुक्त घटना स्थल पर पकड़ा गया ।	इसे फांसी दे दी गई ।	१	
१६१३ २७ मार्च	अज्ञात नाम व्यक्ति सिलहट के मजि-	आतंकवादी बम फटने से मर गया		३८७३

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६१४ मार्च	स्ट्रेट गार्डन की हत्या के लिए बम लेकर उनके बंगले में घुस रहा था कि बम फट गया । १८ अभियुक्तों पर दिल्ली षड्यन्त्र केस चला । जिन में चार को मुकदमा प्रमाणित न होने पर भी फांसी दी गई, जो प्रीवीकौंसिल में भी बहाल रही ।	अवध विहारी, मास्टर अमीरचन्द, मास्टर भाई बालमुकुन्द, और बसंत कुमार विश्वास, को फांसी दी गई ।	१ ४	
१६२३ २० मार्च	नीमज के महन्त की हत्या की गई । एक नौकर भी मारा गया । इस अपराध में मोतीचन्द, माणिक चन्द, जयचन्द और जोरावरसिंह पर केस चला ।	भाई बालमुकुन्द की पत्नी ने अन्न जल त्याग दिया और जिस दिन उसे फांसी हुई, उस ने भी प्राण त्याग दिए । माणिकचन्द को फांसी हुई ।	१ १	
			१	३८८●

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१९१४, २६ सितम्बर	बज बज गोली- काण्ड हुआ। कैनेडा में सिख गुरुद्वारे में हत्या हुई। हत्यारा सरकारी गुर्गा था, अतः बरी कर दिया गया।	जिसमें १८ सिख मारे गए। भाई भागसिंह पर बेलासिंह ने गोली चलाई। उन्हें बचाने में भाई वनतासिंह ने सात गोलियां खाई।	१८	
१९१५	कैनेडा में भाई मेवासिंह ने इमी- ग्रेशन विभाग के अध्यक्ष हॉपकिंसन को गोली मार कर आत्म समर्पण किया।	इन्हें फांसी दी गई।	२	
१९१४, २६ अक्टूबर	तोसामारू जहाज १७३ भारतीय यात्रियों को लाया।	इन में से छः व्यक्तियों को फांसी पर लटका दिया गया।	१	
१९१६ ८ मार्च	गंधासिंह अम- रीका की गदर पार्टी के नेता थे। इन्होंने एक थाने- दार को गोली मार दी। साथ में एक जियारतदार भी मारा गया।	पं० काशीराम आदि सात आद- मियों को फांसी पर लटका दिया। बाद में गंधासिंह को फांसी दी गई।	६	
			१०	३८८६

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
	आप भाग गए, पर जंगल में पुलिस से मुठभेड़ हुई। २ साथी मारे गए, ७ पकड़े गए।		१०	
१६१५	हवलदार लछ- मनसिंह और उन के एक मुसलमान साथी ने सेना में विद्रोह की चेष्टा की।	दोनों को फांसी दी गई।	२	
"	मेरठ सेना में विद्रोह फैलाने के अपराध में कोर्ट माशौल हुआ।	११ सैनिकों को फांसी दी गई।	११	
१६१६, १४ सित- म्बर	लाहौर षड़यंत्र प्रथम केस ६१ व्यक्तियों पर चला। २४ व्यक्तियों को फांसी का दण्ड हुआ। भानसिंह इसी केस के अभियुक्त थे। उन्हें कालापानी हुआ। ऊधमसिंह भाग कर काबुल से गए थे, वहां पहुँच भारत लौटे।	परन्तु अपील में सात आदमियों की फांसी बहाल रही। करतारसिंह २ पिंगले ३ जगतसिंह ४ हरनामसिंह आदि। वहां वह इतने पीटे गए कि उनकी मृत्यु हो गई। राह में किसी ने उन्हें गोली मार दी।	७ १ १	३६२१

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६१७ २७ मार्च	लाहौर षड्- यन्त्र द्वितीय केस में ७४ व्यक्तियों पर केस चला । ६ व्यक्तियों को फांसी की सजा मिली । लाहौर तृतीय षड्यन्त्र केस १२ व्यक्तियों पर चला- या गया ४ व्यक्तियों को फांसी दी गई ।	१. डा० मथुरासिंह २. बलवन्तसिंह ३. बन्तासिंह ४. वीरसिंह ५. रंगासिंह ६. एक और १. उत्तमसिंह २. डा० अरूढ़सिंह ३. केहरसिंह ४. जीवनसिंह	६	
१६१५ २५ अप्रैल	होशियारपुर जिले में जैलदार चन्दासिंह की दो प्रवासी सिखों ने हत्या की ।	दोनों को फांसी दे दी गई ।	४	
४ जून	सरदार बहा- दुर अछरसिंह नामक राजभक्त को दो प्रवासी सिखों ने गोली मार दी ।	दोनों को फांसी दे दी गई ।	२	
१२ जून	अमृतसर जिले में एक रेलवे पुल की सैनिक चौकी के १५ सैनिकों पर		२	
				३६३५

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१२ जून	७-८ व्यक्तियों ने अक्रमण किया, एक संतरी और एक नानकसिंह आफ़ीसर मारा गया	६ व्यक्तियों को फांसी दे दी गई	६	
६ सितम्बर	विलववादी कैदियों को छुड़ाने की चेष्टा करने पर यतीन्द्र मुकर्जी	५ व्यक्तियों को फांसी दी गई	५	
१६१६, २७ जनवरी	भोलानाथ, जर्मन भारत षड्यन्त्र केस में गिरफ्तार किये गये	आपने सम्मुख युद्ध में पुलिस संघर्ष में प्राण त्यागे। साथ में पांच अन्य साथियों ने भी—	६	
२१ फ़रवरी १६१५	सिगापुर सैनिक विलव	पूना जेल में आत्मघात कर लिया	१	
		इसे दबाने को अंगरेजों ने रूस, जापान से सहायता मांगी। रूस, जापान और अंग्रेजों के लड़ाकू जहाजों ने एक सप्ताह युद्ध के बाद इन्हें परास्त किया। बहुतसे युद्ध में मारे गये बहुत से बाद को गोली से उड़ा दिये गये		
			४००	४३५६

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६१५ अगस्त	बर्मा विद्रोह । सिंगापुर विद्रोह के कुछ नेता बर्मा बच कर भाग आए और बर्मा स्याम सीमा पर जर्मन की सहायता से विसव आयोजन करने लगे । सोहनलाल पाठक और नारा- यणसिंह प्रमुख थे । हरनाम सिंह माण्डले विद्रोह के नेता थे ।	दोनों को फाँसी दी गई		५८४
		इन्हें फाँसी दी गई	२	
			१	
१६१४	भाई रामसिंह अमेरिका गदर पार्टी के मुखिया थे । इन्होंने भरी अदालत में अपने विमुख साथी राम- चन्द्र को गोली मार दी । एक कोतवाल रामसिंह को भी वहीं गोली मार दी ।	इन्हें फाँसी दी गई		
			१	४३६०

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१९१८ १५ जून	प्रसिद्ध विलंबी नेता नालिनी बाकची ने पुलिस के साथ सम्मुख युद्ध में आठ साथियों सहित ।	प्राण त्यागा	८	
१९१९ अप्रैल	जलियान वाला बाग में ओडायर ने गोलियों से लगभग ४०० आदमियों को भून डाला ।	४०० मनुष्य सभा करते हुए निहत्थे गोली के शिकार हुए ।	४००	
"	गैदालाल दीक्षित के दल के ८२ मनुष्यों को ग्वालियर के जंगल में, जब वे एक डाके की योजना में थे, सेना ने घेर लिया सम्मुख युद्ध हुआ ।	जिसमें ३५ आदमी खेत रहे ।	३५	
१९२० २१ दिसम्बर	गैदालाल दीक्षित दिल्ली अस्पताल में फरार की हालत में रोगी रह कर मरे ।	दिल्ली अस्पताल में प्राण त्यागे ।	१	४४८०

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६२३ ३ अगस्त	शंकारी टोल (कलकत्ता) के पोस्ट आफिस को लूटने की चेष्टा में पोस्टमास्टर को गोली मार दी गई। इस सम्बन्ध में वरेन्द्र पकड़ा गया।	वरेन्द्र को फांसी दे दी गई।		
१६२४ १२ जनवरी	कलकत्ते के पुलिस कमिश्नर टेगर्ड को मारने जाकर भूल से एक अन्य अफसर डे को गोपीनाथ साहा ने गोली से मार डाला और वहीं गिरफ्तार हो गया।	गोपीनाथ साहा को फांसी दे दी गई।	१	
१६२३ १ सितम्बर	बब्बर अकाली आन्दोलन के सूत्र-धार किशन सिंह गड़गज के नेतृत्व में कुछ हत्यायें हुई, बाद में कपूर-थले के चौथा साहेब के गुरद्वारे में घिर कर पुलिस से युद्ध हुआ।	इस में चार अकाली वीर १—उदयसिंह २—महेन्द्रसिंह ३—विशानसिंह ४—कर्मसिंह हाथोंहाथ युद्ध में खेत रहे।	१ ४	

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
२५ अक्टूबर	धन्नासिंह अ- काली एक विश्वास घातक के कारण होशियारपुर के एक गांव में घिर गये और गिरफ्तार हो गये।	गिरफ्तार होने पर इन्होंने बम चलाया, जिससे स्वयं तथा ५ पुलिस वाले वहीं ठौर हो गये। उन में एक हार्टन पुलिस सुप- रिटेंडेंट भी था।	१	
१६२३, १२ दिसम्बर मुण्डेर युद्ध	बन्तासिंह धा- मिया, ज्वालासिंह, वर्यामसिंह ने जालंधर के निकट चुरासी गांव में एक विश्वासघाती के घर में घिर कर पुलिस दल से भारी लोहा लिया, बन्ता- सिंह उसी स्थान पर मारे गये। वर्यामसिंह अपने मामा के घर आ कर उसके विश्वास- घात से पुलिस से घिर कर सम्मुख युद्ध में मारे गये।	तीनों ने सम्मुख युद्ध में प्राण दिये।	३	४८१४

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६२५ २८ फरवरी बम्बर अका ली केस	इस मुकदमें में ६१ अभियुक्त सेशन मुपुर्द किये गये	३ बीच ही में मर गये । ६ को फांसी दी गई । १ धर्मसिंह २ किशनसिंह ३ सन्तासिंह ४ नंद- सिंह ५ दलीपसिंह ६ कर्मसिंह । इन्हें लाहौर सेन्ट्रल जेल में २७ फरवरी १६२६ को होली के दिन फांसी दी गई ।		
१६२४	श्रीराम राजू गोदावरी जिले का निवासी था । उसने सशस्त्र विद्रोह की तैयारी की थी । पुलिस के साथ अनेक संघर्ष हुए । एक बार दो अंग्रेज मारे गये, एक सेना- दल से सम्मुख युद्ध में वह मारा गया ।	संदेह भी है कि वह बच निकला ।	६	
१६२८ दक्षिणेश्वर बम केस	कुछ अभियुक्तों ने रायबहादुर भूपेन्द्र नाथ चटर्जी नामक		१	
				४८२४

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
	पुलिस अफसर को अलीपुर जेल में जब वह उन्हें प्रलोभन दे रहा था मसहरी के डंडों से मार डाला ।	इसमें से हरिमित्र, प्रमोद चौधरी दो को फांसी हुई ।	२	
काकोरी डकैती केस १९२५ ६ अगस्त	४० व्यक्ति पकड़े गये । २१ व्यक्तियों पर मुकदमा चला । सरकार ने २५० गवाह पेश किये ।	४ को फांसी दी गई १ राम प्रसाद विस्मिल २ राजेन्द्र लाहड़ी ३ रोशन सिंह ४ अशफाकुल्ला	४	
१९२८ १० फरवरी सैंडर्स मर्डर केस	लाहौर मोजंग हाउस में पुलिस सुपरिन्टेंडेंट स्काट के धोके में सैंडर्स की हत्या के अपराध में भगतसिंह, शिवराम राजगुरु और सुखदेव को फांसी का दण्ड मिला ।	चारों को फांसी		
१९३० २८ मई	भगवती चरण एक बम की परीक्षा करते बम विस्फोट से लाहौर में ।	रावी तट पर हत हुए ।	४	
			१	४८३५

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६३१ शालामार बम काण्ड ३ मई	सुखदेवराज और जगदीश लाहौर षड्यन्त्र केस के फरार अ- भियुक्त थे, पुलिस ने इन्हें घेर लिया । सम्मुख युद्ध में	जगदीश मारे गए	१	
१६३३ १३ अगस्त दूसरा लाहौर षड्य- न्त्र केस	५० अभियुक्त थे । जिनमें तीन को फांसी दी गई	१ अम्बिकासिंह २ गुलाबसिंह ३ जहांगीर लाल ।	३	
१६३१ २७ फरवरी	इलाहाबाद के अलफ्रेड पार्क में पुलिस से सम्मुख युद्ध में चन्द्रशेखर आजाद मारे गये ।	आजाद ने अद्भुत वीरत्व का प्रदर्शन कर प्राण दिये	१	
१६३०	भिन्न २ अव- सरों पर १७ आतं- कवादी पुलिस द्वारा मुकाबिले में मारे गये । दो ने आत्म- घात कर लिया ।	१६ खेत रहे ।	१६	४८५६

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१९३० २ दिस- म्बर	शालीग्राम शुक्ल पुलिस से सम्मुख युद्ध में गोली से मारे गये ।	सम्मुख युद्ध में गोली से हत हुए ।	१	
१९३० अब्दुल- गनी	दशहरे पर १९२८ में लाहौर में बम फेंका गया था, उस में अब्दुलगनी पर मुकदमा चला ।	उसे फांसी दी गई	१	
२६ जनवरी १९३१	हरिकृष्ण ने एक उत्सव के समय गवर्नर पर पिस्तौल से आक्रमण किया कई व्यक्ति घायल हुए । गवर्नर के दो गोली लगीं ।	हरिकृष्ण को फांसी दी गई	१	
१८ अप्रैल चटगांव शस्त्रागार काण्ड	इसमें ५० से अधिक अभियुक्त थे ।	हिमांशुसेन गार्ड रूम में आग दे देते समय झूलस कर मर गया । पुलिस से सम्मुख युद्ध में १६ युवक खेत रहे । २२ अप्रैल को फिर पुलिस के साथ सम्मुख युद्ध		४८६२

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
		<p>में १२ आदमी मारे गये ।</p> <p>एक ने आत्म-हत्या करली ।</p> <p>६ मई को फिर सम्मुख युद्ध में ६ युवक खेत रहे ।</p> <p>२ सितम्बर को पुलिस से घायल हो कर भागता हुआ एक युवक तालाब में डूब कर मर गया ।</p>		
१६३१	चांदपुर के पुलिस	फांसी दी गई ।	४०	
४ अगस्त	इन्सपैक्टर को गोली मार देने के अपराध में रामकृष्ण विश्वास को		१	
× १६३०	जेल इन्सपैक्टर	एक गिरफ्तार		
८ दिसम्बर	जनरल सिम्पसन को तीन युवकों ने उनके दफ्तर में दिन-दहाड़े मार डाला ।	<p>होते-होते आत्म-घात से मर गया ।</p> <p>दूसरा अस्पताल में मरा ।</p> <p>तीसरे को फांसी दे दी गई ।</p>	३	४६०६

× सन् १६२६-३० में ५१ व्यक्ति केवल बंगाल में फांसी पर चढ़े ।

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६३१, १३ जनवरी	लाहौर में सज्जन सिंह ने कार्टिस की स्त्री और दो बच्चों को तलवार के घाट उतार दिया ।	७ फरवरी को सज्जनसिंह को फाँसी दे दी गई	१	
१७ फरवरी	मुहम्मद हबीब ने पैशावर के असि- स्टेंट कमिश्नर वानर्स को गोली मारी ।	उसे उसी दिन फाँसी दे दी गई ।	१	
१८ जून	रामदेवी सिंह को हाजीपुर ट्रेन डकेती के सिलसिले	में फाँसी दी गई	१	
२७ जुलाई	अलीपुर के सेशन जज को एक व्यक्तिने अदा- लत में गोली से मार डाला ।	वह घटना स्थल पर ही पुलिस की गोली से मारा गया ।	१	
१६ सितम्बर हिजली गोली- काण्ड	हुगली जेल में संतोष कुमार और तारकेश्वर हिजली गोली काण्ड में पुलिस की गोली के शिकार हुए	गोली से मारे गये ।	२	४६१६

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्य	योग
१९३२	फणिघोष की	फाँसी दी गई		
११ मार्च	हत्या स में वैकुण्ठ शुक्ल को मिदनापुर के जिला मजिस्ट्रेट को गोली मार देने के अपराध पर पुनीत कुमार गिर- फ्तार हुआ	उसे फाँसी दी गई	१	
१३ जून	चटगाँव के पु० कैप्टन कैमैसन ने दल बल सहित जलघाट में एक क्रान्तिकारी दल को घेर लिया सम्मुख युद्ध में निर्मल चन्द्रसेन और अकर्षसेन मारे गये ।	सम्मुख युद्ध में २ मारे गये	१	
८ नवम्बर	ढाका के डिप्टी मजिस्ट्रेट की हत्या के जुर्म में कालिपद मुकर्जी पकड़े गये ।	उन्हें फाँसी दी गई	२	
५ अगस्त	स्टेट्समैन के सम्पादक पर गोली	आत्मघात	१	

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
२४ सितम्बर चटगाँव यूरोपियन क्लब पर आक्रमण	सं आक्रमण करने के बाद अतुल कुमार सेन विष खाकर घटना स्थल पर ही मर गया इस में आक्र- मण स्थल प्रीति बहादेर बी० ए०	गोलो का शि हुए	१	
२८ सितम्बर	स्टेट्स मैन के सम्पादक पर फिर आक्रमण करने के समय दो आक्रमण- कारी विष खाकर मर गये ।	आत्मघात	१	
बर्मा विलव	इस विलव में लगभग १० हजार व्यक्तियों ने भाग लिया ।	२ हजार विलवी सेना से युद्ध करते मारे गये । १५ व्य- क्तियों को फाँसी पर लटका दिया गया ।	२	
			२०१५६३६	

तारीख	नाम और विवरण	दण्ड	संख्या	योग
१६३२	दिल्ली स्टेशन	चार को फाँसी		
२८	डाक लूट केस में	दी गई।		
अक्टूबर	१५ व्यक्तियों पर मुकदमा चला।		४	
१६३३	बंगाल में डाका	२ व्यक्ति घटना		
१६ मई	ढालने के अपराध में मुकदमा चला।	स्थल पर मरे। २ को फाँसी दी गई।	४	
२	मिदनापुर के जिला मजिस्ट्रेट वर्ज को गोली मार दी।	एक आक्रमण-कारी घटना स्थल पर हीमर गया। दूसरा स्पताल में जाकर मर गया। दूसरेको फाँसी दी गई।	४	
६ मार्च	अमृतसर के पुलिस सुपरिन्टे-डेंट क्राफोर्ड को किसी ने गोली मार दी।			
१५ जून	फरीदपुर जिले के एक थानेदार का सिर काट लेने के अपराध में।	एक व्यक्ति को फाँसी दी गई।		
			१	६६५०

लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, पुस्तकालय
Lal Bahadur Shastri National Academy of Administration Library

मसूरी
MUSSOORIE

अव्राप्ति सं०

Acc. No.....

कृपया इस पुस्तक को निम्न लिखित दिनांक या उससे पहले वापस कर दें।

Please return this book on or before the date last stamped below.

[illegible]

H

320.54
हमारे

जे0डी0

अवधि सं. ~~1246~~

ACC No.....

वर्ग सं.

पुस्तक सं.

Class No..... Book No.....

लेखक

Author.....

शीर्षक हमारे लाल दिन ।

Title.....

320.54
हमारे

~~1246~~

LIBRARY

LAL BAHADUR SHASTRI

National Academy of Administration
MUSSOORIE

Accession No. 121825

1. Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
2. An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
3. Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
4. Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
5. Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving